॥ श्रीः ॥

स्वास्थ्य रक्षा

उर्फ़

तन्दुरुस्ती का बीमा

चरक, सुश्रुत, वाग्भट, भावप्रकाश आदि आयुर्वेद ग्रन्थों और कतिपय डाक्टरी और यूनानी चिकित्सा ग्रन्थों के अवलम्बन से बनाया गया।
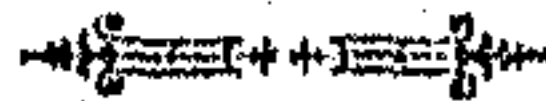
लेखक

पण्डित हरिदास वैद्य।

प्रथम-संस्करण।

कलकत्ता,

सन् १९०८ ई०।

PRICE PER COPY 1/8. { मूल्य प्रतिपुस्तक १॥)

भूमिका।

प्राचीन काल के भारतवासी पद पद पर आयुर्वेदीय नियमों का ध्यान रखतेथे और उनके अनुसार चलतेथे। इसी से वह लोग बलवान, वीर्यवान और दीर्घायु होतेथे। इस ज़माने के अधिकांश लोग यह भी नहीं जानते, कि आयुर्वेद किस बला का नाम है। बस इसी कारण से आज कल के बहुत से मनुष्य सदा मन मलीन और तन क्षीण बने रहते हैं। उठती जवानी के पट्ठों को प्रमेह आदि दुष्ट रोग अपना शिकार बनाते और, असमय में ही, उन्हें यमसदन की यात्रा को मजबूर करते हैं।

आयुर्वेद ग्रन्थ संस्कृत भाषा में हैं और आज काल संस्कृत का पठन पाठन प्रायः लुप्त सा होगया है। आयुर्वेद ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद हो तो गया है; किन्तु थोड़े पढ़े लिखे लोग उस अनुवाद के भी समझने की शक्ति नहीं रखते। एक तो आयुर्वेद ऐसे ही कठिन है और जो उसके अनुवाद हुए हैं वह भी कम कठिन नहीं हैं; क्योंकि उन में संस्कृत का पाण्डित्य दिखाया गया है। इस लिये थोड़ी सी हिन्दी जानने वाले और संस्कृत से कोरे लोग उन्हें बिलकुल नहीं समझते। "स्वास्थ्य" विषय पर कई सज्जनों की हिन्दी में लिखी हुई पोथियाँ मेरी नज़र से गुज़रीं। उनमें से कितनी तो अधूरी हैं और कितनी ग़लतियों से लबालब भरी हैं। ऐसी पुस्तक कोई न देखी जिस एक पुस्तक के देखने से सर्व-साधारण स्वास्थ्यरक्षा सम्बन्धी नियमों से भली भाँति जानकार होजावें और उसे रुचि से पढ़ें।

इसी अभाव के दूर करने को मैंने यह पुस्तक लिखी है।

इसके तैयार करने में चरक, सुश्रुत, वाग्भट, हारीत, भावप्रकाश, शारङ्गधर आदि आयुर्वेद ग्रन्थों और कतिपय यूनानी और अँगरेज़ी चिकित्सा ग्रन्थों से सहायता लीगयी है। सब ही जानते हैं, कि आयुर्वेद कैसा कठिन है, परन्तु साधारण पढ़े लिखे लोगों के लाभार्थ इस की भाषा बहुत ही सीधी साधी रक्खी गयी है। जहाँ तक हो सका इसकी कठिनता दूर करने में मैंने खूब ही कोशिश की है। आशा है, कि थोड़े पढ़े लिखे लोग इसे भली भाँति समझ सकेंगे।

इस किताब के तैयार करने में भरसक सावधानी से काम लिया गया है; लेकिन थोड़ी बहुत भूलें मनुष्य मात्र से हो ही जाती हैं। जिस में, मैं न तो हिन्दी का सुलेखक हूँ और न लेखक ही हूँ और यह मेरा प्रथम साहस है, फिर मुझसे ग़लती होना क्या आश्चर्य है। यदि प्रमाद-वश या मेरी अल्पज्ञता के कारण कुछ भूल चूक या त्रुटियाँ रह गई हों, तो उदार-हृदय पाठक मुझे क्षमा करें और उन भूलों से मुझे सूचित कर दें। इस कृपाके लिये मैं उनका चिर कृतज्ञ रहूँगा और दूसरी आवृत्ति में, हठ त्याग कर, यथार्थ भूलों को सुधार दूँगा। यदि हिन्दी-प्रेमी पाठक इस पुस्तक को कुछ भी लाभदायक समझेंगे, तो मैं अपने परिश्रम और धन-व्ययको सार्थक समझूँगा और उत्साह बढ़ने से कुछ दिनों बाद "चिकित्साचन्द्रोदय" नामक अपूर्व ग्रन्थ, सरल हिन्दी में, लेकर उनकी सेवामें उपस्थित हूँगा।

एक बात और है, कि इस पुस्तक के तैयार करने में मेरे परम मित्र बाबू हरिदासजी भार्गव, मुन्शी रामप्रतापजी और मुन्शी बद्रीप्रसादजीने मुझे प्रेस सम्बन्धी कामों में बहुत कुछ सहायता दी है, अतएव उक्त तीनों महाशयों को मैं हार्दिक धन्यवाद देताहूँ।

कलकत्ता,
२७-८-०८

हरिदास वैद्य।

प्रथम भाग ।

दूसरा भाग ।

तीसरा भाग ।

चौथाभाग ।

पाँचवाँ भाग ।

॥ श्रीः ॥

स्वास्थ्यरक्षा।

उर्फ़

तन्दुरुस्ती का बीमा

प्रथम भाग।

एकदन्तं महाकायं लम्बोदरगजाननम्।
विघ्ननाशकरं देवं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्॥
शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीम्
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम्।
हस्तेस्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्॥

प्रातःकाल उठना।

सुश्रुताचार्य्य लिखते हैं कि "जिस मनुष्यके वात आदि दोष, अग्नि, धातु और मल समान हों—जो मनुष्य अपने शरीरके अनुसार क्रिया करता हो—जिसका शरीर, इन्द्रियाँ और मन प्रसन्न हों वही मनुष्य स्वस्थ अथवा आरोग्य कहा जाता है।" संसार में निरोग रहने के बराबर कोई सुख नहीं है। किसी अच्छे विद्वान ने कहा

है कि "धर्मार्थकाममोक्षाणां आरोग्यं मूलकारणम्।" अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारों पदार्थों की जड़ आरोग्यता है। जो लोग धर्मपरायण हैं वे भी शरीर ही को धर्म आदि का मुख्य साधन समझते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि बिना आरोग्यता के इस लोक और परलोक का कोई काम नहीं हो सकता। शरीर अस्वस्थ रहने से किसी काम में दिल नहीं लगता; विषय-वासना व्यर्थ हो जाती हैं; रोगी को कुछ अच्छा नहीं लगता। धन, पुत्र, स्त्री, आदि जितने सुख हैं उनमें आरोग्यताही प्रधान सुख है; क्योंकि उस एक के बिना सब सुख फीके और निकम्मे जान पड़ते हैं। इसी विचार से मुसलमान हकीम भी कह गये हैं कि "एक तन्दुरुस्ती हज़ार न्यामत है।" कौन ऐसा मूर्ख होगा जो सब सुखों की मूल आरोग्यता की रक्षा करना न चाहेगा?

पाठकगण! यदि आप आरोग्यता चाहते हैं, यदि आप सदा सर्वदा स्वस्थ रह कर सुखसे जीवन काटना चाहते हैं, यदि आप संसारमें दीर्घजीवी होकर स्वार्थपरमार्थ साधन करना चाहते हैं, यदि आप अकाल मृत्युसे बचना चाहते हैं, तो आप हमेशा सूर्योदय से चार घड़ी पहले अपने बिस्तरोंको छोड़ देनेकी आदत डालिये। श्रुति स्मृति नीति और पुराण जहाँ देखते हैं वहाँ ही सूरज निकलने से पहले सोकर उठना लाभदायक लिखा है। वैद्यक ग्रन्थोंमें भी बड़े सवेरे उठनाही परम लाभदायक लिखा है। भावप्रकाश—पूर्वखण्ड के चौथे प्रकरण में लिखा है:—

ब्राह्मे मुहूर्तेबुध्येत स्वस्थो रक्षार्थमायुषः।
तत्र दुःखस्य शान्त्यर्थं स्मरेद्धिमधुसूदनम्॥

इस श्लोकका भावार्थ यह है कि "स्वस्थ अर्थात् निरोग मनुष्य अपनी ज़िन्दगी की रक्षा के लिये चारघड़ी के तड़के उठे और उस समय दुःख नाश होने के लिये भगवान का भजन करे।" हिन्दी,

उर्दू, अंगरेज़ी की अनेक पुस्तकोंमें अच्छे अच्छे विद्वानोंने लिखा है कि जो लोग रातको ९।१० बजे उचित समय पर सोकर सवेरे सूरज उदय होनेसे पहले अपने बिछौनोंका मोह छोड़ देते हैं उनका शरीर सदा आरोग्य रहता है। उनकी विद्या-बुद्धि बढ़ती है। सूर्योदयसे कुछ पहले के समय को अमृतवेला कहते हैं। उस समय की हवा बहुत ही सुहावनी और तन्दुरुस्ती के हक़ में अमृत समान होती है। उस हवासे लाल खूनकी तेज़ी बढ़ती है। शरीर में तेज और बलका सञ्चार होता है। काम करने में उत्साह होता है। बदन में एक प्रकार की फुर्ती आजाती है। सवेरे ही जो काम उठाया जाता है वह बहुत अच्छी तरह पूरा होता है। कठिन से कठिन विषय उस समय सरलता से समझ में आजाते हैं। विद्यार्थियों को सवेरे सबक़ बहुत जल्दी याद होता है और मुद्दत तक याद रहता है। अंगरेज़ी में भी एक कहावत प्रसिद्ध है:—Early to bed and early to rise makes a man healthy wealthy and wise. इसका भी भावार्थ यही है कि, "थोड़ी रात गये सोने और थोड़ी रात रहे जागने से आदमी तन्दुरुस्त, दौलतमन्द और अक़्लमन्द होजाता है।"*

दिल्लीका बादशाह अकबर भी कुछ रात रहेही पलङ्गसे उठकर अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य के विचारों और ईश्वर उपासना में लगजाता था। रामायण के बालकाण्ड में लिखा है:—

उठे लषण निशिविगत सुनि, अरुणशिखा धुनिकान।
गुरु तें पहले जगतपति, जागे राम सुजान॥

इस दोहेसे साफ मालूम होता है कि पूर्णब्रह्म परम परमेश्वर श्रीराम लक्ष्मण भी चार घड़ी रात रहेही उठ बैठते थे; क्योंकि मुर्ग़ा प्रायः चार घड़ी या कुछ रात रहते हुए ही बोलता है। हमें कुछ दिन सरकारी फ़ौजमें रहनेका काम पड़ा था। वहां हम

कितनी ही बार कई आला दरजे के फौजी अफसरों को बहुत सवेरे उठते और शौच आदिसे निपट कर घोड़ोंपर सवार होकर या पैदल ही हाथ में छड़ी लेकर खुले मैदान में हवा खाने को जाते देखा करते थे। इसीसे वह लोग सदा हृष्टपुष्ट बलिष्ट और तन्दुरुस्त रहते थे।

जितने बुद्धिमान लोग पहिले होगये हैं सब सवेरे जल्दी उठा करते थे। उन सबका उल्लेख करने से एक इसी विषय के बढ़ जाने का भय है। आरोग्यता और सुख चाहनेवाले मनुष्य को सवेरे जल्दी उठना ही आवश्यक है; क्योंकि दिन चढ़े उठने से आरोग्यता नष्ट होजाती है। मनमलीन रहता है। सुस्ती और आलस्य घेरे रहते हैं। काम काजमें दिल नहीं लगता। सूरज निकलने तक सोते रहनेको प्रसिद्ध नीतिकार चाणक्यने भी बुरा कहा है। वह कहते हैं:—

कुचैलिनं दन्तमलोपधारिणं
बह्वाशिनं निष्ठुरभाषिणं च।
सूर्योदये चास्तमिते शयानम्
विमुञ्चति श्रीर्यदिचक्रपाणिः॥

अर्थात् जो मैले कपड़े पहनता है, जो दांतोंको साफ नहीं रखता, जो बहुत खाता है, जो कड़वी बाणी बोलता है, और जो सूरज उदय होने और अस्त होनेके समय सोता रहताहै चाहे वह चक्रधारी विष्णुही क्यों न हो तो भी लक्ष्मी उसको छोड़ देती है।

पाठक! यदि आप अपना भला चाहते हैं और संसार में सुखसे आयु व्यतीत करना चाहते हैं तो ऊपर के लेख पर खूब ध्यान दीजिये और चार घड़ी के सवेरे उठने की बान डालिये। देखिये, फिर आपके रोग शोक दुःख आदि क्लेश कहां भाग जाते हैं।

शुभ दर्शन

—:○:—

आज कल सर्वसाधारण लोगोंमें आयुर्वेदका पठन पाठन न रहनेसे यद्यपि ऋषि मुनियोंकी चलाई अनेक लाभदायक चालें प्रायः लोप होती जाती हैं तथापि किसी न किसी रूपमें कुछ २ अब भी पाई जाती हैं। सवेरे उठतेही कितनेही मनुष्य पहले अपने हाथ देखते हैं; कितनेही पहले आइनेमें अपना मुँह देखकर फिर दूसरेको देखते हैं। यह सब बातें शास्त्रोक्त हैं। शास्त्रमें लिखा है कि हाथके अगले हिस्सेमें लक्ष्मीका वास है; इसवास्ते बुद्धिमान पहले अपने दहिने हाथका अग्रभाग देखे। भावप्रकाश आदि वैद्यक सम्बन्धी ग्रन्थोंमें लिखा है कि पलंग या बिछौना छोड़ने से पहले यानी आँख खुलतेही दही, घी, दर्पण, सफ़ेद सरसों, बेल, गोलोचन, फूलमाला इनका दर्शन करनेसे शुभ कार्य्यकी प्राप्ति होती है। जिन्हें अधिकजीनेकी इच्छा हो वे नित्य नित्य घी में अपना मुँह देखा करें। एक दूसरे ग्रन्थमें लिखा है कि सवेरेही नीला, सुन्दर गाय आदिका देखना भी शुभ है; लेकिन पापी, दरिद्र, अन्धा, लूला, लङ्गड़ा, काना, नकटा, नंगा कौआ, बिल्ली, गधा, बखेड़ा, और कंजूस, आदिका देखना अशुभ है। अगर ये अकस्मात नज़र भी आजाँय तो फिर आँखें बन्द कर ले।

पाठक! ऊपरकी बातोंको कपोल कल्पित मनगढ़न्त या पोपलीला मत समझना। हमारे माननीय ऋषि मुनियोंने जो कुछ लिखा है वह उनकी हज़ारों लाखों वर्षोंकी कठिन परीक्षा और अनुभवका फल है। जो कुछ वह लिख गये हैं—वह अक्षर अक्षर सच्ची और ठीक है। हमने स्वयं कितनी ही बातोंकी परीक्षाकी है और उनको ठीक पाया है। जिन्हें सन्देह हो वे कुछ दिन परीक्षा तो कर देखें।

मलमूत्र आदि विसर्जन करना।

सवेरे सोकर उठतेही अपने हाथका अगला भाग या शीशा वग़ैरः देखकर संसारके रचने, पालने और नाश करनेवाले भगवान को दस पाँच मिनट स्मरण करे और अपने कर्त्तव्य कर्मोंको विचारे। पीछे दिशा फराग़तसे निपटे यानी टट्टी जावे। चारपाईसे उठते ही टट्टीको भागना ठीक नहीं है। दस पाँच मिनट बाद जानेसे दस्त साफ़ होता है। लेकिन इस काममें निपटनेमें बहुत देर न करे; क्योंकि देर करनेसे अनेक तरहकी पीड़ा हो जाती हैं।

सुश्रुत संहिताके चिकित्सा स्थानके चोवीसवें अध्यायमें लिखा है:—

> आयुष्यमुषसि प्रोक्तं मलादीनां विसर्जनम्।
> तदंत्रकूजनाध्मानोदरगौरववारणम्॥

इस श्लोकका भावार्थ यही है कि सवेरेही मलमूत्र और वायु आदि त्यागने यानी टट्टी वग़ैरः हो आनेसे उम्र बढ़ती है; क्योंकि इससे आँतोंका गुडगुड़ाना, पेटका अफारा और भारीपन आदि दूर होते हैं। टट्टीकी हाजत रोकनेसे पेट फूल जाता है और पेटमें दर्द होने लगता है। गुदामें कतरनी यानी कैंचीसे काटनेकीसी पीड़ा होने लगती है। बुरी २ डकारें आने लगती हैं। बाज़ २ वक्त मुख- से मल निकलने लगता है और पीछे टट्टी भी साफ़ नहीं होती। अधोवायु अर्थात् वह हवा जो गुदा द्वारा निकलती है—उसके रोकनेसे दस्त और पेशाब रुकजाते हैं। पेट फूल जाता है और उसमें शूल चलने लगता है तथा इनके सिवाय वायुके और भी उपद्रव खड़े हो जाते हैं। पेशाबकी हाजत रोकनेसे पेट और लिंगमें दर्द होने लगता है तथा पेशाबमें जलन, सिरमें दर्द आदि कितनेही और रोग भी खड़े हो जाते हैं; इसवास्ते बुद्धिमान

को शरीरके वेगोंको कदापि रोकना उचित नहीं है। मलमूत्र अधोवायु आदि वेगोंके रोकनेसे सिवाय हानिके कुछ भी लाभ नहीं है। रोकनेको काम, क्रोध, मोह, शोक, भय आदि मनके वेगही बहुत हैं। अगर रोक सकें तो इनके रोकनेकी कोशिश करें; क्योंकि इनके रोकनेमें ही लाभ है। मलमूत्र आदि शारीरिक वेगोंको रोकना अक़्लमन्दी नहीं है।

आजकल धातुकी कमज़ोरी वग़ैरः कारणोंसे अनेक लोगोंको दस्त साफ़ न होनेकी शिकायत रहती है। लोग कांख कांख कर मल निकालनेकी कोशिश किया करते हैं; परन्तु यह तरीक़ा अच्छा नहीं है। इससे निर्बल धातु गर्मी पाकर पेशाबके रास्तेसे फ़ौरन निकल पड़ती है जिससे साफ़ दस्त होनेकी जगह और भी क़ब्ज़ हो जाता है।

जिन लोगोंको दस्तक़ब्ज़की शिकायत अधिक रहती है उन्हें उचित है कि चार छै दिनमें जब बहुतही क़ब्ज़ हो या पेट भारी हो कुछ हलकीसी दस्तावर दवा ले लें; किन्तु रोज़ २ दस्तावर दवा लेना भी बुरा है ; क्योंकि आदत पड़जानेसे फिर दवा बिना दस्त नहीं होता और ग्रहणी कमज़ोर हो जाती है। ऐसे लोगों के लिये हम दस्त साफ़ होनेके चन्द उपाय लिख देते हैं। कभी २ सख़्त ज़रूरतके समय इन उपायोंसे काम लेनेमें कुछ हानि नहीं है :—

दस्तावर नुसख़ा।

१ सनाय
२ हरड़
३ सौंफ़
४ सोंठ
५ सैंधानोन

हरड़ की गुठली निकाल कर बक्कल लेना चाहिये। इन पाँचों चीज़ों को तोल में बराबर २ लेकर महीन कूट पीसकर चलनी या कपड़े में छानलो। पीछे किसी बोतल या अमृतबान में मुँह बन्द करके रखदो। यह वैद्यक का सुप्रसिद्ध "पञ्चसकार चूर्ण" है। इसकी मात्रा जवान आदमी के लिये चार माशे से ६ माशेतक है। बलाबल देखकर मात्रा लेनी चाहिये। बालक और कमज़ोरों को कम मात्रा देना उचित है। रातको सोते समय इस चूर्ण की एक मात्रा फँकाकर ऊपर से कुछ गर्म जल पिला देने से सवेरे दस्त खुलासा आजाता है। यह हलकी दस्तावर दवा है। इससे कुछ डर नहीं है। ध्यान रखना चाहिये कि यह नुसख़ा गर्म मिज़ाजवालों को कभी कभी दस्त कम लाता है। यदि इस चूर्ण की एक मात्रा १ पाव जल के साथ मिट्टी के कोरे बरतन में औटायी जाय और उसमें गुलक़न्द गुलाब दो तोले तथा मुनक्का (बीज निकाल कर) १०, या १५ दाना डाल दिये जांय। जब पानी जल कर आध पाव रह जाय तब आग से उतार मल छान कर, रोगी या निरोगी को पिला दिया जाय तो अवश्य दस्त साफ़ होजाता है। हर मिज़ाजवाले को यह नुसख़ा फ़ायदेमन्द साबित हुआ है।

नोट:—गुलक़न्दगुलाब, मुरब्बे की हरड़ और शरबत गुलाब ये सब चीज़ें अत्तारों की दूकानों पर मिलती हैं मगर वह लोग इनको अच्छा नहीं बनाते। गृहस्थियों को घरमें स्वयं तैय्यार करके थोड़ा थोड़ा रखना अच्छा है। हम इनके बनानेकी सहज तरकीब आगे लिखेंगे। लेकिन अगर समय पर ये चीज़ें घरमें तय्यार न हों और ज़रूरत पड़ जाय तो किसी नामी दूकानसे लानेमें हर्ज नहीं है।

दस्तावर नुसखा

गर्म मिज़ाजवालोंको या पित्त प्रकृति कमज़ोर आदमियोंको गुलकन्द गुलाब २ तोले और मुनक्का १०।१५ दाना आध पाव गुलाबजल या खाली पानीमें घोटकर, सोते समय, पिलादेनेसे सवेरे १ दस्त खुलासा आजाता है।

दस्तावर नुसखा

एक या दो मुरब्बेको छरड़ (गुठली निकालकर) रातको खाकर ऊपरसे गुनगुना दूध पीनेसे सवेरे दस्त साफ़ हो जाता है।

दस्तावर नुसखा

गर्म मिज़ाजवालोंको १।२ या ३ तोले शरबत गुलाब चाट लेने या जलमें मिलाकर पीलेनेसे दस्त खुलासा होकर कोठा साफ़ हो जाता है।

दस्त जानेके समय आबदस्त लेनेको कमसे कम सेर डेढ़ सेर पानी लेजाना चाहिये। १ छोटीसी लुटिया लेजाना ठीक नहीं है। गुदा और लिङ्गको खूब धोना चाहिये। सुश्रुत लिखते हैं कि,— "मलमार्गोंको अच्छी तरह धोनेसे उज्वलता होती है, बल बढ़ता है तथा शरीर और मन पवित्र होता है"। बहुतसे मूर्ख कितनेही दिनों तक लिङ्ग (मूत्रेन्द्रिय) को नहीं धोते इससे लिङ्ग पर फुन्सी आदि अनेक रोग होजाते हैं।

टट्टीसे आकर मिट्टीसे हाथ पांव खूब धोने चाहिये। हाथ पैर मलकर धोनेसे शुद्धि होती है, मैल उतर जाता है और थकाई नाश होजाती है। हाथ पैर धोना पुरुषार्थ बढ़ानेवाला और आंखों के लिये हितकारी है। मुंह धोने और आंखोंमें शीतल जल के छींटे मारनेसे नेत्रोंमें विचित्र तरी आती है और तत्काल चित्त प्रसन्न होजाता है।

दाँतन करना

रातको सोकर सवेरे उठतेही देखते हैं कि जीभ पर कुछ मैल सा जम जाता है। इससे मुखका ज़ायक़ा बिगड़ा सा जान पड़ता है। जीभ और दांतोंका मल साफ़ करनेहीके लिये हमारे हिन्दुस्तान में दांतुन करनेकी पुरानी चाल है। काश्मीरसे कन्याकुमारी तक और अटकसे कटक तक समस्त भारतवासी विशेषकर हिन्दू दन्तधावन यानी दांतुन करनेके लाभ जानते हैं। वास्तवमें, दांतुन करना तन्दुरुस्ती के लिये बहुतही हितकारी है। हमने मरहठे और गुजरातियोंमें इसकी चाल बहुतायतसे देखी है। पुरुषही नहीं बल्कि उन ज़ातों की स्त्रियां भी किसी न किसी प्रकारकी दँातुन अवश्य करती हैं। हमारे युक्तप्रान्तकी स्त्रियां मिस्सी या दन्तमञ्जन लगाकर दाँत तो अवश्य साफ़ करती हैं मगर दाँतुन नहीं करतीं। इस प्रान्तके पश्चिमी शिक्षा प्राप्त अधिकाँश युवकोंने भी इस परमोत्तम चाल को छोड़ना शुरू कर दिया है। दाँतुनसे क्या लाभ होते हैं, दाँतुन कैसी लेनी और किस विधिसे करनी चाहिये ये सब बातें ऋषि मुनियोंकी संहिताओंके प्रमाण देकर नीचे दिखाते हैं। सुश्रुताचार्य्य लिखते हैं:—

तद्दौर्गन्ध्योपदेहौतु श्लेष्माणं चापकर्षति।
वैशद्यमन्नाभिरुचिं सौमनस्यं करोतिच॥

भावार्थ—"दाँतुन करनेसे मुँहकी बदबू, दांतोंका मैल और कफ़ नाश होता है; उज्जलता होती है, अन्न पर रुचि और सौमनस्यता होती है।"

बारह अङ्गुल लम्बी और सबसे छोटी अँगुलीके अगले भागके बराबर मोटी दांतन लेनी चाहिये। दांतनमें गांठ और छेद न होने चाहियें। दांतन गीली अर्थात् हरी अच्छी होती है; किन्तु सूखी, और गांठदार अच्छी नहीं होती। भावप्रकाशमें आक, बड़,

करञ्ज, पीपल, बेर, खैर, गूलर, बेल, आम, कदम्ब, चम्पा आदिकी दांतुनोंकी अलग अलग प्रशंसा लिखी है। हमारे देशमें नीम, बबूल, करञ्ज, और खैरकी दांतुनकी चाल अधिक है। वास्तव में, ये चारों प्रकारकी दांतुन अच्छी होती हैं। सुश्रुतके चिकित्सा स्थानमें लिखा है:—

निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा।
मधूको मधुरे श्रेष्ठः करंजः कटुके तथा॥

भावार्थ--कड़वे पेड़ोंमें नीमकी दांतुन, कसैले वृक्षोंमें खैर की दांतुन, मीठे दरख्तोंमें महुएकी दांतुन और चरपरे वृक्षोंमें करञ्जकी दांतुन अच्छी होती है।

इलाजुलगुरबा यूनानी इलाजकी किताब है उसमें लिखा है कि, "जो शख्स नीमकी दांतन करता है उसके दांतोंमें कोड़े नहीं लगते न उसके दांतोंमें दर्द होता है।

इन दांतुनों मेंसे जिस प्रकारकी दांतुन मिले उसे नोक परसे कूँचीसी कर ले। उस कूंचीसे एक एक दांतको धीरे धीरे घिसे। अगर सोंठ, कालीमिर्च, पीपर, और संधेनमकके चूर्णमें शहद या तेल मिला कर दांतोंको मांजा करे तो दांतोंसे खून आना, मसूड़े फूलना, मुंहकी बदबू आदि रोग कभी न हों। चूर्णको भूल कर भी मसूड़ों पर न मलना चाहिये। एक विद्वानने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि, दांतोंको मजबूत करनेवाली और रुचि उत्पन्न करनेवाली जितनी चीजें हैं उनमें तेलके कुल्ले करना मुख्य है। अगर रोज़ न हो सके तो तीसरे चौथे दिन काले तिलोंके तेलके कुल्ले अवश्य कर लिया करे।

दाँतुन करके जीभीसे जीभ साफ़ करना उचित है; क्योंकि जीभी करने से जीभका मैल, निरसता, बदबू और कड़ापन नाश होता है। जीभी सोने, चाँदी, तांबे या नर्म पीतल की बन-

बालेनी चाहिये। अगर वैसी जीभी न बनवा सकें तो दाँतुन को चीर कर उसी से जीभी का काम ले।

हम इस जगह दो एक तरह के परीक्षित दन्तमञ्जन भी लिख देते हैं। पाठकगण इनको बनाकर रखलें और नित्य लगाया करें और जो बेचना चाहें वह इन्हें अच्छी डिबियों में रख कर बेचें और फ़ायदा उठावें :—

दन्तशोधक मञ्जन।

१	मस्तगी	··· १ तोला	८	कत्था	···	१ तोला
२	दालचीनी	··· १ ”	९	नीलाथोथा भुना		१ ”
३	इलायची	··· १ ”	१०	जड़ाबाली ···		१ ”
४	कपूर कचरी	··· १ ”	११	भुना सफ़ेद ज़ीरा		१ ”
५	कपूर चीनी	··· १ ”	१२	भुनाधनिया		१ ”
६	सोंठ ···	··· १ ”	१३	सेंधानोन		२ ”
७	कालीमिर्च	··· १ ”				

बनाने की तरकीब।

नीलाथोथा आगपर रखने से भुन जाता है। ज़ीरा और धनिया किसी बरतन में रखकर आगपर रखने से भुन जाते हैं। इनतीनों को भून कर बाक़ी दस दवाओंके साथ मिला कूट पीस कर, कपड़ छन करलो। फिर एक शीशीमें रख दो। इस मञ्जन को दाँतों पर आहिस्ते आहिस्ते मलने से दाँत खूब साफ़ होकर मोतीके समान चमकने लगते हैं और कुछ दिन लगातार लगाने से पत्थर के समान मज़बूत होजाते हैं।

अमीरी दन्तमञ्जन।

१	मस्तगी ...	१॥	तोला	८	सेंधानोन ...	१॥	तोला
२	कसीस ...	१॥	"	९	स्याहमिर्च ...	१॥	"
३	मैनफलकी बीज	१॥	"	१०	धनिया ...	१॥	"
४	सोंठ ...	१॥	"	११	सफ़ेद कत्था	१॥	"
५	सेलखड़ी ...	१॥	"	१२	सफ़ेद ज़ीरा	१॥	"
६	सुहागा ...	१॥	"	१३	नागरमोथा	६	"
७	सुरमा ...	१॥	"				

बनाने की तरकीब।

इन तेरह चीज़ोंको बाज़ार से लाकर, पहले सोंठ, सेलखड़ी, सुहागा, धनिया और ज़ीरा इन पाँच चीज़ोंको आग पर भूनलो। पीछे कुल चीज़ोंको कूट पीस कपड़े में छानकर रख लो। इस मञ्जन को दॅातुन से दाँतों पर मलने, फिर पानी से कुल्ली करने तथा ऊपर से पान लगाकर खाने से दांत खूब मज़बूत और सुन्दर होजाते हैं तथा मुखसे मनभावन खुशबूआया करती है। *

कुल्ली करना।

दांतुन वग़ैर: करके शीतल जल से खूब कुल्ले करें। बारम्बार शीतलजल के कुल्ले करने से कफ, प्यास और मैल दूर होता है। किसी क़दर गर्मजलके कुल्ले करने से कफ, अरुचि, मैल और ठण्डसे दांतोंका जमना दूर होताहै तथा मुंह हलका होजाता है। +

* नोट :—इस मञ्जनमें एक बात है कि मिस्सीकी माफ़िक़ दांत काले होजाते हैं। इस लिये ये मञ्जन औरतोंके लिये अच्छा है। जिन्हें दांतोंको और काले न करने हों वह इस नुसखे में से कसीस और सुरमा निकाल दें।

+ नोट – नेत्ररोगी कमज़ोर, गर्भ, विष, मूर्छा, मदसे पीड़ित, शोषरोगी और रक्तपित्त रोगीको गर्म जलसे कुल्ले करना मना है।

दांतुन करना निषेध।

गला, तालू, होठ, जीभ और दांतों में जिस के रोग हों; जिसका मुख पका हो यानी छाले हों, जिसके सूजन हो, श्वास रोगी, खाँसीवाला, कमज़ोर, अजीर्णवाला, भोजन करके, हिचकी वाला, मूर्च्छावाला, नशेसे पीड़ित, सिरदर्दवाला, प्यासा, थका हुआ, शराब वग़ैरः से जिसे परिश्रम हुआ हो, अर्दितवायु रोगी, कानके दर्दवाला, नेत्ररोगी, नये बुखारवाला और हृदय रोगवाला इनको आयुर्वेद में दांतुन करने की मनाही है अर्थात् इनको दांतुन करना हानिकारक है।

मुँहधोना।

निरोग मनुष्यको उचित है कि दांतन आदि करके शीतल जल से मुंह और आंखों को धोवे। ठण्डे जल से मुंह धोनेसे काले काले धब्बे, मुंह की खुश्की, मुहासे, झांई और रक्तपित्त आदि रोग आराम होजाते हैं। मुंह हलका और साफ़ होजाता है। आंखें धोनेसे ज्योति पुष्ट होती है। अगर बुद्धिमान मनुष्य जितनी बार जल पिये उतनीही बार आंखोंमें शीतल जलके छपके दे और मुंह धोवे तो उसे नेत्र और मस्तक सम्बन्धी रोग शायद होहीं।

कसरत

बलवर्द्धक उपायोंमें कसरत श्रेष्ठ है।

संसार के प्राणीमात्र में बल की परम आवश्यकता है। देहमें बल रहने से ही जगत के सम्पूर्ण कार्य्य अच्छी भांति पूरे होते हैं। बल होनेसे ही समस्त प्रकारके सुख ऐश्वर्यों का पूरा पूरा आनन्द मिलता है। काया में बल होनेसे ही धन विद्या आदिकी प्राप्ति

होती है। बलवान ही अपने शत्रुओंको दबाने में समर्थ होता है। बलवानका ही जगत में आदर मान होता है। बलवानहीके समस्त कार्य्य सिद्ध होते हैं। इसके विपरीत बलहीन को पद पद पर आफ़ते उठानी पड़ती हैं। वह जहां जाता है वहां ही उसका अनादर और अपमान होता है। उसके अच्छे काम भी बुरी नज़र से देखे जाते हैं। निर्बल को अनेक प्रकार के रोग भी सताते रहते हैं। बलवान केशरी से वन का वन थर्राता है; किन्तु निर्बल शशासे कोई भी नहीं डरता, वरन छोटे मोटे सब ही उसे हज़म कर जाना चाहते हैं। इसी लिये कहते हैं कि प्राणीमात्र में बल की आवश्यकता है।

निर्बलता और कमज़ोरी ही के कारण अनादि कालके सुसभ्य बुद्धिमान, बलवान भारतवासी आजके ज़माने में अर्द्धसभ्य-जङ्गली, मूर्ख और डरपोक आदि शब्दों से सम्बोधन किये जाते हैं। हमारे शारीरिक बल के अभाव से ही हम आजकल 'झूठे और असत्यवादी कहलाते हैं; हमारी कमज़ोरी के सबबसे ही पृथ्वी की चढ़ती बढ़ती ज़ातियोंकी लिष्टमें हमारा नाम तक नहीं है; इस निर्बलता के कारणसे ही हमारा व्यौपार वाणिज्य जगत में गिरा हुआ है; सच पूछो तो हमारी बलहीनता ही ने हमें जगत की नज़रों में हक़ीर बना रक्खा है।

हमारा भारतवर्ष एशिया नामक महाद्वीप के अन्तर्गत एक विशाल देश है—इसी भू-खण्डमें पूरब की तरफ स्थिर महा-सागर में जापान एक छोटा सा द्वीप पुञ्ज है। २०।२५ साल पहिले उसका नाम भी बहुत कम हिन्दुस्थानी जानते थे। आज उसका नाम यहां का बच्चा बच्चा जानता है; आज के दिन उसका प्रताप खूब बढ़ा चढ़ा है; आज वह संसार की महाशक्तियोंमें गिना जाता है। आजकल उसका वाणिज्य व्यौपार खूब उन्नति कर रहा है। जगतमें उसकी खूब आदर और इज़्ज़त है। यह सब बल

की महिमा नहीं तो और क्या है? संसार में उच्च पद प्राप्त करनेके लिये बलही प्रधान उपाय है।

अब यह विचार करना है कि बल बढ़ानेवाले कौन कौन उपाय हैं और उनमें मुख्य या सर्वोपरि उपाय कौनसा है। यों तो बल वीर्यबढ़ानेवाले पदार्थों में घी, दूध, आदि श्रेष्ठ हैं; लेकिन यह आश्चर्यकी बातहै कि जो खूब मनमाना घी दूध आदि खाते हैं—जो दिन रात मोतीही चुगा करते हैं—उनमें भी यथार्थ बल पुरुषार्थ नहीं पाया जाता। बहुतसे तो माल पर माल उड़ाने पर भी औरतोंसे भी अधिक नाजुक पाये जाते हैं। बहुतेरे इतने निकम्मे और बेढ़ङ्गे मोटे या थल थल हो जाते हैं कि उनको दस क़दम चलना भी दुशवार है। इनकी नाजुक बदनोंसे भी अधिक मिट्टी खराब होती है। इससे स्पष्ट मालूम होता है कि खाली घी, दूध मांस आदिसे कोई बलवान नहीं हो सकता। इनसे भी ऊपर कोई और उपाय है जो बल बढ़ानेमें श्रेष्ट है। वह क्या है? पाठकों! प्यारे पाठकों! वह व्यायाम अर्थात् कसरत है जिसके सहारे घी दूध आदि तर व पुष्ट पदार्थ यथार्थ रूपसे पचते और बल बढ़ाते हैं। कसरतमें अनेक गुण हैं। कसरतकी महिमा हमारे वैद्यक शास्त्रमें खूब लिखी है।

अंगरेज़ोंमें कसरतका खूब आदर है। अंगरेज़ों में बालकसे बूढ़े तक किसी न किसी प्रकारकी कसरत अवश्य करते हैं। इसी कारण वह लोग हम लोगोंकी अपेक्षा सदा मज़बूत और तन्दुरुस्त रहते हैं। आलस्य उनके पास तक नहीं फटकता। कसरतहीके प्रतापसे वह नित नये आविष्कार करते हैं। कसरतही के बलसे वह समस्त पृथ्वी में बेखटके घूमते और अपना वाणिज्य फ़ैलाते फिरते हैं। वाणिज्यहीके प्रतापसे भूमण्डलकी लक्ष्मी लन्दन में आपसे आप चली जाती है। जापान कसरत में इनसे भी बढ़ गया है। वहां एक और तरहकी अद्भुत कसरत होती है।

जापानी भाषामें उसे "जिजित्सु" कहते हैं। उस कसरतके प्रतापसे एक आदमी अपनेसे दूनेको कुछ चीज़ नहीं समझता। अंगरेज़ लोग बुद्धिमान और गुणको क़दर करनेवाले हैं। उनमें छुटाई बड़ाई का ख़याल नहीं है। वह स्वार्थ साधनको ही मुख्य समझते हैं। अब अंगरेज़ोंने उस "जिजित्सु" नामक कसरतके सीखने के लिये जापान को अपना गुरु बनाया है। अनेक अङ्गरेज़ "जिजित्सु" सीखने जापान जाते हैं। अगले दिन एक देशी ख़बरके काग़ज़में देखा था कि एक जापानी बम्बईको पुलिसको भी "जिजित्सु" सिखानेके लिये मुक़र्रर किया गया है। फ्रांस, जरमनी, अमेरिका आदि समस्त देशोंमें शरीर रक्षा करने और बल बढ़ानेवाले उपायोंमें कसरत मुख्य समझी जाती है।

अफ़सोस है कि वह देश जो कसरतमें सबका अगुआ था—जहां भीमसेन, आल्हा ऊदल आदि अनेक योधा होगये हैं, जिनके अद्भुत कर्मों की बातें सुन कर अचम्भा आता है—आज वही भारतवर्ष कसरतमें सबसे पीछे पड़ा हुआ है। अब इस देशमें कसरतकी चाल एक दम घट गयी। समयकी विचित्र माया है कि आज काल यहाँके अधिकांश भले आदमी कसरतको फ़जूल समझते हैं। जहांके छोटे बड़े सबही कसरत कुश्तीका अभ्यास रखते थे अब वहां उँगलियों पर गिनने योग्य कसरती मिलते हैं। वह भी इसे पेट भरने या रोज़गार चलानेके लिये करते हैं। कसरत करनेवाले बदमाश समझे जाते हैं। जब हमारे देशको यह गति है तब क्यों न हमारी अधोगति हो—तब क्यों न हम पैंड़ पैंड़ पर लाञ्छित और अपमानित हों—क्यों न हम जने जनेके लात घूंसे खावें और अपनेको शक्तिहीन समझ कर चुपकी साध जावें। भाइयों! आप कसरत करो—अपने छोटे छोटे बालकोंको इसका अभ्यास कराओ। वाग्भट्ट चरक आदि आचार्यों ने लिखा है कि जितने बलवर्द्धक उपाय हैं

उनमें कसरतही श्रेष्ठ है। देखिये, वैद्यवर भावमिश्र महोदय अपने बनाये हुए ग्रन्थ भावप्रकाशके पूर्वखण्डके चौथे प्रकरणमें कसरतकी कैसी प्रशंसा लिखते हैं:—

लाघवं कर्मसामर्थ्यं विभक्तघनगात्रता।
दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते।
व्यायामदृढ़गात्रस्य व्याधिर्नास्ति कदाचन॥
विरुद्धम् वा विदग्धं वा भुक्तं शीघ्रं विपच्यते।
भवन्तिशीघ्रं नैतस्यदेहे शिथिलतादयः॥

भावार्थ—कसरत करनेसे शरीरमें हलकापन आजाता है, काम करने की सामर्थ होती है, शरीर भरा हुआ और सुन्दर होजाता है, कफादिक दोषोंका क्षय होता है और जठराग्निकी वृद्धि होती है। जिसका बदन कसरत करनेसे मज़बूत होजाता है उसे कदापि कोई रोग नहीं सताता। कसरतीको विरुद्ध अन्न या अच्छी तरह न पचनेवाला अन्न भी चट पट पच जाता है, और उसके शरीरमें ढीलापन झुरियां आदि भी जल्द नहीं होतीं"। महर्षि सुश्रुतजी अपनी संहिताके चिकित्सा स्थानके चौबीसवें अध्यायमें लिखते हैं:—

श्रमक्लमपिपासोष्णशीतादीनां सहिष्णुता।
आरोग्यं चापि परमं व्यायामादुपजायते॥
न चास्ति सदृशं तेन किंचित्स्थौल्यापकर्षणम्।
न च व्यायामिनं मर्त्यः मर्द्दयंत्यरयो भयात्॥
नचैनं सहसाक्रम्य जरा समधिरोहति।
स्थिरीभवति मांसं च व्यायामाभिरतस्य च॥

इन श्लोकोंका खुलासा मतलब यह है कि,—"कसरत करनेसे गर्मी सर्दी, मिहनत, थकाई और प्यास आदिके बरदाश्त करनेकी शक्ति

होजाती है। कसरतो खूब तन्दुरुस्त रहता है। स्थूलता यानी मुटापा नाशकरनेके लिये कसरतके समान दूसरा उपाय नहीं है अर्थात् कैसाही बेढङ्गा मोटा आदमी हो कसरत करनेसे हलका और सुडौल होजाता है। कसरत करनेवाले बलवान मनुष्यको डरके मारे दुश्मन भी दुःख नहीं दे सकते। कसरतीको एकाएकी बुढ़ापा नहीं घेरता और उसके शरीरका मांस कड़ा यानी मज़बूत हो जाता है।"

कसरत करनेकी आवश्यकता, कसरतके गुण आदि हम अपनी युक्तियों और सुश्रुत आदिके प्रमाणों द्वारा ऊपर अच्छी तरह समझा चुके हैं। अब यह लिखना है कि किन किन ऋतुओंमें कसरत हितकारी है, किन किनमें अहितकारी है, किनको कसरत लाभदायक और किनको हानिकारक है।

व्यायामो हि सदापथ्यो बलिनां स्निग्धभोजिनाम्।
स च शीते वसन्ते च तेषां पथ्यतमः स्मृतः॥
सर्वेष्वृतुष्वहरहः पुम्भिरात्महितैषिभिः।
बलस्यार्द्धेन कर्तव्यो व्यायामो हन्त्यतोऽन्यथा॥
क्षयस्तृष्णारुचिच्छर्दि रक्तपित्तभ्रमक्लमाः।
कासशोषज्वरश्वासा अतिव्यायामसम्भवाः॥
रक्तपित्ती कृशः शोषी श्वासकासक्षतातुरः।
भुक्तवान्स्त्रीषु च क्षीणो भ्रमार्तश्च विवर्जयेत्॥

उपरोक्त समस्त श्लोक सुश्रुत संहिता-चि० स्थानके २४ वें अध्यायसे लिये गये हैं। सुश्रुताचार्य्य कहते हैं कि,—"ताकतवर, तर या चिकने पदार्थ खानेवालोंको कसरत करना हमेशाही लाभदायक है विशेष करके जाड़े और बसन्तके मौसममें तो कसरत उन लोगोंको बहुतही फ़ायदेमन्द है। सब ऋतुओंमें अपना भला चाह-

नेवाले पुरुषोंको अपने आधे बलके अनुसार कसरत करनी चाहिये ; क्योंकि ज़ियादा कसरत करनेसे हानि होती है अर्थात् मनुष्य का नाश हो जाता है। अति कसरत करनेसे क्षय, तृषा (प्यास) अरुचि, रक्तपित्त, भ्रम, थकान, खांसी, शरीरका सूखना या खुश्की बुखार और श्वास (दमा) ये रोग हो जाते हैं। रक्तपित्त रोगी, शोष रोगी, श्वास, खांसी उरक्षत रोग वाला, भोजनके बाद, स्त्री प्रसंगसे क्षीण और जिसे भ्रम हो इन लोगोंको कसरत करना मुनासिब नहीं है।

कसरत सम्बन्धी नियम।

१ जिनको कुछ भी चिकना और ताक़तवर भोजन मिलता हो उनको ही कसरत करना हितकारी है। सूखी रोटी खाने-वालोंको कसरत हितकारी नहीं है।

२ कसरत करते करते कुछ खाना या चबाना उचित नहीं है। कसरत करके दूध मिश्री या घी दूध मिश्री मिलाकर पीना अथवा अपनी प्रकृति अनुसार कोई अन्य तर पदार्थ खाना आवश्यक है।

३ जबकि मुंह सूखने लगे, मुखसे जल्दी २ हवा निकलने लगे यानी दम फूलने लगे या शरीरके जोड़ों और कोखमें पसीना आने लगे तब कसरत करना बन्द करदे। येही बलार्धके लक्षण हैं।

४। कसरत करते समय लंगोट, रूमाली या जांघिया वग़ैर: अवश्य बांध ले जिससे फोते ढीले न रहें ; क्योंकि लंगोट वग़ैर: न बांधनेसे फोते लटक आने और नामर्द हो जाने का भय है।

५। कसरत करके कुछ देर टहलना अच्छा है। किसी काम में लग जाना और तत्काल ही स्नान कर लेना अच्छा नहीं है।

६। बुद्धिमान को चाहिये कि अपनी अवस्था, अपना बला-बल, देश, काल और भोजन आदि को विचार कर कसरत करे अन्यथा रोग होने का डर है।

७। कसरत से शरीर थक जावे तब पैरों में तेल की मालिश कराना या उबटन लगवाना लाभदायक है।

८। जिन लोगों को कसरत करना निषेध है वे कदापि कसरत न करें अन्यथा लाभके बदले भयङ्कर हानि होनेकी सम्भावना है।

तेल मालिश कराना।

बुद्धिमान को चाहिये, कि किसी न किसी तरह का तेल अपने शरीर में अवश्य मर्दन किया करे। अगर रोज़ २ न बन पड़े तो चौथे आठवें दिन तो ज़रूर तेल लगावे। तेल लगाने से शरीर का चमड़ा नर्म और चिकना हो जाता है। शरीर हलका और फुरतीला मालुम होने लगता है। नियम पूर्व्वक तेल मालिश करनेवाले को दाद खाज खुजली फोड़े फुन्सी आदि चर्म रोगोंका भय तो स्वप्नमें भी नहीं रहता। वैद्यक-ग्रन्थोंमें लिखा है कि,—"तेल मर्दन कराने से धातु पुष्ट होती है। ग्रुति, रूप और बल बढ़ता है।" सुश्रुतके चिकित्सा स्थान में लिखा है :—

जल सिक्तस्यवर्द्धन्ते यथा मूलेङ्कुरास्तरोः।
तथा धातु विवृद्धिर्हि स्नेह सिक्तस्य जायते॥

इस का भावार्थ यह है कि,—"जैसे दरख्त की जड़ में जल सींचने से उसके डाली पत्तों के अङ्कुर बढ़ते हैं उसी भाँति तेल की मालिश करने से मनुष्य की धातु बढ़ती है"। महर्षि चरकजी भी अपनी संहिताके सूत्रस्थान के मात्रा-शितीयः नामक पांचवे अध्याय में लिखते हैं :——

स्नेहाभ्यङ्गाद्यथाकुम्भश्चर्मस्नेहविमर्दनात्।
भवत्युपाङ्गोदक्षश्च दृढ़ः क्लेशसहो यथा॥

तथा शरीरमभ्यङ्गाद्दृढं सुत्वक् प्रजायते।
प्रशान्तमारुताबाधं क्लेशव्यायामसंग्रहम्॥

"स्नेह यानी चिकनाई के संयोग से जैसे मिट्टीका घड़ा मज़बूत होजाता है, सूखा चमड़ा नर्म होजाता है और चक्र यानी पहिये का उत्कर्ष होता है; उसी प्रकार स्नेह यानी तेल की मालिश से शरीर के चमड़े का भी उत्कर्ष होता है। जैसे पहिया चिकनाई लगाने से फिरने लगता है तथा मज़बूत और बोझ सहने लायक होजाता है; शरीर भी उसी तरह तेल की मालिश से मज़बूत और सुन्दर चमड़े वाला होजाता है"। तेल की चरचा जितनी वैद्यक में है उतनी न तो डाक्टरी न यूनानी चिकित्सामें है। शास्त्रकारोंने अनेक दुःसाध्य रोगों में भी तेल लगाना फ़ायदे-मन्द लिखा है। परीक्षा द्वारा देखा गया है कि जिन भयानक रोगों में—डाक्टरी और यूनानी दवाओं से कुछ लाभ नहीं होता—उनमें हमारे ऋषि मुनियों के निकाले हुए तेल अक्सीर का काम करते हैं। जीर्णज्वर, पुरानी खांसी और राजयक्ष्मा में "लाक्षादि तेल" अच्छा काम देता है। समस्त वायुरोगों में "नारायण तेल," "माषादि तेल" आदि कई तेल अद्भुत चमत्कार दिखाते हैं। बेढङ्गे और मोटे शरीर को ठीक करने में "महा सुगन्ध तेल" एक ही है। "चन्दनादि या महा-चन्दनादि तेल" कुछ दिन लगातार लगाने से निर्बल से निर्बल मनुष्य खूब बलवान और स्वरूपवान हो जाता है। पाठकों के उपकारार्थ एक दो तरह के तेल बनाने की बहुत ही सहज विधि आगे लिखते हैं:—

महासुगन्ध तैल।

१ चन्दन	१४ सुपारी	२७ चोरक
२ केशर	१५ लौंग	२८ शैलेय
३ खस	१६ नली	२९ एलुआ
४ प्रियङ्गु	१७ जटामासी	३० सरल
५ छोटी इलायची	१८ कूट	३१ सतवन
६ गोलोचन	१९ रेणुका	३२ लाख
७ लोबान	२० तगर	३३ आंवला
८ अगर	२१ नागरमोथा	३४ लामज्जकतृण
९ कस्तूरी	२२ नवीन नख	३५ पद्माख
१० कपूर	२३ व्याघ्रका स्पृक्का	३६ धायके फूल
११ जावित्री	२४ वाल	३७ पुण्डरीक
१२ जायफल	२५ दौना	३८ कपूर *
१२ कंकोल	२६ स्थौणेयक	(फुटनोट देखो)

* नोट :—

नख—यह सुगन्धित द्रव्य है। इसके न मिलने पर "लौंग के फूल" ले सकते हैं।

रेणुका—कालीमिर्च या सूंगके सदृश बीज होते हैं। कोई वैद्य सम्हालू के बीजों को और कोई मेंहदी के बीजों को रेणुका कहते हैं।

स्थौणेयक—इसे बाजारू भाषामें "थुनेर" कहते हैं।

शैलेय—यह छारछबीला और भूरिछरीला के नामसे प्रसिद्ध है।

लामज्जक तृण—इसे हिन्दीमें "लामज्जक" ही कहते हैं। इसका रंग पीला और जड़ लम्बी होती है। यह सुगन्धित दवा है।

नली—नली या नलिका सुगन्धित द्रव्य है। इसका स्वरूप मूंगेके समान होता है। कहीं२ इसे पवारी या पवाली भी कहते हैं।

पुण्डरीक—इसे पुण्डरिया या पुण्डेरी भी कहते हैं। सुगन्धित द्रव्य है। इसके पत्ते हरे, फूल बैंगनी और लकड़ी पीली होती है।

स्पृक्का—सुगन्धित द्रव्य है। कोई२ इसे "असबरग" भी कहते हैं।

दौना—इसे "दवना" भी कहते हैं। पत्तोंमें बहुत ही सुगन्ध होती है। पत्तों पर रुआं सा होता है।

सतवन—इसे "सतौना (सप्तपर्ण) भी कहते हैं।

(कस्तूरी, केशर, और चन्दन के लिये २५ वें पृष्ठ का फुट नोट देखिये।)

बनाने की विधि।

उपरोक्त अड़तीस चीज़ों को खूब देख भाल कर पंसारी की दूकान से बराबर तीन तीन माशे ले आवो; पीछे इनको कूट पीसकर, पानीके साथ सिलपर, भांग की तरह, पीस कर लुगदी बनालो; इसके बाद चूल्हेमें आग जलाओ; एक कालईदार कढ़ाही में तैयार की हुई लुगदी रख ऊपर से चारसेर काले तिलोंका तेल और सोलह सेर पानी डालो; पीछे कढ़ाही को चूल्हे पर रख धीरे धीरे तेल पकाओ; जब सब पानी जल जाय, सिर्फ तेल रह जाय, तब उसे कपड़े में छान कर बोतलों में भर कर काग लगादो।

इस तेल के गुण।

भावप्रकाशमें लिखा है कि,—"इस तेल की मालिश करानेसे पसीना, मैलके कारणसे पैदा हुई शरीर की दुर्गन्ध, खाज, खुजली और कोढ़ भली भांति आराम होजाते हैं। कुछ दिन लगातार इस तेलकी मालिश करनेसे ७० वर्षका बूढ़ा जवान, खूब वीर्य्यवान, स्त्रियोंका अत्यन्त प्यारा, भाग्यवान, रूपवान और सौ स्त्रियोंसे भोग करने लायक होजाता है; बाँझ भी बच्चा जनती है और नामर्द मर्द होजाता है तथा १०० वर्ष की उम्र होजाती है। बेडौल मोटा आदमी सुडौल होजाता है"। ग्रन्थकर्त्ता—इस तेलके जितने गुण भावप्रकाश में लिखे हैं उतने तो हम नहीं आज़मा सके; किन्तु इतना तो जरूर देखा है कि इस के मालिश करने से बेढङ्गी मुटाई नाश होकर शरीर खूब सुन्दर और सुडौल हो जाता है, बदन में ताक़त आती है, तेज बढ़ता है, रूप खिलता है, और खाज खुजली वगैर: चर्म रोग निस्सन्देह नाश हो जाते हैं। यदि कोइ शख्स बरस के महीने इस को लगाता रहे तो शायद बूढ़े से जवान भी हो जाय।

चन्दनादि तैल।

१ सफेद चन्दन*	१५ केशर*	३० भूरिछरीला
२ लाल चन्दन*	१६ जायफल	३१ नागरमोथा
३ पतंग*	१७ लौंग	३२ रेणुकाकेबीज
४ दारुहल्दी*	१८ बड़ी इलायची	३३ फूलप्रियङ्गु
५ अगर*	१९ छोटी इलायची	३४ लोवान
६ काली अगर	२० जावित्री	३५ गूगल
७ देवदारु	२१ कंकोल*	३६ लाख
८ धूप सरल*	२२ दालचीनी	३७ नख
९ कमल	२३ तेजपात	३८ मजीठ
१० पारिस पीपलका	२४ नागकेशर	३९ तगर
पञ्चाङ्ग	२५ खस	४० मोम
११ कपूर	२६ सुगन्धवाला	४१ राल
१२ कस्तूरी*	२७ बालछड़	४२ धायके फूल
१३ बेदमुश्क	२८ तज	४३ गठिवन*
१४ शिलारस*	२९ वंसलोचन	

* सफेदचन्दन—तेल बनाने में "सफेद चन्दन" ही लेना चाहिये। चंदन वजन में भारी और खूब खुशबूदार हो वही उत्तम होता है।

लालचंदन—बहुत लाल उत्तम होता है। इसके अभाव में "मई खस" लेसकते हैं।

पतङ्ग—लाल गठीली लकड़ी होती है। छीपी रङ्गने के काममें लाते हैं।

दारुहलदी—बहुत पीली उत्तम होती है। इसके अभावमें "हलदी" ले सकते हैं।

अगर—कौआकी चोंचके समान चिकनी, भारी, पानीमें डालने से लोहेके समान डूब जाय और रंगमें काली हो वही उत्तम होती है।

धूपसरल—पलेठाक की सी होती है। लकड़ी में से गोंद सा निकलता है।

कस्तूरी—इसमें आजकल बड़ा जाल होता है। एक साफ जलती कोयले पर "कस्तूरी" का एक रवा रख दो। उसमें से जो धुआं निकले उसको सुगन्ध लो। अगर

(शेष २६ वें सफे में देखिये)

तेल बनाने की विधि ।

ये सब ४३ दवाइयाँ तीन तीन माशे लेकर, कूट पीस कर, सिल पर जलके साथ लुगदी सी बनालो। फिर "महासुगन्ध तेल" की तरह कलईदार कड़ाही में लुगदीको, चार सेर काले तिलोंका तेल और सोलह सेर जल डालकर मन्दी मन्दी आग पर पकाओ। जब सब पानी जल जाय, केवल तेल मात्र रह जाय, ठण्डा करके छान लो और साफ बोतलों में भरकर कागसे मुंह बन्दकर दो। यही तैयार हुआ तेल "चन्दनादि तेल" है।

इस तेलके गुण।

शरीर में इस तेलकी लगातार मालिश करने से अस्सी वर्ष का बुड्ढा पुरुष भी जवान के समान वीर्य्यवान और स्त्रियों का अत्यन्त प्यारा हो जाता है। इस तेल की मालिश करने से बाँझके भी गर्भ रहता है। अपुत्रिणी के पुत्र होता है और १०० वर्ष की उम्र होती है। यह "महाचन्दनादि तेल" रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, दाह पसीना, दुर्गन्ध, कोढ़, और खुजली को दूर करता है।

---

* कस्तूरी असली होगी तो शुरुसे अखीर तक उसकी सुगन्ध आवेगी। अगर नकली होगी तो पहली कस्तूरी की सुगंध आवेगी पीछे किसी की नहीं या जो चीज उसके अंदर होगी उसकी गन्ध आवेगी। अगर उत्तम कस्तूरी मिले ही नहीं तो उसके बदले में "कंकोल" डाल सकते हो।

शिलारस—लिसोढ़े के रसके समान चिकना, धूएं के रंगका, सुगन्धित गोंद सा होता है।

केशर—जो सुर्खी माइल पीली हो, सुगन्धमें तेज, तोल में हलकी, स्वाद में चरपरी कड़वी तथा एक चावल भर मुख में रखने से १५।२० मिनट बाद शिरमें गर्मी मालुम हो तो उस केशरको असली समझना अन्यथा नकली। अच्छासक मिले केशर ही लेना यदि न मिले तो इसके बदले में "कसूम के नये फूल" डाल सकते हो।

कंकोल—इसके अभाव में "जाविली" ले सकते हैं।

गठिवन—इसे "गठौना" भी कहते हैं। इसमें गांठ बहुत होती हैं इसीसे इसे गठिवन कहते हैं। यह सुगन्धित लकड़ी है।

अ० क०—"चन्दनादि तैल" भी हमारा परीक्षित है। जितने गुण शास्त्रमें लिखे हैं उतने गुण आज़माने का मौका तो हमें नहीं मिला किन्तु इतना तो निस्सन्देह कह सकते हैं—कि यह तैल निहायत बढ़िया है—अमीरों और राजा महाराजाओंके इस्तेमाल करने लायक़ है। "चन्दनादि तैल" पुराने ज्वर, दाह, पसीना और खुजली में बेशक रामबाण का काम करता है। ३।४ महीने नियम पूर्वक लगाते रहने से निर्बल बलवान, कुरूप सुरूप होजाता है तथा शरीर सुखं और देखने लायक़ होजाता है।

शिरमें तैल लगाना।

आजकल ज़रा ज़रा से छोकरों और उठती जवानो के पहोंके बाल असमयमें ही बूढ़ों की भाँति सफ़ेद होजाते हैं इसका क्या कारण है? संक्षेप में, इस प्रश्नका यह उत्तर है कि शोक, क्रोध अपने बलसे अधिक परिश्रम, मिज़ाज की गर्मी, अति उष्ण आहार विहार और अति मैथुन आदि * असमय में बाल सफ़ेद होनेके कारण हैं।

वैद्यक शास्त्रमें लिखा है:——

क्रोधशोकश्रमकृतः शरीरोष्मा शिरोगतः।
पित्तञ्च केशान्पचति पलितं तेन जायते॥

"शोक तथा परिश्रम आदि से वायु कुपित होती है। कुपित हुई वायु शरीर की गर्मी को शिरमें लेजाती है। मस्तक में भ्राजक नामका जो पित्त है वह क्रोधसे कुपित होता है। शास्त्रमें नियम है कि प्रकुपित हुआ एक† दोष दूसरे दोष को प्रकुपित करता है। इस नियम के अनुसार कुपित हुए वायु और पित्त, कफ को भी कुपित करते हैं। कुपित हुआ कफ बालोंको

---

* बिना समय यानी बिना बुढ़ापा आये। † वात, पित्त और कफ इन तीनों को दोष कहते हैं।

सफ़ेद कर देता है। इस प्रकार ये तीनों दोष (वात, पित्त, कफ) बाल सफ़ेद करने में निदानभूत होते हैं।" बुद्धिमान को चाहिये कि, जहां तक सम्भव हो, शोक, क्रोध, अति मैथुन, नियम विरुद्ध आहार विहार और अति परिश्रम से बचे। विशेष कर अति मैथुन और शोकसे बचे क्योंकि ये दोनो ही अनेक अनर्थों के मूल हैं।

शिर में तैल लगाने से बाल जल्दी नहीं पकते। भौंरे के समान काले और चिकने बने रहते हैं। मस्तक की थकावट दूर होती है। बुद्धि बढ़ती है, आंखों की ज्योति पुष्ट होती है तथा मस्तक सम्बन्धी रोग बहुत कम होते हैं। सुश्रुतजी लिखते हैं :—

करोति शिरस्तृप्तिं सुत्वकत्वमपि चालनम् ।
सन्तर्पणं चेन्द्रियाणां शिरसः प्रतिपूरणम् ॥

"शिरमें तैल लगाना—शिर को तृप्ति करता है, शिरके चमड़े को सुन्दर करता है, रक्तादि का सञ्चालन करता है; नाक, कान, नेत्र आदि इन्द्रियोंको तृप्त करता है, तथा शिरको पूरण करता है।" चरक-सूत्रस्थानके मात्रा-शितीयः नामक पांचवें अध्याय में लिखा है :—

नित्यं स्नेहार्द्रशिरसः शिरः शूलं न जायते ।
न खालित्यं न पालित्यं न केशाःप्रपतन्ति च ॥
बलं शिरः कपालानां विशेषेणाभिवर्द्धते ।
दृढ़मूलाश्च दीर्घाश्च कृष्णाः केशाभवन्ति च ॥

"मस्तकमें सदैव तैल डालने से—शिर में दर्द नहीं होता, न बाल गिरते हैं न सफ़ेद होते हैं और न टूटकर गिरते हैं। तैलसे मस्तक चिकना रहनेसे विशेष करके मस्तक और कपालका

बल बढ़ता है। बाल सब मज़बूत जड़वाले, लम्बे और काले रंग के हो जाते हैं।" समस्त शरीर का मूल आधार मस्तिष्क * है इसी लिये ऋषियोंने शिरमें तेल लगाने की परमावश्यकता दिखाई है।

बङ्गाली लोग किसी न किसी तरह का तेल शिरमें अवश्य लगाते हैं। इसी वजह से उनके बाल जल्दी नहीं पकते और बुद्धि अत्यन्त तीव्र होती है। कठिन से कठिन विषय उनकी समझमें सरलता से आजाते हैं। इसवास्ते शिरमें तेल अवश्य लगाना चाहिये। चमेली बेला आदि के तेल अच्छे होते हैं। असल चमेली के तेल से अक्सर शिर दर्द आराम होजाता है। खराबी इतनी ही है कि चमेली वग़ैरः के तेल थोड़े तिलोंके तेल में तैयार होते हैं और सफ़ेद तिलोंका तेल बालोंको जल्दी सफ़ेद कर देता है। नारियल का तेल, काले तिलोंका तेल या आमलेका तेल शिरके लिये उत्तम है। हम पाठकोंके लिये शिरमें लगाने के तेलका नुसखा नीचे लिखते हैं। बङ्गालमें इस नुसखे से बहुत प्रकारके शिरके सुगन्धित तेल तैयार किये जाते हैं:—

मस्तक-रञ्जनतेल।

१ छारछरीला	८ लौंग	१५ दालचीनी
२ नागरमोथा	९ बड़ी इलायची	१६ बालछड़
३ कपूरकचरी	१० चम्पावती	१७ सुगन्धबाला
४ पनड़ी	११ धनिया	१८ सुगन्धकोकिला
५ गुलाबके फूल	१२ खस	१९ नरकचूर
६ सफ़ेद चन्दन	१३ कंकोल	२० कपूर
७ छोटी इलायची	१४ जायफल	२१ मख

* मस्तिष्क या भेजे को अङ्गरेजी में ब्रेन (Brain) कहते हैं। मस्तक यानी खोपड़ीके अन्दर एक सफ़ेद सी चीज़ है उसी को 'मस्तिष्क, कहते हैं।

तेल बनाने की तरकीब।

ऊपर की चीज़ें सब ही खुशबूदार होती हैं। इन सबको, एक एक तोला लेकर, अध-कचरा करलो। पीछे एक टीन के या कांच के बरतन में सवासेर गरी का या काले तिलका तैल डालकर, उसी में अध-कचरी दवाएं डाल दो।* बरतन का मुख बन्द कर दो कि हवा न आ जासके। इस बरतन को, १ हफ्ते तक, दिनमें धूपमें रक्खो और रातको ओसमें रक्खो। ७ दिन बाद, बरतन को खोल कर तेल को छान कर बोतल में भर दो। यह बहुत सुन्दर तेल तैयार होगा। इसके लगानेसे शिर शीतल रहेगा। बाल काले और चिकने रहेंगे। सुगन्ध से चित्त प्रसन्न रहेगा।

कानमें तेल डालना।

मनुष्य को चाहिये कि कभी कभी कानका मैल किसी चतुर कनमैलिये से निकलवा लिया करे। पीछे हर रोज़ या चौथे आठवें दिन किसी प्रकार का देशी तेल कानमें टपका दिया करे। कानमें तेल देने से कानका परदा तर रहता है और कानमें कोई रोग नहीं होता। सुश्रुतजी लिखते हैं:—

हनुमन्याशिरः कर्णशूलघ्नमकर्णपूरणम्।

"कानमें तेल डालने से ठोडी, गर्दन की मन्या नामक शिरा, मस्तक और कानके दर्दका नाश होता है।"

पैरोंमें तेल लगाना।

पांवोंमें तेल मर्दन कराने से पांव सोना, थकाई, सङ्कोच और

---

* अगर बहुतही सुन्दर तेल बनाना हो तो दवाओं को एक रुपये या दो रुपये सेरके चमेली के तेलमें भिगोना। अगर तेलकी रङ्गत लाल करनी हो तो "रतन जोत" १ तोले साथही डाल देना। पीछे गुलाब वगैरः के इत्र कुछ मिला देना।
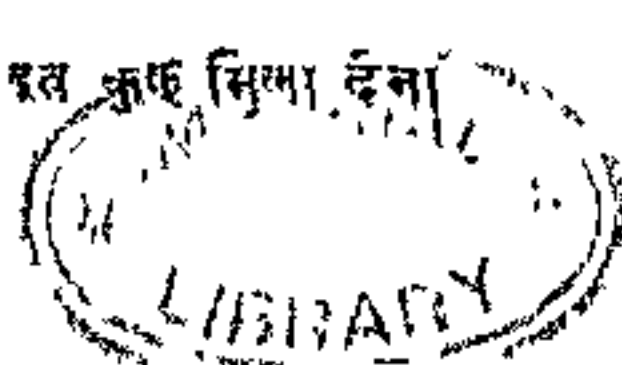
पैर फटना इन रोगों का नाश होता है। पैरोंमें फूटनी या भड़-कन नहीं होती और सुखसे नींद आती है। भावप्रकाश और सुश्रुत में लिखा है कि कसरत करके पैरों में तेल की मालिश कराने से मनुष्य के पास रोग इस तरह नहीं आते जैसे गरुड़ के पास सांप नहीं आते।

तेल लगाना निषेध।

नवज्वरी अजीर्णी च नाभ्यक्तव्यः कथञ्चन।
तथा विरक्तोवान्तश्च निरूढोयश्च मानवः॥ भा॰प्र॰

नवीन ज्वर वाले, अजीर्णवाले, जुल्लाब लेने वाले, वमन (उल्टी) करनेवाले और निरूह वस्ति* लेने वालेको कदापि तेलको मालिश न कराना चाहिये। तेल मलवाने से नये बुखारवाले और अजीर्ण-रोगी के रोग कष्टसाध्य अथवा असाध्य होजाते हैं। जुल्लाब और वमनवाले के तेल की मालिश कराने से मन्दाग्नि आदि रोग होजाते हैं।

क्षौरकर्म।

क्षौर-कर्म बाल बनवाने या हजामत कराने को कहते हैं। बुद्धिमान मनुष्य को चाहिये कि चौथे पांचवे दिन अवश्य बाल बनवा लिया करे। साथ ही नाखून कटाना भी न भूले। अंगरेजों में अफ़सर से साधारण गोरे तक नित्य सवेरे हजामत बनवाते हैं। जो दाढ़ी नहीं मुंडाते वह उसकी कोर ही बनवालेते हैं। हजामत कराने से भद्दी से भद्दी सूरत सुन्दर दिखने लगती है। हमारे आयुर्वेद ग्रन्थों में बाल बनवाने के भी बहुत लाभ लिखे हैं। सुश्रुतजी लिखते हैं;—

* गुदा में पिचकारी लगा कर मल निकालने की क्रिया को कहते हैं। इसका पूरा हाल बयान कहीं आगे लिखा जायगा।

पापोपशमनं केशः नखरोमापमार्जनम् ।
हर्षलाघवसौभाग्यकरमुत्साहवर्द्धनम् ॥

"बाल, नाखून तथा अन्य स्थूल रोमादि कटाने से पाप नाश होते हैं। चित्त प्रसन्न और हलका होता है। सौभाग्य (सुन्दरता) और उत्साह बढ़ता है। भावप्रकाश में लिखा है :—"हर पांचवें दिन नाखून, डाढ़ी, बाल और रोम कतरवाने या उतरवाने से शरीर की शोभा होती है; पुष्टि बढ़ती है; धनकी आमद होती है; पवित्रता होती है और उत्तम कान्ति झलकती है।"

जहां तक हो सके बाल कम रक्खे। बाल अधिक रखने में सिवाय दुःखके सुख कुछ नहीं है। बाल कम रखने से माथा हलका रहता है। शिरमें दर्द नहीं होता। बुद्धि बढ़ती है। यही कारण है कि अच्छे अच्छे विद्वान सन्यासी सिरको सफाचट रखते हैं। जो अधिक बालों के शौकीन हों उन्हें मुनासिब है कि बालों को सोडा या मुलतानी वगैरः से खूब साफ़ किया करें। बाल बनवा कर शिर रुखा न रक्खें अर्थात् किसी प्रकार का खुशबूदार तेल तत्काल शिरमें लगादें; क्योंकि इससे नेत्रोंके लिये परम उपकार होता है।

उबटन लगाना।

तेल मालिश करने के बाद उसको चिकनाई छुटाने और मैल उतारने को उबटन मलना चाहिये। अगर उबटन न लगा सकें तो चनेका चून यानी बेसन ही मललें। वैद्य भावमिश्र लिखते हैं :—"चूर्ण के माफ़िक कोई चीज़ मलने से कफ और मेद नाश होती है, वीर्य पैदा होता है, बल बढ़ता है, खून की चाल ठीक होती है तथा चमड़ी साफ़ और कोमल होजाती है। उबटन मुंह पर मलनेसे आंखें मज़बूत और गाल पुष्ट होते हैं तथा मुहासे और झांई नहीं होतीं। अगर मुख पर झांई आदि पड़ गयी हों तो

नाश होजाती हैं और मुख कमल के समान शोभायमान होजाता है।"

आजकल उबटन की चाल बिलकुल ही कम होगयी है। जिसे देखते हैं वही गोरों के माफ़िक गोरा बनने की बलायती साबुन लगाते पाया जाता है। इस बात पर कोई जान बूझ कर भी ध्यान नहीं देता कि विदेशी साबुन जिन घृणित पदार्थों के संयोग से बनते हैं उन्हें धर्मभीरु हिन्दू छूने या देखने से भी नाक भौं सकोड़ते हैं। अगर साबुन बिना काम ही न चले तो स्वदेशी पवित्र साबुन कामसें लाना चाहिये। लेकिन हमारी समझ में जितना लाभ उबटन से होता है उतना साबुन से कदापि नहीं हो सकता। *

स्नान करना।

स्नान करने की जैसी चाल भारतवर्ष में है वैसी और देशोंमें नहीं है। यूरुप अमेरिका आदि मुल्कों में भी स्नान करने की चाल है तो सही; किन्तु हिन्दुस्थान के समान नहीं है। यूरुप आदि देशोंकी आबहवा सर्द है—वहाँ बर्फ़ पड़ा हो करता है इसी कारण वहाँ के लोग कम स्नान करते हैं किन्तु भारतवर्ष उष्ण प्रधान देश है इस लिये यहाँ के लोग बहुत स्नान करते हैं। वहां वाले यदि यहां वालोंके समान स्नानों की धूम मचादें तो सर्दी के मारे अकड़ जायं।

आजकल अधिकांश लोग समझते हैं कि बारम्बार स्नान करने से स्वर्ग मिलता है। स्नान करने से स्वर्ग नहीं मिल सकता। मनुष्य-शरीर में नाक कान आंख प्रभृति इन्द्रियों से जो मैल निकलता है—बाहर की धूल गर्द आदि उड़कर शरीर पर जम

* जिस रोज, बाल बनवाने हों उस दिन पहिले बाल बनवावें। इसके पीछे तैल की मालिश और उबटन तथा स्नान करें।

जाती है—उस मैलके दूर करने के लिये ही स्नान करना ज़रूरी समझा गया है ; क्योंकि स्नान न करने से शरीर के छिद्र बन्द होजाते हैं। वायु का आवा—गमन रुक जाता है। जिससे रक्त-विकार प्रभृति अनेक रोग होजाते हैं। देखिये, चरकजी सूत्रस्थान में लिखते हैं :—

पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्।
शरीरबलसन्धानं स्नानमोजस्करं परम्॥

स्नान—पवित्रता करता है, वृष्य है, आयुवर्धक, श्रमनाशक, पसीने नाशक, मल दूर करने वाला, बल बढ़ाने वाला और अत्यन्त तेज करने वाला है।" सुश्रुतजी चिकित्सास्थान में लिखते हैं :—

निद्रादाहश्रमहरं स्वेदकण्डूतृषापहम्।
हृद्यं मलहरं श्रेष्ठं सर्वेन्द्रियविशोधनम्॥
तन्द्रापापोपशमनं तुष्टिदं पुंसत्ववर्द्धनम्।
रक्तप्रसादनं चापि स्नानमग्नेश्च दीपनम्॥

"स्नानकरना—निद्रा, दाह (जलन), थकान, पसीना, खाज खुजली और प्यासको नष्ट करता है। स्नान हृदय को हितकारी है ; मैल दूर करने वाले उपायोंमें परमोत्तम है ; समस्त इन्द्रियों को शोधन करता है ; तन्द्रा (ऊंघना) और पाप (दुःख) को नाश करता है। स्नान करने से चित्त प्रसन्न होता है, पुरुषार्थ बढ़ता है, खून साफ़ होता है और अग्नि दीप्त होती है।" शीतल जलादि के सींचने से शरीर के बाहर की गर्मी दब कर भीतर जाती है और इसीसे मनुष्य की जठराग्नि प्रबल होती है। देखते हैं कि भूख कैसी ही कम क्यों न हो ; स्नान कर चुकते ही कुछ न कुछ भूख अवश्य लगती है।

चरक आदि ऋषियोंने "स्नान" की जैसी प्रशंसा की है, वास्तव में, स्नान करना वैसाही लाभदायक है : परन्तु जितनी बार पाखाने

जाना या पेशाब करना उतनी ही बार स्नान करना स्वास्थ्य की हकमें लाभदायक नहीं है। एक दिन में कईबार स्नान करने से निस्सन्देह अनेक रोग उत्पन्न होजाते हैं। यूनानी इलाज करने वाले भी बार बार स्नान करने को हानि कारक बताते हैं। "इला-जुल गुरबा" हिकमत का प्रसिद्ध ग्रन्थ है उसमें लिखा है,—"नहाना चाहे गर्म पानीसे हो या ठण्डे पानीसे हो पट्ठोंको क्षीण करता है; इस लिये गर्म पानीसे त्वचा (चमड़ा) और रगें ढोली होजाती हैं और ठण्डे पानी से रगों में शीतमयी सर्दी बढ़जाती है। बहुत से हिन्दुओंको, जो सदा नहाते हैं, चाहे जवानी में स्वभाव में गर्मी होनेसे, हानि कम मालुम होती हो परन्तु जब जवानी को पार कर जाते हैं तब रगों और गुर्दे में निर्बलता के चिन्ह प्रकट होते हैं और वीर्य्य क्षीण पड़ जाता है। बाज़े हिन्दू कईबार नहाते हैं, दिशा जानेके पीछे भी नहाते हैं यह नहाना उनके शरीर को अत्यन्त दुखदायक है।"

"इलाजुल गुर्बा" के लेखकने जो कुछ लिखा है वह उसी देशके लिये बिलकुल ठीक है जिस देश से यूनानी चिकित्सा सम्बन्ध रखती है। हमारे देशके लिये यह बात ठीक नहीं है। भारतवासियोंको नित्य स्नान करना ही लाभदायक है। किन्तु बारम्बार स्नान करना 'इलाजुल गुर्बा, के कर्त्ता के मतानुसार बेशक हानिकारक है। हमारे यहां मैथुन के बाद, अखजल, कन्द मूल, फल, दूध, पान और दवा सेवन करने के पीछे भी, स्नान करना लिखा है किन्तु यह भी ठीक नहीं है। धर्म्ममत से चाहें स्वर्ग और मुक्ति को देने वाला हो किन्तु तन्दुरुस्ती के लिये नुकसान मन्द है। 'इलाजुल गुर्बा'में लिखा है—"भोजन कर चुकते ही और मैथुन के उपरान्त शीघ्रही नहाना हानि करता है।" भोजन करके स्नान करने को हमारे वैद्यक में भी बुरा लिखा है। मैथुन करने के पीछे बदन एक दम गर्म होजाता है। उस समय

स्नान करना निस्सन्देह नुकसान करेगा ; इसी वजह से हकीमोंने मैथुन बाद तत्काल स्नान करने की मनाही की है और यह बात हम भारतवासियोंके लिये भी ठीक है ।

"इलाजुलगुर्बा"में लिखा है:—"ठण्डेपानी में नहानेसे गुन-गुने पानी से नहाना उत्तम है । हवामें शीतल जलसे स्नान करना, विशेष करके, सर्द मिजाजवाले को अवगुण करता है । कफके स्वभाववालेको अधिक नहाना मना है । नज़लेवालों, अतिसार रोगियों, लड़कों और बूढ़ों को शीतल जलसे नहाना विशेष हानिकारक है।" हमारे आयुर्वेद में भी गर्मजलके स्नानको अच्छा लिखा है । भावमिश्र वैद्य अपने भावप्रकाश में लिखते हैं :—"गर्मजल के स्नान से बल बढ़ता है । वात और कफका नाश होता है ।" हरिश्चन्द्र नामक कोई अनुभवी विद्वान वैद्य होगये हैं । उन्होंने लिखा है :—

अशीतेनाम्भसा स्नानं पयः पानं नवाः स्त्रियः ।
एतद्वो मानवाः पथ्यं स्निग्धमल्पं च भोजनम् ॥

"हे मनुष्यो! गर्मजल से स्नान करना, दूध पीना, जवान स्त्रीसे सम्भोग करना और घी वगैरः चिकने पदार्थों से बनाया हुआ थोड़ा भोजन करना ये सदा पथ्य अर्थात् हितकारी हैं ।"

गर्म जल से स्नान करने में इस बात पर खूब ध्यान रखना चाहिये कि गर्म जल शिर पर न डाला जाय ; क्योंकि शिर पर गर्म जल डालनेसे नेत्रों को नुकसान पहुंचता है ; किन्तु यदि वात और कफका कोप हो तो शिर पर गर्म जल डालने में हानि नहीं है । सुश्रुतजी लिखते हैं :—

उष्णेन शिरसः स्नानमहितं चक्षुषः सदा ।
शीतेन शिरसः स्नानम् चक्षुष्यमिति निर्दिशेत् ॥

(भा०)—"गर्मजल शिरपर डालकर स्नान करना नेत्रों को सदा हानिकारक है। शीतलजल सिर पर डाल कर स्नान करना नेत्रोंको लाभदायक है।"

आज कल जब कि धातुकी क्षीणता से १०० में ८० मनुष्योंका मिज़ाज गर्म रहता है शीतल जलसे स्नान करना लाभदायक है। विशेष कर गर्मी की ऋतुमें तो शीतल जलसे ही स्नान करना परम पथ्य है। जिनकी प्रकृति गर्म हो उन्हें सब ऋतुओंमें ठण्डे पानी से नहाना उचित है। शीतलजल के स्नान से उष्णवात (गर्मबादी) रोग, सोज़ाक, मृगी, उन्माद, रक्तपित्त, मूर्च्छा आदि में विशेष उपकार होता है। जिनका मिज़ाज सर्द हो या जिन्हें शीतल जलके स्नान से नुक़सान नज़र आता हो उन्हें गर्म जलसे ही नहाना चाहिये। गर्मी में दो बार और जाड़ेमें एक बार स्नान करना सबको हित है।

मनुष्यको सदा साफ़ जल से स्नान करना चाहिये। मैले कुओं, सड़े हुए तालाबों या नदी के बिगड़े जल में स्नान करना रोग मोल लेना है। यद्यपि गङ्गा पवित्र, पापनाशिनी और मोक्षदायिनी है तथापि जब उसका भी जल मैला हो तब उसमें भी स्नान न करना चाहिये। ऋषियोंने लिखा है,—"वर्षा ऋतुमें सब नदियां स्त्रियोंकी भांति रजस्वला होती हैं अतएव वर्षामें नदियों में स्नान न करे।" नदियां क्या रजस्वला होंगी? ऋषियोंने जो बात हम लोगोंके हक़में अच्छी समझी है उसमें धर्म की पख़ लगा दी है। नदियों के रजस्वला होने का यह मतलब है कि वर्षा में समस्त नदियां चढ़ती हैं। उनमें स्थान स्थान का मैला, कूड़ा करकट, अनेक प्रकारके सर्प आदि विषैले जानवर बह आते हैं। जिससे नदियों का पानी महा गन्दा हो जाता है। विषैले जीवों और पानी के ज़ोरसे मनुष्योंको रोग होने और कभी कभी जान जाने की भी सम्भावना

होती है। बस यही कारण है कि ऋषियोंने वर्षा में नदियोंको रजस्वला कहकर उनमें स्नान करना मना किया है। चरक संहिता-सूत्रस्थान के २७ वें अध्याय में लिखा है :—

वसुधाकीटसर्पाखुमलसंदूषितोदकाः ।
वर्षाजलवहानद्यः सर्वदोषसमीरणाः ॥

(भा०)—"मिट्टी, कीड़े, सांप और चूहे आदिके मल (विष्टा) से दूषित जल, वर्षाकाल में, नदियों में मिलजाता है इस वास्ते वर्षाकालीन सब नदियों का जल सब रोगोंकी खान होता है।"
सुश्रुत-संहिता-सूत्रस्थान के ४५ वें अध्याय में लिखा है :—

कीटमूत्रपुरीषाण्डशवकोथप्रदूषितम् ।
तृणपर्णोत्करयुतं कलुषं विषसंयुतम् ॥
योवगाहेत वर्षासु पिबेद्वापि नवं जलम् ।
स बाह्याभ्यन्तरान् रोगान् प्राप्नुयात् क्षिप्रमेव तु ॥

(भा०)—"कीड़े, मूत्र, विष्टा (पाखाना), जानवरोंके अण्डे, लाशें, कीथ, घास, पात, कूड़ा करकट वर्षा के जलमें मिले रहते हैं। वर्षाका नवीन जल गदला मैला और विषयुक्त होता है। जो मनुष्य उस जलमें स्नान करता है या उस नवीन जलको पीता है उसके बाहरकी फोड़े फुन्सी नारू (बाला) आदि चमड़े के रोग तथा भीतरके उदर विकार, अजीर्ण, ज्वर आदि रोग तत्काल होजाते हैं।"

आजकल इन बातों पर कोई विरला ही ध्यान देता है। कल-कत्ते में ही जहां की गङ्गा में घास पात सर्प आदि बह आने के सिवाय हजारों मल्लाह गङ्गाकी छाती पर मलमूत्र त्याग करते हैं लोग, घोर वर्षा में भी उसी गङ्गा में स्नान करते हैं। नतीजा यह निकलता है कि हजारों गङ्गास्नान करने वाले दाद, खाज खुजली

आदि चर्म रोगोंसे सड़ते दिखायी देते हैं। बुद्धिमान को चाहिये कि नदी, तालाब, कुआँ, बावड़ी या घर पर जहां स्नान करे साफ जलसे स्नान करे। क्योंकि जिस तरह मैले जलके पीने से रोग होते हैं उसी तरह मैले जलके स्नानसे भी अनेक बीमारियां होती हैं।

नहाने के समय सिर्फ २ लोटे जल डाल लेना ही अच्छा नहीं है। बदन को खूब मोटे कपड़े से रगड़े और मल मल कर नहावे ताकि शरीर का मैल अच्छी तरह उतर जावे। स्नान करके चटपट सूखे कपड़े से बदन पोंछले। अपनी गीली धोती से शरीर पोंछना उचित नहीं है। बदन पोंछ कर साफ़ धुले हुए कपड़े पहन ले। इस तरह स्नान करनेसे कोई रोग नहीं होता।

स्नान निषेध।

स्नानं ज्वरेऽतिसारे च नेत्रकर्णानिलार्तिषु।
आध्मानपीनसाजीर्णभुक्तवत्सु च गर्हितम्॥

(भा०)—"बुखार, अतिसार, नेत्ररोग, कानके रोग, वायुरोग पेट का अफारा, पीनस, अजीर्ण रोगवाले स्नान न करें तथा भोजन करके भी स्नान न करें।" कसरत करके, स्त्रीप्रसंग करके, या कहीं से आकर पसीनेमें तत्काल स्नान करना भी रोगकारक है।

अनुलेप

स्नान करके किसी न किसी तरह का लेप अवश्य करें। इससे चित्त प्रसन्न होता है और शरीर की बदबू वगैरः नाश होती है। सुश्रुत कहते हैं :—

सौभाग्यदं वर्णकरं प्रीत्योजोबलवर्द्धनम्।
स्वेददौर्गन्ध्यवैवर्ण्यश्रमघ्नमनुलेपनम्॥

(भा०)—"चन्दनादि किसी तरहका लेप करनेसे सौभाग्य होता है। शरीर का रङ्ग सुन्दर होता है। प्रीति, ओज* और बल बढ़ता है। पसीना थकाई, बदबू. विवर्णता इन सबका नाश होता है।

भावमिश्र भी कहते हैं कि लेपन करने से प्यास, मूर्छा (बेहोशी), दुर्गन्ध, पसीना, दाह (जलन) वगैरः नाश होते हैं। सौभाग्य और तेज बढ़ता है। चमड़े का रङ्ग निखरता है तथा प्रीति उत्साह और बल बढ़ता है। जिन लोगोंको स्नान करना मना है उनको अनुलेप (लेपन) करना भी निषेध (मना) है।

अब हम नीचे भावप्रकाशसे यह दिखलाते हैं कि कौनसी ऋतु में कौनसा लेप करना हितकारी है।

शीतकाल यानी जाड़े के मौसम में केशर, चन्दन और कालो-अगर इन तीनों को घिसकर लेप करे, क्योंकि ये लेप गर्म है और वात कफका नाशक है।

ग्रीष्म ऋतु यानी गर्मी के मौसम में चन्दन, कपूर और सुगन्ध-वाला इन तीनोंका लेप करे; क्योंकि ये चोजें सुगन्धित और खूब शीतल हैं।

वर्षाकाल यानी मौसम बरसात में चन्दन, केशर और कस्तूरी को घिसवाकर लेप करे; क्योंकि ये लेप न तो गर्म है न शीतल अर्थात मातदिल है।

अञ्जन लगाना।

आज कल अञ्जन लगाने की चाल घटती जाती है। अञ्जन या सुर्मा लगाना एक प्रकार का जनाना शृङ्गार या आज कलके फैशन के बखिलाफ़ समझा जाता है। कोई कुछ ही क्यों न

*रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र (वीर्य्य) ये सात धातु हैं। इनके सार को 'ओज' कहते हैं। जैसे दूध में घी सार है वैसेही धातुओं में 'ओज' सार है।

समझें लेकिन सुर्मा लगानेसे अनेक प्रकार के नेत्र-रोग, निस्सन्देह, नष्ट होजाते हैं। नियम पूर्व्वक सुर्मा लगाने से किसी प्रकार की आँखों की बीमारी नहीं होती और जवानी में ही चश्मा लगाने की ज़रूरत नहीं होती।

सफ़ेद सुर्मा नेत्रों के लिये परम हितकारी है। इसे नित्य लगाना चाहिये। इसके लगाने से नेत्र मनोहर और सूक्ष्म वस्तु देखनेवाले होजाते हैं। सिन्ध देश में उत्पन्न हुआ काला सुरमा, यदि शुद्ध भी न किया जाय तो भी, उत्तम होता है। इसके लगाने से आँखों की जलन, खाज, और कीचड़ वग़ैरः आना नाश होजाता है। आँखों से जल बहना और उनकी पीड़ा भी दूर होजाती है। आँखें सुन्दर रसीली हो जाती हैं। नेत्रों में हवा और धूप सहने की शक्ति आजाती है और उन में कोई रोग नहीं होता।

निषेध—रातमें जागा हुआ, वमन करनेवाला, जो भोजन कर चुका हो, ज्वर रोगी, और जिसने सिरसे स्नान किया हो उनको सुरमा लगाना नुक़सानमन्द है।

नेत्र-रक्षक उपाय।

अञ्जन लगाना निस्सन्देह लाभदायक है; किन्तु खाली अञ्जन ही लगाने से नेत्र-रक्षा नहीं हो सकती। जिन भूलोंके कारण से नेत्र-रोग होते हैं अर्थात् जो नेत्र-रोगोंके हेतु हैं बुद्धिमानों को उन से भी बचना परमावश्यक है; क्योंकि कारण के नाश हुए बिना कार्य्यका नाश होना असम्भव है। सुश्रुत-उत्तरतन्त्र में लिखा है:—"गर्मीसे तपते हुए शरीर से एकाएक शीतल जलमें घुस जाने या धूप से तपते हुए सिरपर ठण्डापानी डालने—दूर की चीज़ें बहुत ध्यान लगाकर देखने—दिनमें सोने और रातको जागने या नींद आनेपर न सोने—अत्यन्त रोने या बहुत दिन तक रोने—रञ्ज या शोक करने—क्रोध या गुस्सा करने—क्लेश सहने—चोट वग़ैरः लगजाने—अत्यन्त मैथुन करने

बहुत ही स्त्री प्रसंग करने—सिरका, आरनाल नामक कांजी, खटाई, कुलथी और उड़द इनके अधिक खाने—मल, मूत्र और अधोवायु आदि वेगों* के रोकने—अधिक पसीना लेने—अधिक धूल यानी आँखों में धूल गिरने—अधिक धूपमें फिरने—आती हुई वमन यानी क़य रोकने—अत्यन्त वमन (उल्टी) करने—किसी चीज़ की भाफ़ लेने या ज़हरीली चीज़ों की भाफ़ लेने—आँसुओं के रोकने—बहुत ही बारीक चीज़ें देखने इत्यादि कारणों से वात आदि दोष, कुपित होकर, अनेक प्रकार की आँखों की बीमारियां पैदा करते हैं।"

"भावप्रकाश"में ऊपर लिखे हुए कारणोंके सिवाय "बहुत तेज़ सवारी पर चढ़ने से भी नेत्र-रोग होना लिखा है।" इलाजुल गुर्बा में लिखा है :—"आँखों को भाप, धूआँ और गन्दी पवन से बचाना चाहिये। ज़ियादः रोना, ज़ियादः मैथुन करना, और अधिक नशा करना भी नेत्रों को हानिकारक है। हमेशा सूक्ष्म वस्तुओंका देखना भी मना है।" इनके सिवाय बहुत महीन अक्षरों के लिखने पढ़ने, सिरको रूखा रखने यानी शिर पर तेल न लगाने, सन्ध्या समय पढ़ने, अति परिश्रम करने, दिमाग़ में अधिक सर्दी या गर्मी पहुँचने, लेटे लेटे गाने या पढ़ने लिखने, किरासिन तेल की रोशनी से पढ़ने लिखने आदि कारणोंसे भी नेत्र-ज्योति मन्दी पड़ जाती है। उपरोक्त सब कारणोंको टालना नेत्र-रक्षा का पहिला उपाय है।

(२) हरी चीज़ें देखने से नेत्रों का तेज बढ़ता है ; इसवास्ते बाग़ों में सैर करना या दूसरी हरी चीज़ें देखना आँखों के लिये लाभदायक है।

(३) ऋतु के अनुसार सिर पर चन्दन आदि का लेप करना

*वेग—अधोवायु, विष्ठा, मूत्र, जमाही, अश्रुपात, छींक, डकार, वमन, शुक्र, भूख, प्यास, श्वास और निद्रा ये तेरह शारीरिक वेग हैं इनके रोकनेसे अनेकप्रकार के रोग होते हैं।

भी फ़ायदेमन्द है। यही कारण है कि ऋषियोंने चन्दन आदिके तिलक लगाने को धर्ममें भी दाखिल कर दिया है।

(४) हर रोज़ दिनमें तीन दफ़े ठण्डे जलसे मुँहको भर कर आँखों को ठण्डे पानीसे छिड़कना या जितनी बार पानी पीना उतनी ही बार मुँह धोना और आँखोंमें शीतल जलकी छपकी देना भी आँखो के लिये मुफ़ीद है।

(५) मस्तकमें रोज़ तेल लगाना चाहिये यदि रोज़ न भी हो सके तो तीसरे चौथे दिन तो अवश्य ही लगावें। विशेष कर हजामत बनवाकर तत्काल सिरमें तेल लगावें। इस तरह तेल लगाने से नेत्रोंको बहुत उपकार होता है।

(६) सिर पर मक्खन रखने और मक्खन मिश्री खाने से भी नेत्रोंको बहुत लाभ होता है। भावप्रकाश पूर्व-खण्ड में लिखा है:--

दुग्धोत्थं नवनीतं तु चक्षुष्यं रक्तपित्तनुत्।
वृष्यं बल्यमतिस्निग्धं मधुरं ग्राहि शीतलम्।

"दूधसे निकाला हुआ मक्खन—नेत्रोंको हितकारी, रक्तपित्त* नाशक, धातु पैदा करने वाला, बलदायक, अत्यन्त चिकना, मीठा ग्राही और शीतल है।"

(७) पैरों को खूब धोकर साफ़ रखने, सदा जूता पहनने और पैरोंमें तेलको मालिश करने से आँखों को बहुत लाभ होता है। इस में आश्चर्य की कोई बात नहीं है। पांव की दो मोटी मोटी नसें मस्तक में गई हैं और बहुत सी नसें आँखों तथा

*रक्तपित्त—इस रोगमें अति मैथुन, अति परिश्रम और शोक आदि कारणोंसे पित्त कुपित होकर खूनको बिगाड़ देता है, तब खून अथवा रुधिर नाक, कान, नेत्र, मुख ऊपरके रास्तोंसे निकलता है या लिङ्ग, गुदा और योनि नीचेके रास्तों से निकलता है। और जब बहुत ही कुपित होता है, तब नीचे ऊपरके दोनों रास्तों और तमाम शरीरके छेदोंसे निकलता है।

पहुँची हैं इसी कारण से पांवों में जो चीजें मालिश की जाती हैं, जो सींची जाती हैं या जिस चीज़का लेप किया जाता है वह सब उन नसों के द्वारा आंखों में पहुँचती हैं।

(८) हमारे यहां भोजन के पहले पीछे, मलमूत्र त्यागकर, और सोते समय जो पैर धोनेकी चाल है वह आंखों के लिये लाभदायक समझ कर ही चलाई गयी है। दिनमें कई बार पैर धोनेसे आंखोंमें बड़ी तरावट पहुँचती है और तत्काल चित्त प्रसन्न होजाता है।

(९) त्रिफले (हरड़, बहेड़ा, आमला) के जलसे नेत्र धोनेसे आंखोंकी ज्योति मन्दी नहीं होती। त्रिफलेके काढ़ेसे आंखें धोनेसे नेत्र रोग नाश हो जाते हैं।

(१०) नित्य आमलोंको मल कर स्नान करनेसे आंखोंका तेज बढ़ता है।

(११) कालेतिलोंको, पीस, सिरमें मल कर स्नान करनेसे नेत्र उत्तम हो जाते हैं और वायुकी पीड़ा शमन हो जाती है।

(१२) बुढ़ापेमें भेजेकी कमज़ोरी और अग्नि मन्द होनेसे भी अक्सर नेत्र-ज्योति कम हो जाती है। बुद्धिमानको चाहिये कि पहलेसे ही ऐसे उपाय करता रहे कि दिमाग़ी ताक़त कम न हो तथा अग्नि सदा दीप्त रहे।

(१३) महीनेमें एक दो बार किसी प्रकारकी नस्य या सूंघनी सूंघ कर भेजेका मल निकालते रहनेसे भी आंखोंको नुक़सान नहीं पहुँचता।

(१४) "इलाजुलगुर्बा" में दिनमें कई बार सिरमें कंघी करना यानी बाल बहाना भी नेत्र-ज्योति को उत्तम लिखा है। विशेषकर बूढ़ोंके लिये तो बहुतही उत्तम लिखा है।

(१५) हकीम शेखुल् रईसने कहा है कि साफ़ पानीमें पैरना और उसमें आंखें खोलना भी लाभदायक है।

(१६) नाककी बाल उखाड़नेसे भी नेत्र-ज्योति कमज़ोर होजाती है इसवास्ते नाककी बाल कदापि न उखाड़ने चाहियें।

(१७) वृद्धवाग्भट्टने कहा है—"मल मूत्र अधोवायु आदि वेगोंको जो नहीं रोकते, अञ्जन लगाने और नस्य सूंघने का जो यथा योग्य अभ्यास रखते हैं, क्रोध और शोकको जो त्याग देते हैं उन मनुष्योंको तिमिर रोग नहीं होता।"

(१८) देशी तेलके दीपक जलाके पढ़ने लिखनेसे आंखों को बहुत लाभ होता है किन्तु मिट्टीके तेलको लेम्प वगैरः जलाकर पढ़ने लिखनेसे मनुष्य जवानीमें ही अन्धा सा हो जाता है।

(१९) "वृद्धवाग्भट्ट"में घी पीना भी नेत्रोंके लिये अच्छा लिखा है। वास्तवमें, घी नेत्रोंके लिये परम उपकारी है। भाव प्रकाश में लिखा है:—

गव्यं घृतं विशेषेण चक्षुष्यं वृष्यमग्निकृत्।
स्वादु पाककरं शीतं वात पित्त कफापहम्॥

"गायका घी, विशेष करके, आंखोंके लिये हितकारी है। वृष्य, अग्नि-प्रदीपक, पाकमें मधुर, शीतल तथा वात, पित्त और कफ़ नाशक है। अगर रोज़ रोज़ न बन पड़े तो कभी कभी तो गायका ताज़ा घी अवश्य ही पीना चाहिये।"

हमने ऊपर जितने नेत्र-रक्षाके उपाय लिखे हैं उनको ध्यान में रखना परमावश्यक है; मनुष्य शरीरमें जितने अङ्ग हैं उनमें नेत्र सर्वोत्तम अङ्ग हैं। किसीने बहुत ही ठीक कहा है "आंख है तो जहान है।" नेत्रों सेही जगत है, नेत्र न होनेसे जगत सूना है। वृद्ध वाग्भट्ट में लिखा है:—

चक्षुरक्षायां सर्वकालं मनुष्यै-
र्यत्नः कर्त्तव्यो जीविते यावदिच्छा।

व्यर्थालोकोयं तुल्यरात्रिंदिवानां
पुँसामंधानां विद्यमानेपि वित्ते ।

(भा०)—"मनुष्योंको जबतक जीनेकी इच्छा हो तब तक हमेशा नेत्रोंकी रक्षाके लिये कोशिश करते रहना चाहिये; क्योंकि अन्धा होजाने पर दिन रात बराबर हैं। अन्धोंको, धन होने पर भी, संसार वृथा है ।

कंघी करना

कंघी करने यानी कंघे कंघी द्वारा बाल बनानेसे सिरका मैल और धूल वगैर: नष्ट हो जाते हैं। जो शौकीन अधिक बाल रखते हों उन्हें तो कंघी अवश्य ही करनी चाहिये ।

दर्पणमें मुख देखना

आदर्शालोकनं प्रोक्तं माङ्गल्यं कान्तिकारकम् ।
पौष्टिकं बल्यमायुष्यं पापालक्ष्मीविनाशनम् ॥

इसका यही मतलब है कि शीशेमें मुख देखना मङ्गल रूप है ; कान्तिकारक, पुष्टिकरता, बल और आयु (उम्र) को बढ़ाने वाला तथा दरिद्रको नाश करनेवाला है ।

कपड़े पहनना

मनुष्य को चाहिये कि अपनी भरसक मैले कपड़े कभी न पहने। मैले कपड़े पहनने से अनेक रोग होजाते हैं। मैले और गलीज़ कपड़े वाले को कोई पास नहीं बैठने देता। उसका

सब जगह निरादर होता है। मैले वस्त्रोंमें जूं पड़ जाती हैं। आदमी कुरूप मालूम होता है। मैला वस्त्र दरिद्रकी निशानी है। हम यह नहीं कहते कि आप खासा, मलमल, नैनसुख ही पहनें। आप चाहें देशी रेजी के ही कपड़े पहनिये मगर उनको साफ़ अवश्य रखिये।

स्वच्छ निर्मल वस्त्र पहनने से चित्त प्रसन्न रहता है। आरोग्यता बढ़ती है। जिल्द को बीमारी नहीं होती। साफ़ कपड़े पहिनने वाले से कोई घिन नहीं करता। सब आदर से बिना सङ्कोच पास बिठाते हैं। भावमिश्र वैद्य लिखते हैं कि निर्मल और नवीन वस्त्र कीर्त्ति को देने वाले हैं। काम (स्त्री इच्छा) को प्रदीप्त करते हैं। आयु (उम्र) को बढ़ाते हैं। आनन्द का उदय करते हैं तथा शोभा बढ़ाते हैं। शरीर के चमड़े को हितकारी, वशीकरण और रुचि उत्पन्न करने वाले हैं।

अब आगे हम यह लिखते हैं कि मनुष्य को किस ऋतुमें कौनसा या किस रङ्गका वस्त्र पहनना हितकारी है। भावप्रकाश में लिखा है :——

> कौशेयौर्णिकवस्त्रं च रक्तवस्त्रं तथैवच।
> वातश्लेष्महरं तत्तु शीतकाले विधारयेत्॥
> मेध्यं सुशीतं पित्तघ्नं काषायं वस्त्रमुच्यते।
> तद्धारयेदुष्णकाले तच्चापि लघुशस्यते॥
> शुक्लं तु शुभदं वस्त्रं शीतातपनिवारणम्।
> न चोष्णं न च वा शीतं तत्तु वर्षासु धारयेत्॥

शीतकाल में, रेशमी, ऊनी और लालकपड़े पहने; क्योंकि यह बादी और कफ को हरनेवाले हैं। गरमी के मौसम में, जोगिया रङ्ग के कपड़े पहने; क्योंकि ये पवित्र शीतल और पित्त

नाशक हैं। वर्षा ऋतुमें, सफेदकपड़े पहने; क्योंकि ये सर्दी और धूप दोनों का निवारण करते हैं और शुभदायक हैं। सफ़ेद वस्त्र न गर्म हैं न शीतल अर्थात् मातदिल हैं।

वस्त्र, जहां तक बन पड़े, स्वदेशी ही पहनने चाहियें। विदेशी वस्त्र जिन मसालों से तैयार होते हैं वह बहुत ही घृणा योग्य हैं। इस वास्ते विदेशी वस्त्रों से हमारी आरोग्यता यानी तन्दुरुस्ती को भी नुक़सान पहुँचता है। विदेशी वस्त्रों को पहन कर हम देवी देवताओं की पूजा उपासना भी नहीं कर सकते। आजकल अधिकांश लोग बिलकुल अन्धे होगये हैं। जान बूझ कर भी वलायती घृणित वस्त्र पहनते हैं। उन्हीं को मन्दिरोंमें पहुँचाते हैं। उन्हीं से ठाकुरों की पोशाक आदि तैयार कराते हैं। वलायती चीनी का ही चर्णामृत आदि बनाते हैं। शायद इसी कारणसे हिन्दुओंके देवता नाराज़ होगये हैं और वह प्राचीन समय के अनुसार कभी परचा नहीं देते। अब भी समय है कि हिन्दू अपनी भूल सुधारें।

फूल धारण करना

ईश्वर ने अपनी अनुपम सृष्टिमें यों तो एक से एक अद्भुत पदार्थ रचे हैं परन्तु उन सबमें उसने फूल निहायत ही बढ़िया, मनोहर और चित्ताकर्षक पदार्थ बनाया है। फूलों की अपूर्व सुन्दरता, मनोहर सुगन्ध आदि पर किस का मन मुग्ध नहीं होता। फूल वह पदार्थ है जिसके दर्शन मात्र से देवता भी प्रसन्न होजाते हैं फिर भला मनुष्यों की कौन बात है। राजा महाराजा अमीर उमराव आदि फूलों की मालाएं गुँथा कर पहनते हैं। इनके गुलदस्ते बनवाकर हाथों में रखते हैं। फूलों की शैय्या बनवाते हैं। रानी महारानी और धनिकों की स्त्रियां

इनके गजरे हार आदि बनवाकर धारण करती हैं। फूलों की प्रशंसा में जगत् के कवियोंने अपना थोड़ा बहुत अमूल्य समय अवश्य खर्च किया है। हिन्दू अहिन्दू, जैन, बौद्ध, ईसाई मुसलमान आदि समस्त पृथ्वी के नरनारी इनको पसन्द करते और चावसे काममें लाते हैं।

सुन्दरता, मनोहरता और सुगन्ध के सिवाय फूलों के सूँघने, पहनने और खाने से अनेक प्रकार के रोग भी नष्ट होजाते हैं। भावमिश्र लिखते हैं:—

सुगन्धिपुष्पपत्राणां धारणं कान्तिकारकम्।
पापरक्षोग्रहहरं कामदं श्रीविवर्द्धनम्॥

"सुगन्धित फूल पत्तों के पहनने से कान्ति बढ़ती है; पाप (रोग) दूर होते हैं: राक्षस और ग्रह आदि की पीड़ा नाश होती है; कामाग्नि तेज़ होती है और लक्ष्मी बढ़ती है।" इस वास्ते हर मनुष्य को यथासामर्थ फूलों को व्यवहार में लाना उचित है। फूल बहुत प्रकार के होते हैं। नीचे हम कुछ उत्तमोत्तम फूलोंके गुण और उन की प्रकृति वग़ैरः भी लिख देते हैं जिससे शौक़ीन, कामी और आरोग्यता, चाहनेवाले उनको ऋतु अनुसार काम में लावें और लाभ उठावें।

कुछ श्रेष्ठ फूलों के रूप और गुण।

गुलाब— दो प्रकार का होता है। एक तो देशी दूसरा परदेशी। देशी गुलाब में महासुगन्ध होती है। इस के फूल गुलाबी होते हैं और चैत बैशाख में आते हैं। परदेशी गुलाब बारहों महीने होता है और इसके फूल लाल, गुलाबी, सफ़ेद और पीले भांति भांति के होते हैं। गुलाब शीतल (ठण्डा), हृदय को प्रिय, ग्राही, वीर्य-

वर्धक, बलका, वर्ण (रंग) को उत्तम करनेवाला। त्रिदोष और खून विकार को नष्ट करता है।

चमेली—इसके फूल बहुत छोटे २ और कोमल पँखुरियोंके होते हैं। फूलों का रङ्ग सफेद और पँखुरी के नीचे नोक पर कुछ कुछ लालीसी होती है। इस की बन्द कलियाँ जब खिलती हैं तब परमानन्द देनेवाली मन्द मन्द सुगन्ध आती है। यह प्राय: चौमासे में बहुत खिलती है। इसके फूलोंका तेल बहुत ही उत्तम होता है। चमेली तासीर में गर्म होती है। मस्तक-रोग, नेत्र-रोग, बादी, मुखरोग और खून-विकारादि में इससे बहुत लाभ होता है।

जुही—यह दो तरह की होती है। एक सफेद फूलवाली और दूसरी पीले फूलवाली। इसके फूल चमेली से मिलते हुए किन्तु कुछ छोटे होते है। फूलकी पँखुरियाँ सफेद और महा सुगन्धि युक्त होती हैं। पीली जुही की सुगन्ध के आगे तो गन्धराज भी मलिन जान पड़ता है। जुही शीतल होती है। कफ और वातकारक होती है; किन्तु पित्त, घाव, खूनविकार, मुखरोग, दन्तरोग, नेत्ररोग, मस्तकरोग और विष नाशक है।

चम्पा—इसके फूल पीले और मनोहर होते हैं। सुगन्ध अत्यन्त मन्दी होती है। चम्पा के वृक्ष मालवे में बहुत होते हैं। चम्पा मधुर, शीतल और विष, है तथा कोढ़, मूत्रकृच्छ और खून-विकार आदि रोग नाशक है।

मौलसरी-बंगला में इसे बकुल कहते हैं। इसके फूल सफेद, सूक्ष्म और चक्राकार होते हैं। उन में महासुगन्ध आती है। फूलों के सूखने पर भी सुगन्ध कम नहीं होती। इसकी तासीर गर्म नहीं है।

मोतिया—इसे संस्कृत में मल्लिका कहते हैं। इसका फूल सफ़ेद होता है। इसमें छह पँखुरियाँ होती हैं। खिलने पर इस से महासुगन्ध फैलती है। मोतिया तासीर में गर्म होता है। नेत्र-रोग, मुख-रोग और कोढ़ आदि कितने ही रोगों को नाश करता है।

केवड़ा—संस्कृत में इसे केतकी कहते हैं। केवड़ा हलका मधुर और कफ नाशक है। पीला केवड़ा गर्म और आँखों को हितकारी है। पत्तों के बीच में मोटी बाल सी निकलती है। उसकी सुगन्ध बहुत ही मनोहर और तेज़ होती है। उसी को केवड़े का फूल कहते हैं। पीली केतकी के फूल महासुगन्धित होते हैं। खुशबू के लिये यह समस्त जगत् में प्रसिद्ध है।

माधवी—इसे वसन्ती भी कहते हैं। इसके फूल चमेली के समान होते हैं। सुगन्धि का तो कहना ही क्या है; जिस बाग़ में होती है वह बाग़ का बाग़ सुगन्धि का भण्डार बन जाता है।

कमल—तीन प्रकार का होता है। लाल, नीला, और सफ़ेद; तासीर में शीतल; वर्ण को उत्तम करनेवाला, रुधिर विकार, फोड़ा, विष आदि रोगों का नाशक है। कमल गहरे निर्मल जलके तालाबों में पैदा होता है। पत्ते बड़े २ गोल और चिकने होते हैं जिन पर पानी की बूँद नहीं ठहरती।

गहने पहनना

गहने या ज़ेवर पहनने की चाल हिन्दुस्तान में सब देशों से अधिक है। इस में शक नहीं कि इनके पहनने से कुछ न कुछ सुन्दरता अवश्य बढ़ जाती है। अंगरेज़ भी छल्ला या सोनेकी बढ़िया अङ्गूठी अवश्य पहने रहते हैं। हमारे देशवासियोंकी माफ़िक जञ्जीर तोड़े कण्ठो वग़ैरः नहीं लटकाते। मेमें सोनेकी चूड़ियाँ मोतियों की माला पहनती हैं। पारसिन भी हल्की सी सोने की चूड़ियाँ पहनती हैं। बङ्गालिन और गुजरातिनें भी थोड़ा २ सोफ़ियानी ज़ेवर पहनती हैं। जङ्गली क़ौमें चिरमिटी पीतल और कौड़ियोंके ही गहने पहनती हैं। मतलब यह है कि जहाँतक नज़र दौड़ाते हैं यही नज़र आता है कि समस्त पृथ्वी के निवासी थोड़े या बहुत गहने अवश्य पहनते हैं; लेकिन हिन्दुस्तान का नम्बर सब से बढ़ा हुआ है। जिस में भी राजपूताना और युक्त प्रान्तका नम्बर सब से अव्वल है।

पुरुषों को स्त्रियों की माफ़िक गहने लादना उतना अच्छा नहीं मालुम होता। बिना जड़ा या जड़ा हुआ सोनेका छल्ला अँगूठी पहनना बुरा नहीं है। इससे कुसमय में बड़ा काम निकलता है। बालकों को, आज कल, आभूषण पहनाना और उनकी जानका दुश्मन होना एक है। ऐसा कौनसा हफ़्ता जाता है जिस में गहनों के कारण बालकोंके जान जाने की ख़बर किसी न किसी अख़बार में न छपती हो। ख़ैर, इन झगड़ों को छोड़कर हम यही दिखलाते हैं कि कौन २ सी धातु या कौन २ से रत्न मनुष्यों को लाभदायक अर्थात् उनके स्वास्थ के लिये हितकारी हैं।

भावप्रकाशमें लिखा है:—"शरीर में दिल-पसन्द गहने ……। सोने के गहने परम पवित्र, सौभाग्य और सन्तोष दायक

हैं। रत्न जटित यानी जवाहिरात से जड़े हुए गहने धारण करने से ग्रहों की पीड़ा, दुष्टों की नज़र और बुरे सुपनों का नाश होता है तथा पाप और दुर्भाग्यता से शान्ति मिलती है।"

* निर्मल माणिक धारण करने से सूर्य्य की पीड़ा, मोती से चन्द्रमा की पीड़ा, मूंगे से मङ्गलकी पीड़ा, पन्ने से बुध की, पुखराज से वृहस्पतिकी, हीरे से शुक्र की, नीलम से शनि की,

---

* नोटः—

माणिक—हिन्दीमें इसे चुन्नी, मानिक और लाल कहते हैं। यह लाल रङ्गका होता है।

मोती—यह सीप, शंख, हाथी, सूअर, सर्प, मछली, मेंढक और बाँससे पैदा होता है; परन्तु आजकल प्रायः सीपसे ही मोती निकाला जाता है। जो मोती तारेके समान चमकदार, चिकना, मोटा, बिना छेदवाला, चन्द्रमाके समान सफ़ेद, निर्मल (साफ़) और तोलमें भारी होता है वही मोती क़ीमती होता है। ऐसाही मोती खाना और पहनना चाहिये। जो मोती रङ्गमें फीका, टेढ़ा मेढ़ा, चपटा, ललाई लिये, मछलीकी आँखके समान, रूखा, ऊँचा नीचा होता है उसे न तो पहनना चाहिये न खाना चाहिये।

मूँगा—इसे प्रवाल, लतामणि आदि भी कहते हैं। इसके पेड़ समुद्रमें होते हैं। जो मूँगा कुँदरूके फलके माफ़िक लाल, गोल, चिकना, चमकदार, बिना छेदवाला हो वही उत्तम है। वही खाने पहनने लायक है। जो मूँगा पीतलके समान, रङ्गमें फीका, टेढ़ा मेढ़ा, बारीक छेदवाला, रूखा और कालासा हो वह न तो खाने लायक है न पहनने लायक है। मोती, मूँगेकी भस्म खानेसे बल वीर्य खूब बढ़ता है तथा राजयक्ष्मा उरःक्षत आदि भयानक रोग नाश हो जाते हैं।

पन्ना—हरा होता है। इसे मरकत, हरिन्मणि, बुधरत्न भी कहते हैं।

पुखराज—पीला होता है। इसे पुष्पराग, गुरुरत्न, पीतमणि आदि भी कहते हैं।

नीलम—नीला होता है।

हीरा—चार तरहका होता है। सफ़ेद, लाल, पीला और काला। सफेद हीरा सर्व सिद्धि-दायक होता है और रसायनके काममें आता है। अट्ठा पहल, गोल, कान्तियुक्त, जिसमें रेखा या बिन्दु न हो वह हीरा उत्तम होता है। यह औषध और मार कर खाया भी जाता है।

गोमेद से राहु को, और लहसुनिये से केतु को पीड़ा शान्त होती है।

हम तो इन बातों को नहीं जाँच सके हैं परन्तु जयपुर के कितने ही अच्छे २ जौहरियों से, जो इन रत्नों में से कोई न कोई रत्न धारण किये रहते थे, इस विषय में पूछताछ की थी। उन लोगोंने उपरोक्त बातें सच होने की गवाही दी थी।

पादुका (खड़ाऊँ) धारण

भोजन के पहले या पीछे खड़ाऊँ पहने; क्योंकि इससे पाँव के रोग दूर होते हैं और शक्ति बढ़ती है। इनका पहनना नेत्रों को हितकारी है और उम्रका बढ़ानेवाला है।

पाँव धोना

हिन्दुस्तान में भोजनके पहले और भोजनके बाद पाँव धोनेकी रवाज है। बहुत लोग सोने से पहले भी पैर धो लेते हैं। यह चाल बहुत अच्छी और आरोग्यता बढ़ानेवाली है। इस में शक नहीं है कि दिन में दो चार बार शीतल जल से नेत्र मुख और पैर धोनेवाले को नेत्र-रोग कम होते हैं। हम गर्म देश के रहनेवालों को हमारे ऋषि मुनियों के बनाये हुए नियम सर्वदा हितकारी हैं अंगरेज़ों की नक़ल करना यानी उनकी तरह कोट पतलून और बूट धारण किये हुए ही भोजन करना हम लोगों को सर्वदा अहितकारी है। देखिये महर्षि सुश्रुत क्या लिखते हैं :—

पाद प्रक्षालनं पादमलरोगश्रमापहम
चक्षुः प्रसादनं वृष्यं रक्षोघ्नं प्रीतिवर्द्धनम्

अर्थात् पैर धोनेसे पैरोंका मैल, पैरोंके रोग, और थकान दूर होते हैं। आँखोंको सुख होता है। बल बढ़ता है। राक्षसों का नाश होता है और प्रीति होती है। इस वास्ते सुख और आरोग्यता चाहनेवाले भोजनके आगे पीछेके सिवाय एक दो बार और भी शीत जलसे पैर धो लिया करें।

आहार हमारा प्राण रक्षक है।

हम जो कुछ आहार करते हैं उसे प्राणवायु* लेजाकर आमाशय* में पहुँचाती है। मीठे, खट्टे, खारी, कड़वे, चरपरे और कसैले छः रस होते हैं। इन रसोंमेंसे किसी प्रकारका रस क्यों न खावें आमाशयमें जाकर वह मीठा और झागदार हो जाता है। फिर वही आहार कुछ गिरकर पाचकपित्त*की गर्मीसे पककर खट्टाभी जाता है। पीछे इस खट्टे आहारको नाभीमें रहनेवाली समान वायु ग्रहणीमें पहुँचा देती है। इस ग्रहणी में कोठेकी अग्नि अर्थात् पाचक पित्त रूप अग्निसे आहार पचता है पचते समय अच्छी तरह पचनेसे स्वाद और स्निग्ध होजाता है। कटु या चरपरा हो जाता है इस प्रकार पके हुए आहारके सारको रस कहते हैं। यह रसही भोजन

५७-५८ सफे के फुट नोटमें देखिये *

का सूक्ष्म सार है। यह रस ही तेज स्वरूप है। सारहीन भाग मलद्रव कहलाता है। इसका जलीय भाग बस्तिमें जाता है। येही मूत्र है। शेष जो किट्ट (मल) रहा उसको विष्टा कहते हैं।

इस रसको समान वायु लेजाकर हृदयमें स्थापन करती है। इससे इसका स्थान हृदय है। हृदयसे दश नाड़ियां नीचे, दश ऊपर और चार तिरछी गई है। आहारका सार रूप रस इन्हीं नाड़ियोंमें होता हुआ सम्पूर्ण धातुओंको पुष्ट करता है, शरीरको बढ़ाता, धारण करता और जीवित रखता है। अगर यह रस मन्दाग्निसे अधकच्चा रहजाता है तो खट्टा या चरपरा हो जाता है तब अनेक रोगोंको पैदा करता है। तथा विषके समान मार भी डालता है।

यही जलरूप रस जब यकृत स्थान यानी कलेजे और तिल्लीमें पहुँचता है तब रंजक पित्तकी गर्मीसे रुधिर (खून) हो जाता है। यह खून सम्पूर्ण शरीरमें रहता है। खून जीवका सर्वोत्तम आधार है।

जिस तरह रस रुधिरके स्थानमे पहुंच कर रुधिर होजाता है उसी तरह मांस स्थानमे गया हुआ रुधिर मांस हो जाता है। खून अपनी अग्निसे पककर और वायुसे गाढ़ा होकर मांस बन जाता है। इसी तरह मांससे मेद यानी चरबी बन जाती है। मेदसे हड्डी बनती है। हड्डीसे मज्जा या मींगी बन जाती है। अन्तमें मज्जासे शुक्र यानी वीर्य बन जाता है। इसी क्रमसे स्त्रियों-का आर्त्तव बनजाता है।

सुश्रुतजी कहते हैं:—

तत्रैषां धातुनामन्नपानरसः प्रीणयिता।

रसजं पुरुषं विद्याद्रसरक्षेत्प्रयत्नतः॥

अन्नात्पानाच्च मतिमानाऽऽचाराच्चाऽप्यऽतंद्रितः॥

"अन्नपानसे पैदा हुआ रस ही इन सब धातुओंके पोषण करने-वाला है। मनुष्य शरीरको रससे ही पैदा हुआ समझो। इस-वास्ते यत्न करके खाने पीने और आचार व्यवहारसे सावधान होकर बुद्धिमानको रसको खूब रक्षा करनी चाहिये।"

* आहारके अच्छी भाँति पचनेसे रस बनता है। रससे रक्त यानी खून बनता है; रक्तसे माँस बनता है; माँससे मेद यानी चरबी बनती है; मेदसे अस्थि यानी हड्डी बनती है; हड्डीसे मज्जा बनती है और मज्जासे शुक्र धातु यानी वीर्य्य बनता है। रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र ये गिन्तीमें सात हैं। इन सातों को धातु †कहते हैं क्योंकि यह स्वयं मनुष्यमें स्थित रहकर देहको धारण करते हैं। इनमें से एकके बिना भी हमारी ज़िन्दगी क़ायम नहीं रह सकती। इनके क्षय होनेसे जीवका क्षय होता है। सुश्रुतने इन सातोंमें रुधिर यानी खूनको मुख्य यानी प्रधान माना है और इनकी बढ़ती घटती रुधिरके आधीन मानी है। अंग्रेज़ी में भी कहते हैं कि (Blood is the life) खूनही ज़िन्दगी है। भावप्रकाशमें लिखा है:—

---

* आहार यानी भोजनके सारको रस कहते हैं। आहारके सारहीन पदार्थ को मलद्रव कहते हैं। इसमेंसे पतला जलीय पदार्थ, मूत्रवाहिनी शिरा (नस) द्वारा, बस्ति यानी मूत्रकी थैलीमें आकर मूत्र होजाता है और जो बाकी किट्ट रहता है वह मलाशयमें आकर विष्ठा यानी पाखाना हो जाता है। अपान-वायु इन दोनों को मूत्रेन्द्रिय और गुदा द्वारा बाहर निकाल देती है।

† जैसे आहारका मल पेशाब और पाखाना होता है वैसेही रस, रक्त, माँस आदिके भी मल होते हैं। रसका मैल कफ है। खूनका मैल पित्त है। माँसका मैल कानका मैल है। मेदका मैल वह है जो जीभ, दाँत और शिश्न यानी मूत्रेन्द्रिय पर जमा होता है तथा पसीना भी मेदका ही मैल है। हड्डीका मैल नाखून, बाल और रोएं हैं। मज्जाका मैल आँखों का मैल और मुँहकी चिकनाई है; शुक्र या वीर्य्यका मैल मुँहके मुँहासे और दाढ़ीमूँछ हैं।

जीवो वसति सर्वस्मिन देहे तत्र विशेषतः ।
वीर्य्ये रक्ते मले यस्मिन क्षीणेयाति क्षयं क्षणात् ॥

"जीव सारे शरीरमें रहता है, विशेष करके वीर्य्य, खून और मल में रहता है। जिस समय इनका क्षय (नाश) होता है उसी समय जीवका भी क्षय होता है।" संक्षेपमें, तात्पर्य्य यह है कि इन सातों धातुओंसे ही हमारी देह ठहरी हुई है और इनमें ही जीवका वास है। इनके बिना काया नहीं है और काया बिना

भूलसुधार।

५५ सफे के पहलेकी तीन लाइनों में प्रूफ शोधक की भूल से गड़बड़ होगया है। वहां यों पढ़ना चाहिये—'और पचते समय आहार कटु होजाता है पीछे अग्नि-बलसे अच्छीतरह पचने से मधुर और स्निग्ध होजाता है।

* १ वायु—कफ, पित्त, मल, और रस, रक्त, मांस आदि धातुओं को दूसरे स्थान पर पहुंचानेवाला, जल्दी २ चलनेवाला, सूक्ष्म, रूखा, शीतल, हलका और चञ्चल होता है। श्वास लेने छोड़ने आदि का काम वायुही से होता है। यह वायु पाँच प्रकार के होते हैं। उदान वायु—प्राणवायु—समानवायु—अपानवायु और व्यानवायु। इनके अलग अलग स्थान और काम हैं। उन सबका पूरा जिक्र आगे करेंगे।

"उदानवायु"—गले में रहती है इसी वायुकी शक्ति से प्राणी बोलते हैं।

"प्राणवायु"—"हृदयमें रहती है, प्राण धारण करती है। भोजन के अन्नको भीतर प्रवेश करती है और प्राणरक्षक है"।

"समानवायु"—कोठे की अग्निके नीचे रहती है। यह जठराग्नि से मिलकर अन्नको पचाती है और मल मूत्र आदि को अलग अलग करती है।

"अपानवायु"—मल मूत्र वीर्य्य आदिको छोड़ने के समय बाहर निकाल फेंकती है।

"व्यानवायु"—सारे शरीर में घूमती है—यह वायु रस, पसीना और खून को बहाती है।

* २ प्राणियों की नाभि से स्तन (छाती) पर्य्यन्त के अन्तर को विद्वान लोग आमाशय कहते हैं। कफाशय, आमाशय, पित्ताशय, वाताशय, मलाशय और मूत्राशय, ये आशय हैं। स्त्रियोंके तीन आशय अधिक हैं। गर्भाशय और स्तन्याशय (दो चूचियां)।

जीव नहीं है। लेकिन खून, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र इन छः धातुओंकी पुष्टि रस (भोजनका सार) से होती है। रस आहारसे बनता है; अतएव आहार या भोजन हमारा मूल प्राण-रक्षक है।

भोजनमें सावधानी।

भोजन या आहार हमारा प्राण-रक्षक है। इससेही हमारी ज़िन्दगी है। भोजनसेही देहकी पुष्टि होती है। भोजन ही शरीरको धारण करता है इसमें सन्देहकी कोई बात नहीं है। सुश्रुत लिखते हैं:—

> आहारः प्रीणनः सद्यो बलकृद्देहधारकः।
> आयुस्तेजः समुत्साहस्मृत्योजोऽग्नि विवर्द्धनः॥

---

५५ सफेका शेष फुट नोट।

* ३ पित्त एक प्रकार का पतला द्रव्य है। इसकी रङ्गत आम से अलग पीली और आमसे मिलकर नीली होती है। पित्त-गरम, द्रवाकार, चरपरा हलका आदि गुणवाला है। पित्त पाँच प्रकार का होता है पाचक, रंजक, साधक, आलोचक, और भ्राजक।

पाचक पित्त—पक्वाशय में रहता है। यह छः प्रकार के आहारों को पचाता है, शेषाग्नि के बलको बढ़ाता है और भोजन के सारभूत पदार्थ रस और मल मूत्र आदि को नित्य अलग अलग करता है।

रंजक पित्त—यकृत और तिल्ली में रहता है। यह भोजन के सार **रस** का खून बनाता है।

साधक पित्त—हृदय में रहता है। यह मेधा या धारणा शक्ति और स्मृति को करता है।

आलोचक पित्त—दोनों आंखों में रहता है। उसी के बल से आंखों को दीखता है।

भ्राजक पित्त—चमड़ेमें रहता है। यह कान्ति करता है और लेप तथा तेल (मालिश किया हुआ) को पचाता है।

"भोजन तृप्ति करनेवाला, तत्काल ताक़त लानेवाला, देहको धारण करने वाला, आयु (उम्र), तेज, उत्साह, स्मरण शक्ति (याद रहनेकी ताक़त) और जठराग्नि को बढ़ाने वाला है।" भावमिश्र भी लिखते हैं ;—"आहार से ही देहका पोषण होता है। स्मृति, आयु,शक्ति, शरीरका वर्ण,उत्साह, धीरज,और शोभा इनकी वृद्धि होती है।" भोजन की इच्छा रोकने से शरीर टूटने लगता है। अरुचि उत्पन्न होती है ; श्रम होता है ; तन्द्रा भरजाती है ; आँखें कमज़ोर होजाती हैं ; धातुओंकी जीर्णता और बलका क्षय होता है। साफ़ मालुम होता है कि खाने पीने बिना हम ज़िन्दा नहीं रह सक्ते। इस लिये भोजन के मामले में हमको बड़ी होशियारी से चलना चाहिये। भोजन सम्बन्धी हरएक नियम को दिलमें जमा लेना चाहिये।

(१) कुछ चीज़ें स्वभाव से ही हितकारी होती हैं—उनके सेवन से हम को यथेष्ट लाभ होता है।

(२) कुछ चीज़ें स्वभाव से ही अहितकारी (नुक़सानमन्द) होती हैं उनके सेवन या अधिक सेवन करनेसे अनेक प्रकार के रोग होने का भय होता है। उनको या तो कम सेवन करना या बिलकुल ही काम में न लाना चाहिये।

(३) कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं जो अकेली तो अमृत समान गुणकारी होती हैं किन्तु दूसरी के साथ मिलजानेसे ज़हर का काम करती हैं उनको "संयोग विरुद्ध" कहते हैं। संयोग-विरुद्ध चीज़ों को कदापि न खाना चाहिये ; जैसे दूध मूली इत्यादि।

(४) कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं जो अकेली तो लाभदायक होती हैं ; किन्तु दूसरी के साथ बराबर भाग में मिलजाने से विष समान होजाती हैं ; जैसे शहद और घी। इन को जब मिलाकर खाना हो, बराबर न लेना चाहिये। एकको कम और दूसरी को अधिक लेना चाहिये।

(५) कुछ कर्म विरुद्ध अहितकारी चीजें होती हैं; जैसे काँसीके बरतन में दस दिनतक रक्खा हुआ घी ख़राब होता है।

(६) अन्न फल आदि भी गरिष्ठ, भारी और नुक़्सानमन्द न खाने चाहियें; क्योंकि जो चीज़ न पचेगी या अध-कच्ची रह जायगी उससे अजीर्ण, हैज़ा आदि भयङ्कर रोग होजायँगे। अन्तमें मृत्यु होना भी सम्भव है।

(७) भोजन बिना हम कुछ दिन जी सकते हैं लेकिन जल बिन जल्दी मर सकते हैं। मैला जल पीनेसे हैज़ा आदि रोग होकर हमारा शरीर नाश हो सकता है। इसवास्ते पानी हलका, शीघ्र-पाकी और साफ़ पीना चाहिये।

(८) रसोइया या घरके दूसरे आदमी या घर की बदचलन औरत या शत्रु लोग अक्सर भोजन में विष खिला देते हैं। इस-वास्ते भोजन की परीक्षा करके भोजन करना चाहिये।

(९) जिस धातुके पात्र में जो भोजन खाना चाहिये उसके विरुद्ध दूसरे पात्रों में खानेसे भी भोजन बिगड़ जाता है और लाभके बदले हानि करता है। जैसे पीतलके बरतन में खटाई के पदार्थ बिगड़ जाते हैं। उन बिगड़े हुए पदार्थों के खानेसे वमन वग़ैरः रोग होने लगते हैं।

(१०) भोजन सम्बन्धी शास्त्रोक्त नियमों पर भी ध्यान न रखने से अनेक रोग होजाते हैं; जैसे, भूख लगने पर भोजन न करने से जठराग्नि मन्द होजाती है। भोजन करके तत्काल स्त्री प्रसङ्ग करनेसे पेटमें दर्द होने लगता है या फ़ोते बढ़जाते हैं। भूखमें भोजन न करके जल ही से पेट भर लेनेसे जलोदर रोग होजाता है।

इसतरह की और भी अनेक बातें हैं जिनमें ज़रा भी उलट फेर या भूल होजाने से मनुष्य बीमार ही नहीं हो जाता; वरन इस दुर्लभ मनुष्य देहसे छुटकारा ही पाजाता है। तब कौन ऐसा मूर्ख होगा जो जान बूझ कर शरीर-रक्षा के मूल आधार—भोजन के मामले में भूल या असावधानी करेगा?

स्वभाव से हितकारी। *

लाल चाँवल,	सेंधा नमक	बथुआ	तीतर
साँठी चाँवल	अनार	जीवन्ती	लवा
जौ	आमला	पोई	रोहू मछली
गेहूँ	दाख या अंगूर	परवल	निर्मल जल
मूँग	खजूर या छुहारा	जिमीकन्द	गायका दूध
मसूर	फालसे	कालाहिरन	गायका घी
अरहर	खिन्नी	लालहिरन	तिलका तेल
मीठा रस*	बिजौरा नीबू	चित्रित हिरन	मिश्री

स्वभावसे अहितकारी।

फलीवाले धान्यों में उड़द, ऋतुओंमें गर्मी की ऋतु, नमकों में खारी नमक त्यागने योग्य है। फलोंमें बड़हल और शाकोंमें सरसोंका साग अहितकारी यानी अच्छा नहीं है। दूधोंमें भेड़का दूध, तेलोंमें कुसुमका तेल और मिठाइयोंमें राब त्याज्य (छोड़ने योग्य) है।

* हितकारीसे मतलब आरोग्य-जनकसे है। जिन चीजोंके नाम इस नकशेमें दिये हैं वे सबको फ़ायदेमन्द हैं। इनके सेवनसे लाभके सिवाय हानिका खटका नहीं है। किन्तु यह नियम तन्दुरुस्तोंके लिये है, बीमारोंको नहीं। तन्दुरुस्त आदमीको जो हितकारी या भला है वह बीमारको नुकसानमन्द हो सकता है। यद्यपि भात और दूध अच्छे पदार्थ हैं किन्तु कितनेही रोगोंमें यही दूध और भात नुकसानमन्द हैं। बादीके रोगोंमें भात और कफके रोगोंमें दूध अपथ्य है।

* मीठा, खट्टा, खारी, कड़वा, चरपरा और कसैला ये छः रस पदार्थों में रहते हैं। इनमेंसे पहिला पहिला रस पीछे पीछेके रससे अधिक बलदेनेवाला है। सब रसोंमें मीठा रस उत्तम है। मीठा रस—शीतल, धातु पैदा करनेवाला, स्तनों (चूचियों) में दूध पैदा करनेवाला और बल देनेवाला है। आँखोंको हितकारी और बात तथा पित्तको नष्ट करनेवाला, पुष्टि करनेवाला, कण्ठको शुद्ध करनेवाला और आयु (उम्र) को हितकारी है; लेकिन ज़ियादा मीठा रस खानेसे ज्वर, श्वास, गलगण्ड, मोटापन, कीड़े, प्रमेह, मेद, अग्निमन्दता और कफके रोग होते हैं।

संयोग विरुद्ध पदार्थ ।

दूध और बेलफल	दूध और मूली	शहद और बड़हल
दूध और तोरई	दूध और मछली	शहद और मूली
दूध और टेंटी	दूध और बड़हल	शराब और खीर
दूध और नीबू *	दूध और केला	खिचड़ी और खीर
दूध और नमक	दूध और सत्तू	मछली „ गुड़वगैरः †
दूध और कुलथी	दही और केला	छाछ और केला
दूध और तिलकुट	दही और बड़हल	बड़हल और केला
दूध और दही	दही और गर्मपदार्थ	उड़दकीदाल और
दूध और तेल	शहद और गर्मजल	बड़हल §
दूध और पिट्ठी	शहद और मछली	घी और बड़हल
दूध और सूखेसाग	शहद और गर्मपदार्थ	दूध और सूअरका
दूध और जामुन	शहद " वर्षाकाजल	मांस इत्यादि

ऊपर जो नक़शा दिया है उसमें संयोग-विरुद्ध पदार्थों के जोड़े दिये हैं। ये पदार्थ एक दूसरे से मिल कर विरुद्ध या विष समान ¶ होजाते हैं। दूध के साथ नमक विरुद्ध होजाता है; दूधके साथ मछली विरुद्ध होजाती है; शहद और गर्मजल मिलने से विरुद्ध होजाते हैं। इसवास्ते इन चीज़ों को मिला कर या एक ही समय न खाय।

---

* दूधके साथ नीबू के अलावः और किसी प्रकारकी भी खटाई न खाय।

† मछलीके साथ ईखसे बने हुए गुड़ चीनी शक्कर आदि कुछ न खाने चाहिये।

§ बड़हल एक प्रकारका फल होता है।

¶ कहीं कहीं विरुद्ध पदार्थ भी लाभदायक होता है। आग पर गर्म किया हुआ शहद विषके समान है; लेकिन 'अनन्तवात' नामक शिरोरोगमें, देश काल आयु आदि विचारकर, आग पर पका हुआ शहद (मधु) देनेसे उस रोगका नाश होता है।

कर्मविरुद्ध पदार्थ ।

सरसोंके तेल या किसी तरह के तेल में भून कर कबूतर का मांस न खाना चाहिये। कांसी के बरतन में दस दिन तक रक्खा हुआ घी न खाय। शहत गर्म करके या गर्म पदार्थोंके साथ या गर्मी के मौसम में न खाय। भोजन फिर गर्म करके न खाय।

मानविरुद्ध पदार्थ ।

शहद और जल, * शहत और घी, बराबर२ तोलमें मिला कर न खाय। घी और तेल, घी और चरबी, तेल और चरबी तथा और किसी तरह की दो चिकनाइयों को बराबर२ मिलाकर न खाय। शहत और कोई चिकनाई (घी तेल वग़ैर:), जल और कोई चिकनाई, इन्हें भी बराबर बराबर मिलाकर न खाय। विशेष करके चिकनाई (घी तेल वग़ैर:) और शहद के साथ वर्षा का जल न पीवे।

अनाजोंके गुण ।

चावल— चावल बहुत प्रकारके होते हैं। उन सबका वर्णन करने से ग्रन्थ बढ़जानेका भय है; इसवास्ते हम यहां सिर्फ़ दो प्रकारके चावलोंका वर्णन करते हैं। एक शाली चावल दूसरे सांठी चावल।

शाली चावल ।

शाली चावल हेमन्त ऋतुमें पैदा होते हैं। इन पर भुसी नहीं होती और यह सफ़ेद होते हैं। ये चावल

* शहद और घी बराबर तोलमें लेनेसे विष समान हो जाते हैं; लेकिन नाबराबर यानी एक कम दूसरा जियादा लेनेसे कुछ नुकसान नहीं करते; ऐसेही और समझना।

मीठे, चिकने, बलदायक, रुके हुए मलको निकाल-नेवाले, कसैले, हलके, रुचि करनेवाले, स्वरको उत्तम करनेवाले, वीर्यको बढ़ानेवाले, शरीरको पुष्ट करने-वाले, कुछ कुछ बादी और कफ करनेवाले, शीतल, पित्तकारक और पेशाब बढ़ानेवाले होते हैं।

साँठी चावल।

जो चावल बरसातमें ही पक जाते हैं उनको साँठी चावल कहते हैं। ये चावल—शीतल, हलके, मलको बाँधने-वाले, बादी और पित्तको शान्त करनेवाले, और शाली चावलके समान गुणदायक हैं। सबमें साँठी चावल उत्तम, हलके, चिकने, त्रिदोष नाशक, मीठे, कोमल, ग्राही, बलदायक और ज्वरको नष्ट करनेवाले हैं।

जौ—कसैले, मधुर, शीतल, लेखन, कोमल, रूखे, बुद्धि और अग्निको बढ़ानेवाले, अभिष्यन्दी, स्वरको उत्तम करने-वाले, बलकारक, भारी, वात और मलको बहुत करने-वाले; चमड़ेके रोग, कफ, पित्त, मेद, पीनस, श्वास, खाँसी, उरुस्तम्भ, खूनविकार और प्यासको नाश कर-नेवाले हैं।

गेहूँ—मीठे, शीतल, वात तथा पित्त नाशक, वीर्य बढ़ानेवाले, बलदायक, चिकने, दस्तावर, जीवनरूप, पुष्टिकारक और रुचिकारक आदि गुणवाले होते हैं। नये गेहूँ कफकारक होते हैं; परन्तु पुराने गेहूँ कफ-कारक नहीं होते। मथुरा आगरे दिल्ली आदिमें जो गेहूँ होते हैं वे मथूली गेहूँ कहलाते हैं। मथूली गेहूँ शीतल, चिकने, पित्तनाशक, मीठे, हलके, वीर्य बढ़ाने-वाले, पुष्टिदायक और पथ्य हैं।

मूँग—रूखे, ग्राही, कफ तथा पित्तनाशक, शीतल, स्वादु, थोड़ी बादी करनेवाली, आँखोंके लिये हितकारी और बुखारको नाश करते हैं। सुश्रुत और चरक, हरे मूँगमें अधिक गुण कहते हैं।

उड़द—हिन्दीमें इसे उड़द और उरद कहते हैं। संस्कृतमें माष और बंगलामें माष-कलाय कहते हैं। उड़द—भारी, पाकमें मधुर, चिकना, रुचि करनेवाला वातनाशक, तृप्तिकारक, बलदायक, वीर्य बढ़ानेवाला, अत्यन्त पुष्टिकारक, दूध बढ़ानेवाला, मेदकारक, कफकारक और पित्तकारक है। उड़द, दही, मछली और बैंगन ये चारों कफ और पित्तको बढ़ानेवाले हैं।

मोठ—बङ्गला भाषा में इसे बन-मूँग कहते हैं। यह वात कारक, ग्राही, कफ तथा पित्त नाशक, हलकी, अग्नि को जीतनेवाली, कीड़े करनेवाली, और बुखार को नाश करने वाली है।

मसूर—पाकमें मधुर, ग्राही, शीतल, हलकी, रूखी, बादी करनेवाली है, किन्तु कफ, पित्त, खून-विकार और बुखार को नाश करनेवाली है।

अरहर—कसैली, रूखी, मधुर, शीतल, हलकी, ग्राही, बादी करनेवाली, रङ्गको उत्तम करनेवाली, पित्त और खून-विकार को नाशकरनेवाली है।

चना—शीतल, रूखा, हलका, कसैला, विष्टम्भी, बादी करनेवाला, पित्त, खून, कफ और बुखार को नाश करने वाला है। तेलमें आगपर भुने हुए चनों में भी यही गुण हैं। गीले भुने हुए चने बलदायक और रुचि कारक हैं। सूखे भुने हुए चने—अत्यन्त रूखे, वात और कोढ़ को कुपित करनेवाले हैं।

मटर—मधुर, पाकमें भी मधुर, और शीतल है।

तिल—स्वादिष्ठ, चिकने, कफ और पित्तको नष्ट करने वाले, बलदायक, बालोंको उत्तम करने वाले, छूने में शीतल, चमड़े को हितकारी, दूध बढ़ाने वाले, घाव में हित करनेवाले, दाँतों को उत्तम करने वाले, पेशाब को थोड़ा करनेवाले, ग्राही, बादी करनेवाले, अग्निदीपन करनेवाले और बुद्धि बढ़ानेवाले हैं। सफ़ेद तिल मध्यम है।

सरसों—चिकनी, कड़वी, तीक्ष्ण, गर्म, कफ और बादी नाश करनेवाली, खून, पित्त और अग्निको बढ़ानेवाली; खुजली, कोढ़ और कीड़ोंको नाश करने वाली है। जो लाल सरसों में गुण हैं वही सफ़ेद सरसों में हैं; परन्तु सफ़ेद सरसों उत्तम होती है;

राई—कफ तथा पित्तनाशक, तीक्ष्ण, गरम, रक्तपित्त करने वाली; कुछ रूखी, अग्निको दीपन करनेवाली, खुजली, कोढ़ और कोठे के कीड़ोंको नाश करने-वाली है।

सूचना।

सम्पूर्ण नये धान्य—मधुर, भारी और कफकारक होते हैं। एक वर्ष के पुराने हों तो अत्यन्त हलके, पथ्य और हितकारी होते हैं। जौ, गेहूँ, तिल और उड़द ये नये उत्तम और लाभदायक होते हैं लेकिन दो वर्ष से ऊपरके पुराने, रसहीन, रूखे और गुण कारक नहीं होते।. नवीन जौ, गेहूँ, उड़द आदि तन्दुरस्त लोगोंको अच्छे हैं; लेकिन पथ्य भोजन करने-वालों को पुराने ही अच्छे होते हैं।

शाक या तरकारियाँ

पत्तोंके साग।

बथुआ—अग्निदीपक, पाचक, रुचिकारक, हलका, दस्तावर है। तिल्ली, रक्तपित्त, बवासीर, कीड़े और त्रिदोष को नाश करनेवाला है।

चौलाई—हलकी, शीतल, रूखी, मलमूत्र निकालनेवाली, रुचिकारक, अग्निदीपक, विषनाशक और पित्त, कफ, तथा खून-विकार नाशक है। जल-चौलाई—कड़वी, हलकी है। खून-विकार, पित्त और वातनाशक है।

पालक—पालकका साग—शीतल, कफकारक, दस्तावर, भारी, मद, श्वास, पित्त, खून-विकार आदि नाशक है।

कुल्फा—हिन्दीमें इसे नोनिया भी कहते हैं। यह रूखा, भारी, बादी, कफनाशक, अग्निदीपक, स्वादमें खारा और खट्टा, बवासीर, मन्दाग्नि और विषनाशक है।

चूका—बहुत खट्टा, स्वाद, वातनाशक, कफ और पित्त करनेवाला, रुचिकारी, पचनेमें अत्यन्त हलका है। बैंगन के साथ खानेसे अत्यन्त रुचिकारी है।

मूली—मूलीके ताज़ा पत्तोंका साग—पाचक, हलका, रुचिकारक और गर्म है। तेलमें भुना हुआ शाक—त्रिदोष नाशक है। बिना भुना हुआ साग—कफ और पित्त करनेवाला है।

थूहर—थूहरके पत्तोंका साग—चरपरा, अग्निदीपक, रोचक, अफारा, वायुगोला, सूजन, अष्ठीलिका और पेटकेदूसरे रोग नाश करनेवाला है।

गोभी—गोभीके पत्तोंका साग—कोढ़, प्रमेह, खूनविकार, मूत्रकृच्छ्र, और ज्वर नाशक तथा हलका है।

चना—चनेका साग—रुचिकारक, दुर्जर, कफ और बादी करनेवाला, खट्टा, विष्टम्भकारक, पित्त नाश करनेवाला और दाँतोंकी सूजन दूर करनेवाला है।

सरसों—सरसोंके पत्तोंका साग—चरपरा, पेशाब और पाखानेको बहुत करनेवाला, भारी, पाकमें खट्टा, विदाही, गरम, रूखा, त्रिदोषनाशक, खारी, नमकीन, चरपरा, स्वाद और सब सागोंमें निन्दित यानी बुरा है।

फूलोंके साग।

केलेका फूल—चिकना, मीठा, भारी, शीतल, कसैला है। बादी, पित्त, रक्तपित्त और क्षय रोगको नाश करता है।

सहँजनेका फूल—इसका साग चरपरा, तीक्ष्ण, गरम, नसोंमें सूजन करनेवाला, कोढ़, बादी, नासूर, तिल्ली और गोलेको नाश करनेवाला है।

सेमलके फूल—इनका साग जो घी और सेंधानोन डालकर पकाया जाय तो दुःसाध्य प्रदरको नाश करता है। रस और पाकमें मीठा, कसैला, शीतल, भारी, ग्राही, बादी करनेवाला कफ और पित्तको नाश करनेवाला है।

फलोंके शाक।

पेठा—इसे संस्कृतमें कुष्माण्ड कहते हैं। यह पुष्टिकारक, वीर्यवर्द्धक, भारी है। पित्त, खूनविकार और वात नाशक है। कच्चा पेठा—अत्यन्त शीतल नहीं है; स्वादु, खारी, अग्निदीपक, हलका, बस्ति (मूत्राशय) को शोधनेवाला, मृगी और पागलपन आदि मानसिक रोगों तथा सब दोषों को जीतनेवाला है।

ककड़ी—कच्ची ककड़ी—शीतल, रूखी, ग्राही, मधुर, भारी, रुचिकारी और पित्त नाशक है। पक्की ककड़ी—प्यास, अग्नि और पित्त कारक है।

चचेंड़ा—बादी और पित्त नाशक है। बलदायक, पथ्य और रुचिकारक है। शोष-रोगी को अत्यन्त हितकारी है; लेकिन परवलसे गुणमें कुछ कम है।

करेला—शीतल, मल-भेदक, दस्तावर, हलका, कड़वा है; बादी नहीं करता और बुख़ार, पित्त, कफ, ख़ूनविकार, पीलिया, प्रमेह और कीड़ोंको नाश करनेवाला है।

नेनुआ—नेनुआको घियातोरई भी कहते हैं। यह चिकनी, रक्तपित्त और बादीको नाश करती है।

तोरई—शीतल, मीठी, कफ और बादी करनेवाली, पित्तनाशक और अग्निदीपक है। श्वास, खाँसी, ज्वर और कीड़ों को नाश करती है।

परवल—पाचक, हृदयको हितकारी, वीर्यवर्धक, हलका, अग्निदीपन करनेवाला, चिकना और गर्म है। खाँसी, ख़ूनविकार, बुख़ार, त्रिदोष और कीड़ोंको नाश करता है। परवल की डण्डी—कफ नाशक है। परवलके पत्ते-पित्त नाशक हैं और फल—त्रिदोष नाशक है।

सेम—शीतल, भारी बलदायक, दाहकारक और वात तथा पित्त नाशक है।

बैंगन—हिन्दीमें इसे भराटा और भाँटाभी कहते हैं। बैंगन—मीठा तीक्ष्ण, गर्म है किन्तु पित्तकारक नहीं है। अग्निदीपन करनेवाला, वीर्य बढ़ानेवाला, हलका है। बुख़ार, बादी और कफको नाश करनेवाला है। छोटे बैंगन—कफ और पित्त नाशक हैं। बड़े बैंगन—पित्तकारक और हलके हैं। बैंगन का भर्त्ता—कुछकुछ पित्तकारक,

हलका, अग्नि दीपन करनेवाला है ; कफ, मेद, बादी और आम को नाश करता है। एक तरहके बैंगन मुर्गेके अण्डेके माफ़िक होते हैं। यह बैंगन काले बैंगनों से गुणमें कम हैं लेकिन बवासीर रोगमें विशेष हितकारी हैं।

टिंडे—रुचिकारक, दस्तावर, बहुत शीतल, वातकारक, रूखे, पेशाब बढ़ानेवाले हैं। पित्त, कफ और पथरी रोगको नाश करते हैं।

ककोड़ा-मलनाशक, अग्निदीपन करनेवाला, कोढ़, जीमिचलाना, अरुचि, खाँसी, श्वास और बुखारको नाश करता है।

कन्दोंके शाक (साग)

ज़िमीकन्द-अग्निको दीपन करनेवाला, रूखा, कसैला, खुजली करनेवाला, चरपरा विष्टम्भी, रुचिकारी और हलका है। बवासीर और कफ को नाश करता है। विशेष करके बवासीर रोगमें पथ्य है। तिल्ली और गोलेको भी नाश करता है। कन्दोंके जितने साग होते हैं उनमें ज़िमीकन्द यानी सूरण श्रेष्ठ है। जिनको दाद, रक्तपित्त और कोढ़ हो उनको ज़िमीकन्द खाना अच्छा नहीं है।

आलू—शीतल, विष्टंभी, मीठा, भारी, मल मूत्र करनेवाला, रूखा, दुर्जर, बलदायक, वीर्यवर्द्धक, कुछ अग्नि-वर्द्धक, रक्त-पित्त नाशक, लेकिन कफ और बादी करनेवाला है। रतालू वग़ैर: के गुण भी ऐसेही जानने चाहिये।

अरुई—इसे घुइयाँ भी कहते हैं। घुइयाँ—बलदायक, चिकनी, भारी, हृदय रोग तथा कफको नाश करनेवाली किन्तु विष्टभी है। तेलमें भूनी हुई घुईयाँ—अत्यन्त रुचिकारी हैं।

मूली—मूली दो प्रकारकी होती हैं। छोटी और बड़ी। छोटी मूली चरपरी, गर्म, रुचिकारक, हलकी, पाचक, त्रिदोष नाशक, स्वरको उत्तम करनेवाली ; ज्वर, श्वास, नाकके रोग, कण्ठ-रोग, और नेत्र-रोग नाशक है। बड़ी मूली रूखी, गर्म, भारी, त्रिदोषको उत्पन्न करनेवाली है। यही बड़ी मूली जो तेलमें पकाई जाय तो त्रिदोष नाशक है।

गाजर—मीठी, तीक्ष्ण, कड़वी, गर्म, अग्निको दीपन करनेवाली, हलकी, ग्राही है। रक्तपित्त, बवासीर, संग्रहणी, कफ और बादीको नाश करनेवाली है।

कसेरू—शीतल, मीठा, कसैला, भारी, ग्राही, वीर्यवर्द्धक, वात, कफ और अरुचि करनेवाला, दूध बढ़ानेवाला है। पित्त, खूनविकार, दाह और नेत्र रोग नाशक है।

फलों के गुण।

आम—आम जगतमें प्रसिद्ध है। इसकी समान और कोई दूसरा फल नहीं हैं। हमारे भारतवर्षमें आम बहुतायत से होता है। लाख लाख धन्यवाद हैं उस परब्रह्म परमात्मा को जिसने हमारे देशमें आम जैसा अमृत फल पैदा किया। यहाँ से आम जहाज़ों द्वारा वलायत तक जाता है। आम बहुत दिन तक नहीं ठहरता। इसको बहुत दिनतक रखने को लोगोंने एक बहुत अच्छी तरकीब निकाली है। आमके मुखको मोमसे अच्छी तरह बन्द कर देते हैं। फिर एक साफ़ टीनके

नोट—ग्राही, दीपन, पाचन, लेखन, आदि शब्दों का अर्थ इस पुस्तक के अन्तमें अकार आदि क्रम से देखिये।

कनस्तर या काँच के बड़े बरतन में शहद भर कर उसीमें आमोंको डुबो देते हैं। ऊपर से बरतनका मुख बन्द कर देते हैं। इस तरह रक्खा हुआ आम महीनों बाद जैसे का तैसा निकलता है। अगर यह तरकीब न निकलती तो वलायत तक आमों का पहुँचना मुश्किल था; क्योंकि सुएज़ नहर की राहसे भी जहाज़ १५ दिनसे पहले वलायत नहीं पहुंचते। जो आजकल आमों को रखते हैं और देशदेशान्तरों में इनका चालान करते हैं उनको खूब नफ़ा होता है। आम जैसे फलको सारी दुनिया तरसती है। संस्कृत में आम के आम्र, रसाल, पिकवल्लभ, फलश्रेष्ठ, स्त्रीप्रिय, वसन्तदूत और नृपप्रिय आदि बहुत से नाम हैं।

कच्चाआम—कच्चे आमको केरी या कच्ची अमियाँभी कहते हैं। यह कसैली, खट्टी, रुचिकारक, वात और पित्तको करनेवाली है। बड़ा और बिना पका आम—खट्टा, रूखा, त्रिदोष, और खूनफिसादको करनेवाला है।

पकाआम—मीठा, वीर्यवर्द्धक, चिकना, बलकारी, सुखदायक, हृदयको प्यारा, वर्ण को उत्तम करनेवाला और शीतल है; पित्तकारक नहीं है। कसैले रसवाला आम—कफ, अग्नि और वीर्य को बढ़ाता है। यही आम अगर दरख़्त पर पका हो तो भारी, वातनाशक, मीठा, खट्टा और कुछ कुछ पित्तको कुपित करता है।

पालसे पकाये हुए आममें खट्टापन नहीं होता; किन्तु उसमें मीठापन विशेष होता है।

आमका निकाला हुआ रस—बलदायक, भारी, वातनाशक, दस्तावर, हृदयको अप्रिय, तृप्ति करने-वाला, अत्यन्त पुष्टिकारक और कफ बढ़ानेवाला है।

दूधके साथ यदि आम खाया जाता है तो वह बादी और पित्तको नाश करता है, रुचिकारक, पुष्टिदायक, बलकारक और वीर्यवर्द्धक होता है ; स्वादमें बहुत ही अच्छा, मीठा और तासीरमें शीतल होता है। आम खाकर दूध पीना बहुत ही गुणदायक है।

अमचूर।

कच्चे आमके ऊपरका छिलका छील कर फेंक देते हैं। गूदेको फाँकेंसी बनाकर धूपमें सुखा लेते हैं। इन सूखे हुए आमके टुकड़ोंको अमचूर कहते हैं। अमचूर—खट्टा, कसैला, स्वादिष्ठ, दस्तावर, और कफ तथा बादीको जीतनेवाला होता है। अमचूर की खटाई देनेसे बहुतसी तरकारियाँ खूब मज़ेदार बनजाती हैं।

अमावट।

पके हुए आमोंका रस निकालकर, कपड़े पर डाल कर, सुखा लेते हैं। ज्यों ज्यों रस सूखता है त्यों त्यों फिर उसपर रस डालते हैं। इसी तरह बारम्बार रस डालनेसे रोटी सी जम जाती है। खूब सुखाकर अच्छे बरतनमें रख देते हैं। इसीको अमावट या आम्रावत कहते हैं। अमावट—दस्तावर, रुचिकारक, सूरजकी किरणोंसे सूखनेके कारण हलका, प्यास, वमन और पित्तको नाश करनेवाला है।

आमका फूल।

आमके मौर होता है उसेही फूल भी कहते हैं। यह मौर—शीतल, रुचिकारी, ग्राही, वातकारक है ;

अतिसार, कफ, पित्त, प्रमेह और दुष्ट रुधिर (खून) को नाश करता है।

आमकी गुठली।

आमकी गुठली ही आमका बीज है। यह कसैली, कुछ खट्टी और मीठी होती है। वमन, अतिसार और हृदयकी जलनको नाश करती है।

आमके नये पत्ते।

ये रुचिकारक, कफ और पित्तको नाश करने-वाले और मङ्गल-रूप हैं। उत्सवों पर, डोरियोंमें पिरोकर घरके दरवाजों पर लटकाये जाते हैं। इनके देखनेसेही चित्त प्रसन्न हो जाता है।

क़लमी आम— क़लमी आमको हिन्दीमें मालदह आम और संस्कृतमें राजाम्र कहते हैं। यह आम कसैला, स्वादिष्ठ, स्वच्छ, शीतल, भारी, ग्राही और रूखा है। दस्तक़ब्ज़, अफारा और बादी करता है; लेकिन कफ और पित्तको नष्ट करता है।

कोशम्भ आम कोशम्भ आम या कोशाम्र जङ्गली आमको कहते हैं। इसके दरख़्त आमकेही समान होते हैं किन्तु पत्ते और फल छोटे छोटे होते हैं। इस आमका कच्चा फल— ग्राही, वातनाशक, खट्टा, गरम, भारी और पित्तकारी होता है; लेकिन पका फल अग्निको दीपन करनेवाला, रुचिकारक, हलका, गरम होता है और कफ तथा बादीको नाश करता है।

आमके अचार।

आमसे कितनेही प्रकारके अचार, अचारी, और मुरब्बे आदि तैयार कियेजाते हैं। पके आमोंके रससे

"आम्रपाक" नामका बहुत मजेदार, पुष्टिदायक और बलवर्धक पाक तैयार किया जाता है। आम्रपाक बनानेकी विधि आगे लिखेंगे।

सूचना।

अत्यन्त आम खानेसे—मन्दाग्नि, विषमज्वर, खून-विकार, दस्तक़ब्ज़ और आँखोंके रोग होते हैं; इसलिये बहुत आम न खाने चाहियें। ज़ियाद:तर दोष खट्टे आम में है मीठे आममें नहीं है।

अगर बहुत आम खाये हों तो सोंठको पानीके साथ खावे या ज़ीरा कालेनोनके साथ खावे।

कटहर—इसका कच्चा फल—ग्राही, वातकारक, कसैला, भारी, दाहकारक, मधुर, बलदायक, कफ और मेद को बढ़ाने वाला है।

बड़हर—इसका पक्का फल—मीठा, खट्टा, वात तथा पित्तनाशक, कफ तथा अग्नि को करनेवाला, रुचिकारक, वीर्य-वर्द्धक है।

केला—मीठा, शीतल, ग्राही, भारी, चिकना है। कफ, पित्त, रक्तविकार, दाह, घाव, क्षयरोग और बादी को नाश करता है।

पकाकेला—स्वादिष्ठ, शीतल, वीर्यवर्धक, पुष्टि-कारक, रुचिकारक, माँस बढ़ानेवाला है। भूख, प्यास, आँखोंके रोग और प्रमेहको नाश करता है।

कचरियाँ—कचरियोंको सेंध और फूट भी कहते हैं। कच्ची कचरियाँ—मीठी, रूखी, भारी, पित्त और कफनाशक तथा ग्राही लेकिन गरम नहीं होतीं। पकी कच-रियाँ—गरम और पित्त करनेवाली हैं।

नारियल—इसका फल—शीतल, दुर्जर, मूत्राशयको शोधनेवाला, ग्राही, पुष्टिकारक, बलदायक और वात, पित्त, रक्त-विकार तथा दाहको नाश करनेवाला है। कोमल नारियल का फल—विशेष करके पित्तज्वर और पित्तके दोषों को नष्ट करता है।

नारियल पुराना—भारी, पित्तकारक, विदाही और विष्टंभी है।

नारियल का पानी—शीतल, हृदय को प्रिय, अग्निदीपक, वीर्यवर्द्धक, हलका, प्यास और पित्तको नाशकरनेवाला, मीठा और मूत्राशय को शुद्ध करने वाला है।

दाख—कच्चा अँगूर—हीनगुण और भारी है। खट्टा अँगूर—रक्तपित्त करनेवाला है। पका हुआ अँगूर या पकी दाख—दस्तावर, शीतल, आँखों को हितकारी, धातु पुष्ट करनेवाली और भारी है। प्यास, ज्वर, श्वास, उल्टी होना, वातरक्त, कामला, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त, मोह, दाह, शोष और मदात्यय को नाश करती है। गायके थन के माफ़िक दाख—वीर्यवर्धक, भारी, कफ और पित्तको नष्ट करनेवाली है। किशमिश—वीर्य-वर्द्धक, भारी, कफ और पित्त नाश करती है।

खजूर—शीतल, रुचिकारक, भारी, तृप्तिदायक, पुष्टिकारक, ग्राही, वीर्यवर्द्धक और बलदायक है। घाव, क्षयरोग, रक्तपित्त, कोठे की वायु, वमन, कफ, ज्वर, अतिसार भूख, प्यास, खाँसी, श्वास, मद, मूर्च्छा, वातपित्त और मद्यसे हुए रोगों को नाश करता है।

बदाम—गरम, चिकना, वीर्यवर्द्धक, भारी और वातनाशक है। बदाम की मींगी—मीठी, वीर्यवर्धक, पित्त और

वात नाशक, चिकनी, गरम, कफकारक, और रक्तपित्त रोगी को नुकसानमन्द है।

सेव—वात तथा पित्त नाशक, पुष्टिकारक, कफकारक, भारी पाकमें तथा रसमें मधुर, शीतल, रुचिकारक और वीर्य को बढ़ानेवाला है।

नासपाती—हलकी, वीर्यवर्द्धक, बहुत मीठी, वात, पित्त, कफ इन तीनों दोषोंको नष्ट करनेवाली है। संस्कृत में इसे अमृतफल कहते हैं।

तरबूज़—ग्राही, शीतल, भारी, आँखों को ताक़त, पित्त और वीर्य को हरनेवाला है। पका तरबूज़—गरम, खारी, पित्तकारक; किन्तु कफ और बादीको नाश करता है।

खरबूज़ा—पेशाब लानेवाला, बलदायक, कोठेको साफ़ करनेवाला; अत्यन्त स्वाद, शीतल, वीर्यवर्द्धक, पित्त और वात नाशक है। जो खरबूज़ा खट्टे, मीठे और खारी रसका हो वह रक्तपित्त और घोर सोज़ाक करता है।

खीरा—नवीन खीरा—मीठा, शीतल, प्यास, ग्लानि, दाह, पित्त और अत्यन्त रक्तपित्त नाशक है। पका खीरा—खट्टा, गरम, पित्तकारक और कफ तथा बादी को नाश करता है। खीरेका बीज—पेशाब लानेवाला, शीतल रूखा, पित्त और मूत्रकृच्छ्र को नाश करता है।

ताड़—ताड़का पका फल—पित्त, खून और कफ को बढ़ानेवाला, मुश्किल से पचनेवाला, बहुत पेशाब लानेवाला अभिष्यन्दि, तन्द्रा और वीर्य देनेवाला है।

बेल—कच्चाबेल * ग्राही है; कफ, वात, आम और शूल को

* बेल को छोड़कर और सब फल पके हुए गुणकारी होते हैं; लेकिन बेल तो कच्चा ही अधिक गुणदायक होता है। दाख, बेल, आँवला और हरड़ आदि फल सूखे हुए अधिक गुणदायक होते हैं।

नाश करता है। पकाबेल—भारी, तीनों दोषवाला, दुर्जर, दुर्गन्धित, दाह करनेवाला, ग्राही, मीठा और अग्नि को मन्द करनेवाला है।

कैथ—मारवाड़ी इसे काथीड़ी कहते हैं। कैथका पकाफल—भारी है; प्यास, हिचकी, वादी और पित्तको नाश करता है। बहुतही छोटाफल—कसैला, कण्ठ को शुद्ध करनेवाला, ग्राही और मुश्किल से पचनेवाला है।

नारङ्गी—मीठी, खट्टी, अग्निको दीपन करनेवाली और वातनाशक है। दूसरे प्रकार की नारङ्गी, खट्टी, बहुत गरम, मुश्किल से पचनेवाली, वातनाशक और दस्तावर है।

जामुन—बड़ीजामुन—स्वादिष्ठ, विष्टम्भी, भारी और रुचिकारी है। छोटी जामुन का फल भी ऐसा ही होता है; विशेष कर दाह को नाश करता है।

बेर—पकाहुआ और बहुत मीठा बेर—शीतल, दस्तावर, भारी, वीर्यवर्द्धक, पुष्टिकारक है और पित्त, दाह, रुधिर विकार, क्षय, तथा प्यास को नाश करनेवाला है।

बहुत छोटा अर्थात् झाड़ी बेर—खट्टा, कसैला, कुछ कुछ मीठा, चिकना, भारी, कड़वा और वात तथा पित्त नाशक है।

सूखा हुआ बेर—दस्तावर, अग्निवर्द्धक, हलका होता है और प्यास ग्लानि तथा रुधिर-विकारको नाश करता है।

करौंदे—कच्चे करौंदे—खट्टे, भारी, प्यास नाशक, गरम, रुचिकारी होते हैं; रक्तपित्त और कफ करते हैं।

पके करौंदे—मीठे, रुचिकारी, हलके, पित्त और वात नाशक हैं।

चिरौंजी — चिरौंजीकी मींगी—मीठी, वीर्यवर्द्धक, पित्त तथा वात नाशक, हृदयको प्रिय, कठिनतासे पचनेवाली, चिकनी, विष्टंभी और आम बढ़ानेवाली है।

खिरनी- वीर्यवर्द्धक, बलदायक, चिकनी, शीतल, भारी, छोटी है और प्यास, मूर्छा, मद, भ्रान्ति, क्षय, तीनों दोष, तथा रक्तपित्त नाशक है।

सिंघाड़ा — शीतल, स्वादिष्ट, भारी, वीर्यवर्द्धक, कसैला, ग्राही, वीर्य, वात तथा कफको करनेवाला और पित्त, रुधिर-विकार तथा दाहको नष्ट करता है।

फालसा — पका फालसा—पाकमें मधुर, शीतल, विष्टम्भी, पुष्टिकारक, हृदयको प्रिय और पित्त, दाह, रक्तविकार, ज्वर, क्षय तथा बादीको नष्ट करता है।

शहतूत- पका शहतूत—भारी, स्वादिष्ट शीतल, पित्त और बादीको नाश करता है।

अनार— मीठा अनार—त्रिदोष नाशक, तृप्तिदायक, वीर्यवर्द्धक हलका, कसैले रसवाला, ग्राही, चिकना, बुद्धि और बलदायक है और दाह, ज्वर, हृदय रोग, कण्ठरोग तथा मुखकी दुर्गन्धिको नष्ट करता है।

खटमीठा अनार—अग्निको दीपन करनेवाला, रुचिकारी, कुछ कुछ पित्तकारक और हलका है।

खट्टा अनार—पित्तको उत्पन्न करनेवाला है। और वात तथा कफको नष्ट करता है।

अखरोट — इसका गुण बादामके समान है। विशेष करके कफ और पित्त को कुपित करता है।

बिजौरा- मधुर, रस में खट्टा, अग्नि को दीपन करनेवाला, हलका कण्ठ, जीभ तथा हृदय को शुद्ध करनेवाला, और श्वास खाँसी, अरुचि तथा प्यास को नाश करता है।

चकोतरा—स्वादिष्ठ, रुचिकारक, शीतल और भारी होता है; रक्तपित्त, क्षय, श्वास, खाँसी, हिचकी और भ्रम को नाश करता है।

जम्भीरी-नीबू—गरम, भारी और खट्टा होता है। वात, कफ, मलबंध, शूल, खाँसी, वमन, प्यास, आमसम्बन्धी दोष, मुखकी विरसता, हृदयकी पीड़ा, अग्निकी मन्दता और कृमि (कीड़े) नाशक है। एक जम्भीरी नीबू छोटा होता है वह प्यास और वमनको नष्ट करता है।

कागज़ी-नीबू—खट्टा, वातनाशक, दीपन, पाचन और हलका होता है। यह नीबू कीड़ोंको नाश करनेवाला, पेटका दर्द आराम करनेवाला, अत्यन्त रुचिकारक, वात, पित्त, कफ तथा शूलवालोंको अत्यन्त हितकारी है। तीनों दोष, अग्नि क्षय, बादीकी पीड़ावालोंको, विषसे दुखियोंको, अग्नि-मन्दवालोंको यह नीबू देना चाहिये। इस नीबूका छिलका बहुत पतला होता है इसी कारण इसे कागज़ी नीबू कहते हैं।

मीठानीबू—इसे शर्बती नीबू भी कहते हैं। यह मीठा और भारी होता है। वात, पित्त, विष, साँपका ज़हर, खून-विकार, शोष, अरुचि, प्यास और वमन को नाश करता है; लेकिन कफसम्बन्धी रोगोंको करता है और बल तथा पुष्टि बढ़ाता है।

कमरख—शीतल, ग्राही, स्वादिष्ठ और खट्टी होती है। कफ और बादी को नाश करती है।

इमली—कच्ची इमली—खट्टी, भारी, वात विनाशक है। पित्त, कफ और रुधिर-विकार करनेवाली है।

पकी इमली—अग्निप्रदीपक, रूखी, दस्तावर और गरम होती है, कफ और वात का नाश करती है।

सूचना ।

(१) बेल के फल के सिवाय सब फल पके हुए ही गुण-कारक होते हैं। बेल कच्चा ही अधिक गुणकारी होता है। दाख, बेल और हरड़ आदि सूखी हुई अधिक गुणदायक होती हैं। बाकी सब फल रस सहित ही अधिक गुणकारक होते हैं।

(२) जो गुण फलोंमें कहे गये हैं वही उनकी मिंगियों में भी समझने चाहिये।

(३) जो फल बर्फ़ से, आगसे, ख़राब हवासे, साँप से अथवा कीड़े वग़ैरः से बिगड़ गया हो, बिना समय फला हो; ख़राब ज़मीन में पैदा हुआ हो, या पक कर बिगड़ गया हो, वह फल कभी न खाना चाहिये।

कृतान्न अथवा तैयार किये हुए पदार्थोंके गुण।

मुनियोंने जिन पदार्थों में जो गुण कहे हैं उन पदार्थों के बनाये हुए अन्नों में भी वही सम्पूर्ण गुण होते हैं—यह सामान्यता से कहा गया है। किसी अन्नमें संस्कार भेद से दूसरे गुण हो जाते हैं;. जैसे कि पुराने चावलों का भात हलका होता है परन्तु वही शालि चावलों का भात खिलता नहीं और चिउरा भारी होता है। कहीं संयोग (मिलने) के प्रभाव से गुणों में फ़र्क़ होजाता है। जैसे कि—दुष्ट अन्न भारी होता है और घी भी भारी होता है; परन्तु वही दुष्ट अन्न अगर घी में बनाया गया हो

ती हलका और हितकारी होता है। इसी कारण नीचे कुछ तैयार किये हुए यानी पकाए हुए पदार्थों के गुण और पीछेसे दो चार अमृत समान स्वादिष्ट और गुणकारी चीजें बनाने की सरल तरकीबें भी लिखते हैं।

भात—अग्निकारक, पथ्य, तृप्तिदायक, रुचिकारक और हलका है। लेकिन बिना धोये हुए चावलों का—बिना माँड़ निकाला हुआ और ठण्डा भात—भारी, अरुचि कारक और कफकारक है।

दाल—मूँग, अरहर, चना और उड़द आदि की दाल जो नमक अदरख, हींग आदि के साथ जल में पकाई जाती है वह—विष्टम्भकारी, रूखी और विशेष कर शीतल है। भुनी हुई बिना छिलकों की दाल अत्यन्त हलकी है।

खिचड़ी—दाल चावल मिलाकर जो खिचरी जल में पकाई जाती है वह—वीर्यवर्धक, बलदायक, भारी, कफ और पित्तको पैदा करनेवाली, दुर्जर और मल मूत्र करनेवाली है।

खीर—अध-औटे दूधमें, घीमें भुने हुए, चावल डालकर पकावे। जब चावल पक जायँ तब साफ़ सफ़ेद बूरा और घी डाले, यह उत्तम खीर है। खीर—दुर्जर, पुष्टिकारक और बलदायक है। बहुत ही उत्तम खीर बनाने की विधि आगे लिखेंगे।

सेमई—तृप्तिकारक, बल बढ़ानेवाली, भारी, पित्त और वात नाशक, मलको रोकनेवाली, सन्धानकारक और रुचि को उत्पन्न करनेवाली है; मगर इन्हें अधिक न खाना चाहिये।

पूरी—पुष्टिकारक, पथ्य, बलवर्धक, अत्यन्त रुचिकारक, भारी,

पाकमें मधुर और त्रिदोष नाशक है। बाज़ार की पूरियाँ इसके विपरीत बहुत ही नुक़सानमन्द होती हैं।

कचौरी—भारी, स्वादिष्ठ, चिकनी, और बलकारी होती है। पित्त और खूनको बिगाडती है और आँखोंकी रोशनी कम करती है। तासीरमें गरम और बादी नाशक है; अगर कचौरी घीमें बनाई जाय तो आँखोंके लिये फ़ायदेमन्द और रक्त पित्तको नाश करती है।

बड़े—उड़दकी पिट्ठीमें नोन, हींग और अदरख मिला तेलमें पकाकर जो बड़े बनाये जाते हैं वह—बलदायक, पुष्टिकारक, वीर्यवर्द्धक, वायुनाशक, रुचिकारक, विशेष करके लकवेके रोगियोंको मुफ़ीद, दस्तावर, कफकारी और जिनकी अग्नि दीप्त है उनको उत्तम हैं। मूँग के बड़े छाछ में भिगो दे और उनको सेवन करें तो हलके और शीतल हैं; बलकि संस्कार के प्रभाव से त्रिदोष नाशक और हितकारी होते हैं।

बड़ी—उड़दकी पिट्ठी में हींग, नोन और अदरख मिलाकर कपड़े पर बड़ी तोड़ कर सुखाले। पीछे तेल में या कढ़ी में डाल कर पकावे। इन बड़ियों में उड़द के बड़ों के समान गुण होता है।

पेठेकी बड़ियाँ भी गुण में बड़ों के समान हैं; विशेषता यही है कि रक्तपित्त नाशक और हलकी हैं।

मूँगकी बड़ी—रुचिकारी, हलकी और मूँगकी दाल के समान गुणवाली है।

कढ़ी—पाचक, रुचिकारक, हलकी, अग्नि-प्रदीपक, कुछ २ पित्त को कुपित करनेवाली, कफ, बादी और मलके अवरोध को नष्ट करती है।

पकौड़ी—	बेसन की पकौड़ियाँ बनाकर जो कढ़ी में डाली जाती हैं वे—रुचिकारी, विष्टंभी, बलदायक और पुष्टिकारक हैं।
बूँदी के लड्डू	—हलके, ग्राही, त्रिदोषनाशक, स्वादिष्ट, शीतल, रुचिकारक, आँखों को हितकारी, ज्वरनाशक, बलदायक और तृप्ति कारक हैं।
मोतीचूर के लड्डू	—बलकारक, हलके, शीतल, कुछ वायुकारक, विष्टंभी, ज्वर नाशक, तथा पित्तरक्त और कफ नाशक हैं।
जलेबी—	पुष्टिकारक, कान्तिकारक, बलदायक, धातुवर्द्धक, वृष्य, रुचिकारी और तुरन्त तृप्तिकारक है।
सिखरन	वीर्यवर्द्धक, बलदायक, रुचिकारक, वात और पित्तनाशक, अग्नि को दीपन करनेवाली, पुष्टिकारक, चिकनी, मीठी, शीतल और दस्तावर है। महाभारत के महा बलवान भीमसेन रसोई बनाने में प्रसिद्ध थे। उन्होंने बहुत ही उत्तम सिखरन बनाई थी और श्रीकृष्ण भगवान ने बार बार माँग कर खाई थी उसके बनाने की विधि आगे ८७ सफ़े में लिखी है।
इमली का पन्ना—	पकी इमली को जल में भिगोकर खूब मसले; उस में सफ़ेद बूरा, गोल मिर्च, लौंग और कपूर आदि डाल कर खुशबूदार करले। इसी को इमली का पन्ना कहते हैं। यह पन्ना—वात विनाशक, पित्त और कफ करनेवाला, रुचिकारक और अग्निवर्द्धक है।
काँजी—	रुचिकारक, पाचक, अग्निदीपन करनेवाली, पेट का दर्द, अजीर्ण और मलबन्ध नाशक है और कोठे को अत्यन्त शुद्ध करनेवाला है।
तिलकुट—	तिलों को कूटकर उसमें गुड़ आदि मिलावे उसे तिलकुट कहते हैं। तिलकुट—मलकारक, वृष्य, वातनाशक,

कफ और पित्त कर्त्ता, पुष्टिदायक, भारी, चिकना और पेशाब की अधिकता को नाश करता है।

खील—छिलकों सहित चावल भाड़ में भुनाले। इस को लाजा या खील कहते हैं। खीलें—मीठी, शीतल, हलकी, अग्नि प्रदीपक, मल और मूत्र को कम करनेवाली, रूखी और बलदायक हैं। पित्त, कफ, वमन (क़य होना) अतिसार, दाह, खूनफिसाद, प्रमेह, मेद और प्यास को नाश करती हैं।

बहुरी—भाड़ में भुने हुए जौओं को धाना या बहुरी कहते हैं। यह बड़ी कठिनाई से पचनेवाली, भारी, रूखी, प्यास लगानेवाली है; लेकिन प्रमेह, कफ और वमन नाशक हैं।

हलुआ—पुष्टिकारक, वृष्य, बलकारक, वात और पित्तनाशक, चिकना, कफकारक, भारी, रुचिकारी और अत्यन्त तृप्तिकारक है।

गेहूँ की रोटी—बलकारक, रुचिकारक, पुष्टिकारक, धातु बढ़ानेवाली, वात नाशक, कफकारी, भारी और जिनकी अग्नि प्रदीप्त है उन को हितकारी है।

बाटी—पुष्टिकारक और वीर्य कारक है; पीनस, श्वास और खाँसी को आराम करती है।

जौ की रोटी—रुचिकारी, मीठी, विशद, हलकी, मलकारक, वीर्य-वर्द्धक, वातनाशक और बलकारी है; कफ सम्बन्धी रोगों को नाश करती है।

बेढई—बलदायक, वृष्य, रुचिकारक, वातनाशक, गरम, तृप्ति-दायक, भारी, पुष्टिकारक, अत्यन्त वीर्यवर्द्धक, मल-भेदक, मूत्रलानेवाली, दूध और मेद बढ़ानेवाली, सिप

और कफकारक है ; गुद-कील (गुदाके मस्से) अर्दित-वायु और श्वास आदि को नाश करती है।

पापड़— अँगारों पर भुना हुआ पापड़—अत्यन्त रुचिकारक, अग्निप्रदीपक, पाचक, रूखा और कुछ भारी है। यह गुण उड़द की दालके पापड़ों के हैं। मूँग के पापड़ों में भी यही गुण हैं, विशेषता यही है कि मूँगके पापड़ कुछ हलके और रुचिकारक हैं।

कुछ उत्तमोत्तम खाने की चीज़ें बनाने की विधि

श्रीकृष्ण की प्यारी रसाला।

(सिखरन)

पहिले ५१२ तोले (६ सेर, ६ छटाँक और २ तोले) भैंस का उत्तम दूध लावे। दूध में खटाई या जल न हो। उस दूधको मिट्टी की कोरी दो हाँड़ियों में जमा दे। दही में खट्टापानी न रहे तब उसको साफ़ कपड़े में रख कर २५६ तोला (३ सेर, ३ छ० और १ तोला) बहुत सफ़ेद बूरा इस तरह से डाले कि दही में थोड़ा बूरा डालकर नीचेको साफ बरतन में दही छनता जाय। पीछे इस में लौंग, इलायची, कपूर और काली मिर्च चतुराई से डाले यानी न तो अधिक होजाय न कम। कपूर वग़ैरः अधिक डाल देनेसे सिखरन बिगड़ जायगी। यही सिखरन भीमसेन ने बनाई थी और श्रीकृष्ण भगवानने परम प्रीति से बारम्बार माँग माँग कर खाई थी। इसी सिखरन के गुण इसी पुस्तक के ८५ सफ़े

में लिख आये हैं। इस के जो गुण लिखे हैं वह सब जाँच करने से ठीक पाये गये हैं।

आमका पन्ना।

कच्ची अमियाँ (केरियाँ) को जलमें औटा कर मल ले। पीछे सफ़ेद बूरा, शीतल जल, ज़रा सा कपूर और गोलमिर्च डाले। इसी को आमका प्रपानक या पन्ना कहते हैं। यह श्रेष्ठ पन्ना भीमसेन ने निकाला है। यह पन्ना तत्काल तृप्ति करनेवाला है।

नीबूका पन्ना।

एक भाग नीबू के रस में छः भाग चीनी का शरबत डालो। पीछे एक लौंग और दो चार गोलमिर्च डालो। इसी को नीबू का पन्ना कहते हैं। यह पन्ना—उत्तम, अग्नि को दीप्तकरनेवाला, रुचिकारी है। भोजन के पीछे पीनेसे सम्पूर्ण आहार को पचा देता है।

मनमोहन खीर।

दूध निखालिस ৴४	चाँदीके वरक़ १० माशे
चावल बढ़िया ৴।	किशमिश २) तोले
चीनी सफ़ेद ৴१	महीन कतरी हुई गिरी१) तोले
इलायचीके दाने ६ माशे	पिस्ताकतरे हुए १॥) तोले *
अर्क़ केवड़ा ६ माशे	बादामकी मिँगी साफ़ २) तोले

बनाने की तरकीब।

पहिले दूध औटावो। इसके बाद चावल उसमें छोड़ दो और कलछे से चलाते रहो। जब चावल गलजायँ तब उनमें किशमिश,

* पिस्ते बादाम और किशमिशों को पानी में ज़रा उबाल लेना। पीछे छिलके उतार कर चाकू से कतर लेना। दूध औटाने से पहले ही इनको तैयार कर लेना।

गिरी, पिस्ता, बादाम को मींगी और इलायची डालदो, पीछे नीचे उतारलो और चीनी भुरभुराके अर्क केवड़ा मिला दो। फिर रकाबियों में या कलई की हुई थालियों में निकाल लो और ऊपरसे चाँदीके वरक चिपकादो। यह खीर बलकारक, पुष्टिदायक, और वीर्य को बढ़ाने वाली है।

दूध।

ईश्वर ने अपनी अनुपम सृष्टि में जीवधारियों की प्राण रक्षा के लिये फल फूल शाक पात और अनाज आदि जितनी उत्तमोत्तम चीजें बनाई हैं उन में दूध सब से श्रेष्ठ है। दूध समस्त जीवधारियों का जीवन और सर्व प्राणियों के अनुकूल है। बालक, जब तक अन्न खाने योग्य नहीं होता तब तक, केवल दूध ही पीता है और उसी के बल से जीता रहता और बढ़ता है। इसी कारण दूध को, संस्कृत में, 'बाल--जीवन' भी कहते हैं। बालकों को ज़िन्दा रखने, निर्बलोंको बलवान करने, जवानों को पहलवान बनाने, बूढ़ों को बुढ़ापे से निर्भय करने, अनेक प्रकार के रोगियोंको रोग मुक्त करने, और कामियोंको इच्छा पूरी करने की शक्ति जैसी दूध में है और चीज़ों में नहीं है। संसार में जितनी धातुपौष्टिक, बलवर्द्धक, बुढ़ापे और व्याधियों को जीतनेवाली तथा स्त्री प्रसङ्ग में उत्साह बढ़ानेवाली औषधियाँ हैं उन में दूध सब से प्रथम स्थान पाने योग्य है। राज-सभाके भूषण और कवि शिरोमणि वैद्यश्रेष्ठ लोलिम्बराज अपनी कान्ता से कहते हैं :—

> सौभाग्यपुष्टिबलशुक्रविवर्धनानि।
> किं सन्ति नो भुवि बहूनि रसायनानि॥
> कन्दर्पवर्धिनि परन्तु सिताज्ययुक्ता—
> दुग्धादृते न मम कोऽपि मतः प्रयोगः॥

"क्या पृथ्वी में सौभाग्य, पुष्टि, बल, और वीर्य बढ़ाने वाली औषधियाँ बहुत सी नहीं हैं ? अर्थात बहुत हैं। हे कन्दर्प को बढ़ानेवालो! लेकिन मेरी समझ में घी और मिश्री मिले हुए दूध से बढ़ कर कोई नहीं है।" कोक में कोक-रचयिता ने भी कहा है :—

> धातु करन और बलधरन मोहि पूछै जो कोय।
> पय समान या जगत् में है नहिं दूसर कोय॥

भाव प्रकाश में सामान्यता से दूध के गुण इस प्रकार लिखे हैं :—

> **दुग्धं सुमधुरं स्निग्धं वातपित्तहरं सरम्।**
> **सद्यः शुक्रकरं शीतं सात्म्यं सर्वशरीरिणाम्॥**
> **जीवनं बृंहणं बल्यं मेध्यं वाजीकरंपरम्।**
> **वयस्थापनमायुष्यं सन्धिकारि रसायनम्।**
> **विरेकवान्तिबस्तीनां सेव्यमोजोविवर्द्धनम्॥**

"दूध—मीठा, चिकना, बादी और पित्त को नाश करनेवाला, दस्तावर, वीर्य को जल्दी पैदा करनेवाला, शीतल, सब प्राणियोंके अनुकूल, जीव-रूप, पुटि करनेवाला, बलदायक, बुद्धि को उत्तम करने वाला, अत्यन्त वाजीकरण, आयु को स्थापन करने वाला, आयुष्य, सन्धानकारक, रसायन और वमन विरेचन तथा वस्ति क्रिया के समानही ओज बढ़ानेवाला है।" उसी ग्रन्थ में और भी लिखा है :—"जीर्णज्वर, मानसिक रोग, उन्माद आदि, शोष, मूर्च्छा, भ्रम, संग्रहणी, पीलिया, दाह, प्यास, हृदय-रोग, शूल, उदावर्त्त, गोला, वस्तिरोग, बवासीर, रक्तपित्त, अतिसार, योनि-रोग, परिश्रम, ग्लानि, गर्भस्राव, इन में मुनियों ने दूध सर्वदा हितकारी कहा है। और भी लिखा है कि बालक, बूढ़े, घाव-

वाले, क्षीण हुए, भूख से दुर्बल अथवा मैथुन से दुर्बल हुए को दूध सदा अत्यन्त लाभदायक है।

सुश्रुत आदि ग्रन्थों में गाय, बकरी, भैंस आदि आठ प्रकारके दूधों का वर्णन किया है किन्तु हम यहाँ ग्रन्थ बढ़ जाने के भयसे गाय भैंस आदि दो तीन प्रकारके दूधों के गुण और दूध सम्बन्धी कुछ नियम लिख करके इस लेख को समाप्त करेंगे; क्योंकि घोड़ी हथनी आदि के दूध सिवाय कुछ विशेष प्रकार के रोगियोंके और बहुत कम लोग पीते हैं।

गाय का दूध।

गायका दूध—विशेष करके रस और पाक में मीठा, शीतल, दूध बढ़ानेवाला, चिकना, बादी, पित्त और रक्तविकार को नाश करता है; वात आदि दोषों, रस रक्त आदि धातुओं, मल और नाड़ियों को कुछ गीला करता है, भारी है और हमेशा पीनेवालों के सम्पूर्ण रोग और बुढ़ापे को नष्ट करता है। **काली गायका दूध**—वात नाशक और अधिक गुणवाला है। **पीली गाय का दूध**—पित्त तथा वातनाशक है। **सफ़ेद गायका दूध**—कफकारक और भारी अर्थात् देर में पचनेवाला है। **छोटे बछड़े वाली** और बिना बछड़ेवाली गायका दूध—त्रिदोष कारक होता है। **बाखरी** या बकन्न गायका दूध—त्रिदोष नाशक, तृप्तिकारक और बलदायक होता है। **जाँगल देश,** अनूपदेश और पहाड़ों में चरने वाली गायों का दूध—जाँगल देश की गायों का दूध भारी होता है; अनूपदेश की गायों का दूध जाँगल देश वालियोंसे भी अधिक भारी होता है और पहाड़ी गायों का दूध अनूपदेशवाली गायों से भी अधिक भारी होता है। गायें जो चीज़ खाती हैं उनके दूध में उसी चीज़ का चिकनापन होता है।

जो गायें थोड़ा अन्न खाती हैं उनका दूध भारी, कफकारक, बलवर्द्धक, अत्यन्त वृष्य और निरोग मनुष्योंको गुणदायक होता है। जो पयाल, करबी, घास, बिनौला आदि खाती हैं—उनका दूध अत्यन्त हितकारी जानना। यह वैद्यक ग्रन्थकारों का मत है। "ख़वासुल अदविया" यूनानी चिकित्सा अथवा हिकमत का निघण्टु है उसमें लिखा है :—गाय का दूध किसी क़दर मीठा और सफ़ेद मशहूर है। सिल, तपेदिक़ और फेफड़े के ज़ख्म को मुफ़ीद है। ग़म (शोक) को दूर करता है और ख़फ़क़ान (पागलपन) को फ़ायदेमन्द है। मैथुन शक्ति बढ़ाता है और चमड़े की रङ्गत साफ़ करता है। शरीर को मोटा करता है। तबियत को नर्म करता है। दिल दिमाग़ को मज़बूत करता है। मनी (वीर्य) पैदा करता है और जल्दी हज़म होता है।

भैंस का दूध।

भैंसका दूध---गायके दूधसे अधिक मीठा, चिकना, वीर्य बढ़ानेवाला, भारी, नींद लानेवाला, कफकारक, भूख बढ़ानेवाला और ठण्डा है। हिकमतकी किताबोंमें लिखा है कि भैंसका दूध---कुछ मीठा और सफ़ेद होता है और तबियतको ताज़ा करता है॥

बकरी का दूध।

बकरी का दूध—कसैला, मीठा, ठण्डा, ग्राही और हलका होता है। रक्तपित्त, अतिसार, क्षय, खाँसी और बुख़ार को आराम करता है। बकरी चरपरे और कड़वे पदार्थ खाती है; पानी थोड़ा पीती है और फिरनेका परिश्रम अधिक करती है; इसी कारण से बकरी का दूध सब रोगों को नाश करता है। यह तो वैद्यक की बात है। हिकमत की किताबोंमें लिखा है कि बकरी का दूध गर्मी के रोगों में अक्सर फ़ायदेमन्द है। गर्म मिज़ाजवालोंको ताक़त देता है। इसके ग़रग़रे (कुल्ले) करनेसे हल्क़

यानी कण्ठ के रोगोंमें बहुत फ़ायदा होता है। पेट को नर्म करता है। हल्क़ (कण्ठ) की ख़राश और मसाने के ज़ख्म को मुफ़ीद है। मुँह से खून आने, खाँसी, सिल (कलेजे की सूजन और उसमें मवाद पड़ना) और फेफड़े के ज़ख्ममें लाभदायक है।

भेड़ का दूध।

भेड़ का दूध—खारी, स्वादिष्ठ, चिकना, गरम, पथरी-रोग को नाश करनेवाला, हृदय को अप्रिय, तृप्तिदायक, हृष्य, वीर्य कफ और पित्त करनेवाला, बादी की खाँसी और बादी के रोगोंमें हितकारी है।

ऊँटनी का दूध।

ऊँटनी का दूध—हलका, मीठा, खारी, अग्निदीपक, दस्तावर है। कीड़े, कोढ़, कफ, अफ़ारा, सूजन और पेट के रोगों को नाश करता है।

धारोष्णदूध।

गाय भैंस आदि के थनों से दूध निकलते ही गरम होता है यानी थनों से गरम धार निकलती है। इसीसे उस दूध का नाम धारोष्ण-दूध रक्खा गया है। गाय के थनों से जो गरम गरम दूध निकलता है उसे वहाँ का वहाँ बिना विलम्ब और ज़मीन पर रक्खे बिनाही झटपट पीजाना अनेक ग्रन्थोंमें लाभदायक लिखा है। भावप्रकाशमें लिखा है:—

धारोष्णं गोपयो बल्यं लघुशीतं सुधासमम्।
दीपनञ्च त्रिदोषघ्नं तद्धारा शिशिरं त्यजेत्॥

गायका धारोष्ण दूध—बल बढ़ानेवाला, हलका, ठण्डा, अमृत के समान, अग्निको दीपन करनेवाला और त्रिदोष-नाशक है। गायका दूध दुहकर ठण्ढा हो गया हो तो आगपर गरम करके

पीवे। भैंसका दूध—धारोष्ण न पीना चाहिये। दुहने पीछे शीतल होजाय वही उत्तम है। भेड़ का दूध गरम गरम पीवे। बकरी का दूध औटाया हुआ ठण्डा कर के पीना हितकारी है। कच्चा दूध—अभिष्यन्दि, भारी, कफ और आम बढ़ाने वाला है; इस लिये गाय और भैंसके सिवाय सब कच्चे दूध अपथ्य समझने चाहियें।

गरम किया हुआ दूध।

औटाया हुआ गरम दूध—कफ और बादीको नाश करता है; अगर गरम करके ठण्डा कर लिया जाय तो पित्त को नाश करता है। अगर कच्चे दूधमें आधा पानी मिलाकर औटाया जाय और जब पानी जलकर दूध मात्र रहजाय तब वह दूध कच्चे दूध से भी अधिक हलका है। बिना पानी मिलाया हुआ दूध, जितना ही ज़ियादह औटाया जाय उतना ही अधिक भारी, चिकना, धातु पैदा करनेवाला और बल बढ़ानेवाला होता है।

चीनी मिला हुआ दूध।

चीनी या खाँड़ पड़ा हुआ दूध—कफकारक और बादी को नाश करने वाला है। साफ़ बूरा या मिश्री मिला हुआ दूध—वीर्य बढ़ानेवाला और त्रिदोष को नाश करनेवाला है।

दूधकी मलाई।

संस्कृतमें मलाई को 'सन्तानिका' कहते हैं। मलाई—भारी, शीतल, वीर्य पैदा करनेवाली, तृप्ति करनेवाली, पुष्टिदायक, चिकनी, कफ, बल और वीर्यको बढ़ानेवाली है; पित्त, रक्तविकार और बादीको नाश करती है।

सूचना।

(१) सवेरेका दूध संध्याके दूधसे भारी और शीतल होता है

संध्याकालका दूध सवेरेके दूधसे हलका और वात तथा कफको नष्ट करता है।

(२) दोपहरके पहले जो दूध पिया जाता है वह बलवर्द्धक पुष्टिकारक और अग्निवर्द्धक होता है। मध्यान्हकाल यानी दोपहरको दूध पीनेसे बलकी वृद्धि एवं अग्निदीपन होती है और कफ तथा पित्तका नाश होता है। रातको दूध पीना—बालकोंकी वृद्धि करता है, क्षय-रोगका नाश करता है, बूढ़ोंका वीर्य बढ़ाता है, अत्यन्त पथ्य, अनेक दोषोंको शान्त करनेवाला और आँखोंके लिये हितकारी है।

(३) रातको केवल दूध ही पीना चाहिये। उसके साथ भोजन आदि न करे। कोई कोई ऐसा कहते हैं कि रातमें दूधके साथ भोजन करनेसे अजीर्ण होजाता है और नींद नहीं आती।

(४) दिनमें जो दाह करनेवाले पदार्थ खाये पिये हों उन सेपैदा हुए दाहकी शान्तिके लिये नित्य रातमें दूध पीना चाहिये। जिनकी अग्नि तेज़ है उनको, कमज़ोरोंको, बालकोंको, बूढ़ों को और जवानोंको दूध अत्यन्त हितकारी पथ्य और तत्काल वीर्य बढ़ानेवाला है।

(५) जिस दूधका रङ्ग बदल गया हो, या जिसका स्वाद बिगड़ गया हो, जो खट्टा हो गया हो, जिसमें बदबू आती हो, जो फट गया हो या जिसमें नमक वग़ैरः मिल गया हो, उस दूधको कभी न पीना चाहिये; क्योंकि ऐसा दूध पीनेसे बुद्धि आदि नष्ट होजाती हैं।

दही ।

दही—गरम * अग्निप्रदीपक, चिकना, कुछ कसैला, भारी और पाकमें खट्टा है और श्वास, पित्त, रक्तविकार, सूजन, मेद तथा कफ करता है; लेकिन मूत्रकृच्छ्र, ज़ुकाम, शीत, विषमज्वर, अति-सार, अरुचि और दुर्बलता, इन सबमें अत्यन्त हितकारी और बल वीर्य बढ़ानेवाला है।

गायका दही ।

गायका दही—विशेष करके मीठा, खट्टा, रुचिकारक, पवित्र अग्निप्रदीपक, हृदयको प्रिय, पुष्टिकारक और वात नाशक है। सब दहियोंसे गायका दही उत्तम होता है।

भैंसका दही ।

भैंस का दही—बहुत चिकना, कफकारक, वात और पित्त नाशक, पाकमें मीठा, अभिष्यन्दि, वृष्य, भारी और रक्तविकार नाशक है।

बकरीका दही ।

बकरीका दही—उत्तम, ग्राही, हलका, त्रिदोष नाशक और अग्निदीपक है; श्वास, खाँसी, बवासीर, क्षय रोग और दुर्बलता में हितकारी है।

शक्कर मिला हुआ दही ।

बूरा मिला हुआ दही—श्रेष्ठ है; प्यास, पित्त, रक्तविकार

* लेकिन खुलासुलअदविया नामक हिकमतके निघण्टु में लिखा है कि दही—किसी क़दर तुर्श और सफ़ेद है। तासीरमें सर्दतर है। सर्द मिज़ाजवालों और मेदेको नुक़सान पहुँचाता है। अगर दहीको चहरे पर मलें तो चहरेको खुश्की और झाँईको नाश करता है। गर्म मिज़ाजवालों और प्यासको तसकीन देता है; देरमें हज़म होता है; फ़रबही बढ़ाता है; और बाहको क़ुव्वत देता है।

और दाह नाशक है। गुड़ मिला हुआ दही—वातनाशक, तृप्ति, पुष्टिकारक, तृप्तिदायक और भारी है।

दही खानेके नियम।

(१) रातमें दही न खाना चाहिये। यदि खाना ही हो तो बिना घी और बूरेके, बिना मूँगकी दालके, बिना शहदके, बिना गरम किये हुये, और बिना आँवलोंके न खावे। जैसा ऊपर लिख आये हैं घी बूरा आदि मिलाकर, रातमें, दही खा सकते हैं। अगर रक्तपित्त और कफ सम्बन्धी रोग हों तो किसी तरह भी दही न खावें।

(२) * हेमन्त, शिशिर और वर्षा, इन तीनों ऋतुओंमें दही खाना उत्तम है ; लेकिन शरद, ग्रीष्म और वसन्त ऋतुमें दही खाना ठीक नहीं है।

नोट :—जो नियम विरुद्ध दही खाता है उसे ज्वर, रक्त-विकार, पित्त, विसर्प, कोढ़, पीलिया, भ्रम और भयङ्कर कामला रोगमें फँसना पड़ता है।

माठा।

जिसमें से बिलकुल घी निकाललिया हो वह मट्ठा † पथ्य और अत्यन्त हलका होता है। जिसमेंसे थोड़ा घी निकाला हो वह

---

* हेमन्त=अगहन और पूस। शिशिर=माघ और फागुन। वर्षा=सावन और भादों। शरद=क्वार और कातिक। ग्रीष्म=जेठ और अषाढ़। वसन्त=चैत और बैशाख।

† जो दही चौथा भाग पानी डालकर बिलोया जाय वही तक्र या माठा कहलाता है। कोई इसको मट्ठा और कोई छाछ कहते हैं।

मट्ठा ऊपरकी मट्ठे से भारी, हृष्य और कफ कारक होता है। जिस में से बिलकुल घी न निकाला हो वह माठा गाढ़ा, भारी, पुष्टिकारक और कफकारक होता है।

बादीमें—सोंठ और सेंधा नमक मिला हुआ खट्टा माठा उत्तम होता है। पित्तमें—बूरा मिला हुआ मीठा माठा अच्छा होता है। कफकी वृद्धि में—सोंठ, काली-मिर्च और पीपल मिला हुआ माठा उत्तम होता है।

जाड़ेके मौसम, अग्निकी मन्दता, वात रोग, अरुचि और नाड़ियोंकी अवरोध में, तक्र यानी **माठा** अमृतकी समान काम करता है। विष, वमन, जी-मिचलाना, विषम-ज्वर, पीलिया, मेद, संग्रहणी, बवासीर, मूत्रकृच्छ्र, भगन्दर, प्रमेह, गोला, अतिसार, शूल, तिल्ली, पेटके रोग, अरुचि, सफेद कोढ़, प्यास और कीड़ोंको **माठा** नाश करता है।

गर्मीके मौसममें, घावमें, दुर्बलतामें, मूर्च्छा में, भ्रम, दाह और रक्तपित्तज-रोग में माठा कभी न पीना चाहिये।

मट्ठा पीनेकी विधि।

भावप्रकाशमें लिखा है कि अत्यन्त गाढ़ा और खट्टा भैंसका दही लेकर उसमें दहीसे चौथाई पानी डालकर मिट्टीके बरतनमें रई से बिलोवे। इसमें भुनी हुई हींग, ज़ीरा, नमक और कुछ राई पीस कर मिला दे तो मट्ठा तैय्यार हो जायगा। यह मट्ठा यानी छाछ किसको प्रिय नहीं? यह छाछ रुचिकारी, अग्नि को दीपन करनेवाली, अत्यन्त पाचन, पेटके सम्पूर्ण रोगोंको नष्ट करनेवाली और तृप्तिकारक है।

पानी ।
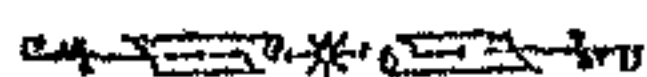
* स्थावर और † जङ्गम यानी वृक्ष लता आदि वनस्पतियों तथा जलचर थलचर नभचर समस्त जीव-धारियों को जल की परम आवश्यकता है। सच तो यह है कि इन सबका जीवन ही जल से है। आहार न मिलने से प्राणी एक दम मर नहीं सकते, किन्तु जल बिना किसी तरह नहीं जी सकते। 'मदन पाल निघण्टु' में लिखा है :—पानीयं प्राणिनां प्राणा विश्वमेव हि तन्मयम्।—अर्थात् पानी प्राणियों का प्राण है, संसार पानीसे ही उपजता है। महर्षि हारीत लिखते हैं :—तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान्विमुञ्चति।—अर्थात् प्यासे को पानी न मिलने से बेहोशी हो जाती है और बेहोशीसे प्राण छूट जाते हैं।

अब यह सवाल पैदा होता है कि हमें प्यास क्यों लगती है और हम जो इतना पानी पीते हैं वह कहाँ जाता है? अगर किसी आदमी का वज़न किया जाय और वह तोल में ७५ सेर निकले तो उसमें ५६ सेर पानी समझना चाहिये। हम जो आहार करते हैं उसका पेट में रस खिंचता है। रस का रक्त बन जाता है। रक्त छोटी छोटी नलियों में होकर सारे बदन में चक्कर लगाता है। चक्कर लगाने से खून गाढ़ा होजाता है। तब खून के गाढ़े होने पर खुश्की पैदा होती है और हमें प्यास लगती है। अगर हम पानी न पियें तो खून इतना गाढ़ा होजायगा कि वह छोटी छोटी नालियों में न बह सकेगा। इनमें से बहुत सी नालियाँ तो बाल से भी पतली होती हैं। हम जो पानी पीते हैं वह खून

---

* स्थावर चार प्रकारके होते हैं:—वनस्पति, वृक्ष, लता और औषधि।

† जङ्गम भी चार प्रकारके होते हैं :— (१) जरायुज (मनुष्य, गाय भैंस आदि), (२) अण्डज (सर्प, पक्षी और मछली आदि), (३) स्वेदज (जूँ वगैर.) (४) उद्भिज्ज (बीरबहूटी गैंडक वगैर:)

में मिल जाता है और इस तरह शरीर के प्रत्येक भाग में पहुँचता है। खून के दौरा करने से हमारी ज़िन्दगी है और खून की चाल जारी रखने के लिये पानी की ज़रूरत है। इसवास्ते हम को, सदा, साफ़ पानी पीना चाहिये। अगर हमलोग मैला या दूषित जल पियेंगे तो हमारा स्वास्थ्य, निस्सन्देह, बिगड़ जायगा। आयुर्वेदमें दो प्रकार का जल लिखा है। (१) आन्तरिक्ष यानी आकाशीय जल (२) भौम यानी पृथ्वी का जल।

आन्तरिक्ष जल।

आन्तरिक्ष अथवा आकाशीय जल चार प्रकार का होता है— (१) धार-जल (मेह की बूँदों याधारा का जल), (२) कार-जल (ओलों का जल), (३) तौषार-जल (ओस की बूँदों का जल), (४) हैम-जल (पर्वतों से पिघली हुई बर्फ़ का पानी)। इन चारों प्रकार के आकाशीय जलोंमें से पहिला यानी **धार-जल** मुख्य माना है। धार-जल भी दो भाँति का लिखा है :—(१) गांग-जल, (२) सामुद्र-जल। इन दोनों में भी **गांग-जल** को प्रधान माना है।

गांग-जल।

गांग-जल, आश्विन यानी कुआँर के महीने में बरसता है *। सामुद्र-जल, आषाढ़, सावन और भादों में बरसता है; लेकिन कभी कभी कुआँर में सामुद्र-जल† भी बरसता है; इसवास्ते

---

* सूरज की गर्मी से समुद्रका जल भाफ़ की सूरत में ऊपर उठकर बादल बन जाता है और वही जल ओला ओस और मेह की सूरत में ज़मीन पर गिरता है। समुद्र का पानी भारी होता है इस लिये बहुत ऊँचा नहीं जाता और प्रायः आषाढ़, सावन और भादों में बरसता है; किन्तु गङ्गाजल हलका होता है इस जलसे बनी भाफ़ बहुत ऊँची जाती है और मेह के रूपमें आश्विन मे पृथ्वी पर गिरती है।

† सुश्रुतमें लिखा है कि आश्विन (कुआँर) के महीनेमें ग्रहण किया हुआ सामुद्र-जल भी गांग-जल के समान होता है; किन्तु फिर भी गांग-जल प्रधान है।

परीक्षा करके गांग जल समझना और लेना चाहिये। हारीत ऋषि लिखते हैं कि बुद्धिमान **गांग-जल*** को धारण करे। क्योंकि **गंगा-जल**—पवित्र, बलदायक और रसायन है; थकाई, ग्लानि और प्यास को नाश करता है; हलका है, और खुजली, मूर्च्छा, प्यास-रोग, वमन, मूत्राघात को नाश करता है।

गांग-जल लेने की विधि।

एक साफ़ सफ़ेद बड़ा कपड़ा ऊँचा बाँध दो। उसके नीचे बरतन रख दो। पानी भर जायगा। इस जलको चाँदी, सोने या मिट्टी के बरतन में भरकर रख दो और सर्व्वकाल में उपयोग करो।

गांग-जल की परीक्षा।

चरक में लिखा है:—"जिस जलमें भिगोये हुए चावल जैसेके तैसे रहजायँ वही सम्पूर्ण दोषनाशक गांग-जल जानना चाहिये। जिसमें ये गुण न हों वह सामुद्र-जल समझना चाहिये।" सुश्रुतमें लिखा है:—"शालीचावलों को ऐसा पकावे कि वह जल भी न जायँ और उनमें किरी भी न रहे। पीछे पके हुए चावलों की साफ़ पिन्डी सी बनाकर, चाँदीके बरतनमें रखकर, बरसते मेहमें बाहर रख दे। अगर एक मुहूर्त्त † भर वैसी की वैसी पिन्डी बनी रहे यानी न तो पिन्डी बिखरे, न घुलकर जल गदलाहो, तो जाने कि गांग-जल बरसता है।" जहाँ तक बन पड़े गांग-जल इकट्ठा कर रक्खे। यदि गांग-जल किसी कारणवश न रख सके तो **भौम-जल** को काममें लावे।

---

* हारीत लिखते हैं कि सूरज दिखता हो और मेह बरसता हो तो उस मेघ की धारा का जल भी गांग-जल के समान होता है।

† नोटः—मुहूर्त्त—दिन रातके तीसवे भागको कहते हैं।

भौम जल अथवा पृथ्वीका जल।

जो जल पृथ्वी से लिया जाता है उसे "भौम जल" कहते हैं। यह तीन प्रकार का होता है :—(१) जाङ्गल-जल, (२) आनूप-जल, (३) साधारण-जल।

जाँगल-जल।

जिस देश में थोड़ा पानी और कम दरख्त हों तथा जहाँ पित्त और वात सम्बन्धी रोग हों उस देश को जाँगल-देश कहते हैं। जाँगल-देश के जल को "जाँगल-जल" कहते हैं। यह जल—रूखा, खारी, हलका, पित्तनाशक, अग्निकारक, कफ नाशक, पथ्य और अनेक विकारों को नाश करता है।

आनूप-जल।

जिस देश में पानी की इफ़रात हो, वृक्षों की बहुतायत हो और जहाँ वात तथा कफ के रोग होते हों उस देश को आनूप-देश कहते हैं। इस देश के जल को अनूप-जल कहते हैं। यह जल—अभिष्यन्दि, मीठा, चिकना, गाढ़ा, भारी, मन्दाग्नि करनेवाला, कफकारी, हृदय को प्रिय और अनेक विकार पैदा करनेवाला होता है।

साधारण-जल।

जिस देशमें जाँगल और अनूप दोनों देशोंके लक्षण पायेजावें उस देशको साधारण देश कहते हैं और ऐसे देशके जलको "साधारण-जल" कहते हैं। यह जल—मीठा, अग्निदीपक, शीतल, हलका, तृप्तिकर्त्ता, रुचिकारक, प्यास, दाह और त्रिदोष को नाश करनेवाला होता है।

नदियोंका-जल।

नदियोंका पानी सामन्यता से रूखा, वातकारक, हलका,

अग्निप्रदीपक, अभिष्यन्दि नहीं, विशद, चरपरा, कफ और पित्त नाशक होता है। जो नदियाँ तेज़ी से बहती हैं और जिनका पानी साफ़ यानी निर्मल होता है वे हलके जलवाली समझी जाती हैं। जो नदियाँ सिवार से ढकी रहती हैं, धीरे धीरे बहती हैं और जिन का जल मैला होता है वह भारी जलवाली समझी जाती हैं। गङ्गा * सतलज, सरयू और जमुना आदि नदियाँ, जो कि हिमालय पहाड़से निकली हैं, जलकेलिये उत्तम समझी जाती हैं। सुश्रुत में लिखा है कि पश्चिम † को बहनेवाली नदियाँ पथ्य हैं क्योंकि उनका जल हलका है। पूरब § को बहनेवाली नदियाँ अच्छी नहीं हैं क्योंकि उनका जल भारी है। दक्खन को बहनेवाली नदियाँ बहुत दोषल नहीं हैं क्योंकि उनका जल साधारण है। इस विषय में मदनपाल निघण्टु आदि ग्रंथोंमें बहुत विस्तार से लिखा है। वह सब लिखने से ग्रन्थ बढ़ने का भय है। नदी, तालाब, कूआँ आदि जिस देशमें हों उस देशके अनुसार ही उनके जलके गुण दोष समझने चाहियें।

औद्भिद जल।

जो जल नीचे से धरती को फाड़ कर बड़ी धार से बहता है उसको "औद्भिदजल" कहते हैं। धरती से निकलाहुआ पानी---पित्तनाशक, दाहकारक नहीं, अत्यन्त शीतल, तृप्तिकारक, मीठा, बलदायक, कुछ कुछ वातकारक और हलका होता है।

नैर्झर जल।

जो जल पहाड़ोंके झरनोंसे झरता है उसे 'नैर्झर' या झरने का जल कहते हैं। झरने का जल—रुचिकारक, कफनाशक,

* गङ्गा नदी का जल सब जलों से उत्तम समझा जाता है।

† लूनी, साबी, नर्बदा और तापती आदि पच्छमको बहती हैं।

§ कावेरी, कृष्णा, गोदावरी, और महानदी आदि पूरब को बहती हैं। सिन्ध, सतलज, रावी चनाब आदि दक्खन को बहती हैं।

अग्निप्रदीपक, हलका, मीठा, पाकमें चरपरा, वातनाशक और पित्तल होता है।

सारस जल।

पहाड़ वगैरः से रुका हुआ नदीका पानी जहाँ इकट्ठा होता है और वह जल कमलों से ढका हो तो उस जलको "सारसजल" कहते हैं। सारस यानी सरोवर का जल—बलदायक, प्यासनाश करनेवाला, मीठा, हलका, रुचिकारक, रूखा, कसैला और मल मूत्रको बाँधनेवाला होता है।

तालाब का जल।

तालाबका जल—मीठा, कसैला, पाकमें चरपरा, वातकारक, मलमूत्र को बाँधनेवाला, खून-फ़िसाद, पित्त और कफको नाश करनेवाला होता है।

बावड़ी का जल।

सीढ़ियोंवाले चौड़े कुएँ को बावड़ी कहते हैं। बावड़ी का जल—अगर जल खारी हो तो पित्तकारक और कफ तथा बादी को नष्ट करता है। मीठा जल हो तो कफ कारक और वात तथा पित्त को नष्ट करता है।

कुएँ का जल।

कुएँ का जल—अगर मीठा हो तो त्रिदोष-नाशक, हितकारक और हलका समझना चाहिये। अगर खारी हो तो कफ वात-नाशक, अग्निदीपन करनेवाला और अत्यन्त पित्तकारक समझना चाहिये।

विकिर-जल।

नदी आदिके पास रेतीली धरती होती है। उसको खोदनेसे जो जल निकलता है उसको "विकिर-जल" कहते हैं। यह पानी—शीतल, साफ़, निर्दोष, हलका, कसैला, मीठा और पित्तनाशक होता है। अगर यह पानी खारी हो तो कुछ पित्तकारक होता है।

वृष्टि-जल ।

ज़मीन पर पड़ा हुआ 'बरसात का पानी' पहिले दिन अपथ्य रूप होता है ; लेकिन गिरने से तीनदिन पीछे, साफ़ होजाने पर, अमृत समान होता है ।

चौञ्च-जल ।

जो गड्ढा शिलाओं से व्याप्त हो और उसका जल अञ्जन के समान नीला हो और जो अनेक लताओं से ढका हुआ हो उसको "चौञ्च्य" कहते हैं । 'चौञ्च्यजल'—अग्निकारक, रूखा, कफनाशक, हलका, मीठा, पित्तनाशक, रुचिकारक, पाचन और स्वच्छ है ।

अंशूदक-जल ।

जिस जलाशय पर दिन भर सूरज की किरणें पड़ती हैं और रातभर चन्द्रमा की किरणें पड़ती हैं उस जलाशय का जल हित-कारी होता है । ऐसे जलाशय के जलको "अंशूदक" * कहते हैं । अंशूदक जल—चिकना, त्रिदोषनाशक, अभिष्यन्दि नहीं, निर्दोष, आन्तरिक्ष या आकाशीय जलके समान, बलकारक, बुढ़ापे और रोगोंको नाश करनेवाला, बुद्धिके लिये हितकारी, शीतल, हलका और अमृत के समान होता है ।

ऋतु अनुसार जल पीनेकी विधि ।

वर्षाऋतुमें—कुएँ और झरनेका जल पीना हितकारी है ।

शरदऋतुमें—नदीका अथवा अंशूदक जल पीना लाभदायक है

हेमन्तऋतुमें—सरोवर और तालाबका जल हितकारी है ।

---

* अगर निवास-स्थानमें ऐसा जलाशय न हो तो एक साफ़ घड़ेमें जल भर कर ऐसी जगह रख दो जहाँ उस जल पर दिन भर सूरज की किरणें पड़ें और रात भर चन्द्रमा की किरणें पड़ें । दूसरे दिन उसे छानकर दूसरे घड़े में भर लो और उस ख़ाली घड़े में फिर जल भर कर उसी स्थान में रख दो—यह भी "अंशूदक" जल है ।

वसन्तऋतुमें-कुआँ बावड़ी और पर्वतके झरनेका जल अच्छा है

ग्रीष्मऋतुमें—कुएँ और झरनेका जल हितकारी है।

प्रावृटऋतुमें—कुएँका या झरनेका जल पीना ठीक है।

जल भरनेका समय।

नदी, तालाब, सरोवर और कुएँ वगैर: का जल बड़े सवेरे ही भर लेना चाहिये; क्योंकि उस वक्त इनका जल साफ़ और शीतल रहता है। जो जल शीतल और निर्मल होता है वही उत्तम होता है।

अच्छे और बुरे जल की पहिचान।

जिस पानीमें बदबू न हो, किसी प्रकारका रस न हो, जो जल बहुत शीतल, प्यास मिटानेवाला, निर्मल, हलका और हृदयको प्यारा हो वह जल गुणकारी और अच्छा होता है। अङ्गरेज़ीमें भी लिखा है:—Good water is clear, without taste or smell, & free from any decaying matter. अर्थात् अच्छा पानी वह होता है जो निर्मल, स्वाद या गन्ध रहित होता है और जिसमें कुछ सड़ी हुई चीज़ नहीं होती।

जिस जलमें रेशे से हों, कीड़े, पत्ते, सिवार और कीचसे ख़राब हो गया हो, वर्ण और रस रहित हो, गाढ़ा या बदबूदार हो वह अहितकारी यानी ख़राब है।

जल साफ़ करनेकी विधि।

जल प्राणियोंका जीवन है, इसवास्ते जहाँ तक हो सके ख़ूब साफ़ जल पीना चाहिये। निर्मल पानी पीनेसे बीमारियाँ कम होती हैं। सुश्रुतमें जल साफ़ करनेकी सात चीजें लिखी हैं;—
(१) कैथके फलोंके बीजोंको निर्मली कहते हैं। निर्मलीकी गिरी पानीमें पीस कर गदले पानीमें मिला दो और थोड़ीदेर

रक्खा रहने दो। सब गाद नीचे बैठजायगी और जल नितर कर साफ़ हो जायगा। (२) गोमेद जलमें डाल देनेसे जल साफ़ हो जाता है। (३) कमलकी जड़, (४) सिवालकी जड़, पानीमें डाल देनेसे भी जल साफ़ हो जाता है। (५) कपड़े में छान लेनेसे भी जल साफ़ हो जाता है (६) मोती (७) और मरकत-मणिसे भी जल साफ़ होजाता है।

भाव प्रकाश में लिखा है :—दूषित जल गर्मकर लेनेसे ; सूरज की किरणोंसे तपाने से ; अथवा सोना, चाँदी, लोहा, पत्थर और बालू को आगमें तपाकर जल में बुझाने से ; चमेली, कपूर, केशर और पाढ़र आदि द्वारा सुवासित करने से ; कपड़े में छानने से ; सोना मोती वगैरः से साफ़ करने से स्वच्छ और दोष-रहित हो जाता है। अगर कुछ भी न होसके तो पानी को गरम करले ; क्योंकि औटाने से पानी की बुरी हवा निकल जाती है, हानिकारक पदार्थ जो उस में घुले रहते हैं नीचे बैठ जाते हैं, छोटे २ कीड़े जो आँखों से नज़र नहीं आते * मर जाते हैं। गरम किया हुआ पानी बहुत अच्छा होता है। फ़िल्टर द्वारा पानी साफ़ करने की तरकीब भी बहुत अच्छी है। एक तिपाई पर चार घड़े तले ऊपर रक्खो। ऊपर के तीन घड़ों की पेंदी में बारीक २ छेद करो। सब से ऊपर के घड़े में साफ़ कोयला, दूसरे में कांकड़ और तीसरे में बालू भर दो और नीचे का घड़ा ख़ाली रक्खो। पीछे सबसे ऊपरके घड़े में आहिस्ते २ † जल भर दो। ऊपर के तीन घड़ों में होकर जो पानी चौथे घड़े में भर जायगा वह पानी बहुतही साफ़ होगा। मैले पानी में ज़रासी

---

* छोटे छोटे कीड़े जिनको आँखोंसे हम नहीं देख सकते वे ख़ुर्दबीन शीशेकी मददसे, जिसको अङ्गरेजीमें माईक्रोसकोप (Microscope) कहते हैं देखे जा सकते हैं—यह सौदागरोंकी दूकानों पर मिलता है।

† अगर पानी औटा कर घड़े में भरा जायतो बहुत ही उत्तम पानी तैयार होगा।

फिटकरी डाल देनेसे भी जल साफ़ हो जाता है। किसी तरह हो पानी अवश्य साफ़ करके पीना चाहिये। जिस कुएँ या ताल वगैर: का पानी पिया जाता हो उस में मल-मूत्र फेंकना, नहाना, मैले कपड़े धोना, मैले घड़े डालना अनुचित है।

जल ठण्डा करनेकी तरकीबें।

जल ठण्डा करने की सात तरकीबें सुश्रुत में लिखी हैं ;—

(१) मिट्टी के साफ़ कोरे घड़े में पानी भर कर हवा में रख देनेसे, (२) किसी चौड़े और बड़े बरतन में बर्फ़ या बर्फ़ का जल भरकर उसमें पानी का भरा हुआ बरतन रख देनेसे, (३) पानी के बरतन को लकड़ी या काठ की फिरकी से ऊँचा नीचा करने से, (४) चौड़े बरतन में पानी भर कर पंखे की हवा करने से, (५) पानी के भरे बरतन के चारों तरफ़ जलका भीगा कपड़ा लपेटनेसे, (६) पानीके भरे घड़े को बालू या रेत में गाड़ देनेसे, (७) पानीके भरे बरतन को छींके पर रख कर हिलाते रहनेसे पानी ठण्डा होजाता है।

जलसम्बन्धी नियम।

(१) अगर ज़ियादह पानी पिया जाय तो अन्न अच्छी तरह नहीं पचता, अगर जल पिया ही न जाय तो भी अन्न नहीं पचता, इसवास्ते मनुष्यको अग्नि बढ़ानेके लिये थोड़ा थोड़ा जल बार-म्बार पीना उचित है।

(२) पानी को सदा औटा कर और फिल्टर की विधि से छान कर पीना उचित है। मैला पानी पीनेसे हैज़ा आदि रोग होजाते हैं और मनुष्य, बहुधा, अकाल मृत्यु से मरजाते हैं अगर मरते नहीं तो मलेरिया ज्वर से दुःख भोगते हैं या फोड़े फुन्सी खुजली आदि चर्मरोगों से सड़ते हैं।

(३) गदला, कमलके पत्तों और शिवार आदि से ढका हुआ, बुरी जगहका, सूरज और चन्द्रमाकी किरणें जिस जल पर न पड़ती हों, बे मौसम का वर्षा हुआ पानी जो तीन दिन तक न रक्खा रहा हो और दूषित जलको सदा त्याग देना चाहिये अर्थात ऐसे जल न पीने चाहिये। ऐसे जलमें स्नान करनेसे और ऐसा पानी पीने से तृषा, अफ़ारा, जीर्णज्वर, खाँसी, अग्नि की मन्दता, खुजली, गलगण्ड आदि रोग पैदा हो जाते हैं।

(४) जिस को मूर्च्छा, पित्त, गरमी, दाह, विष, रुधिर-विकार, मदात्यय, * परिश्रम, भ्रम, तमक-श्वास, वमन, और ऊर्ध्वगत-रक्तपित्त इन में से कोई रोग हो या जिसका अन्न जल गया हो उसे शीतल-जल पीना चाहिये।

(५) पसली के दर्द में, जुकाम में, बादीके रोगोंमें, गलग्रह रोग में, अफ़ारेमें, दस्तक़ब्ज़ की हालत में, जुलाब लेने पर, नये बुख़ार में, संग्रहणी रोग में, गोलेके रोग में, श्वासमें, खाँसी में, विद्रधि में, हिचकी रोगमें और स्नेह पीने पर शीतल जल न पीना चाहिये।

(६) अरुचि, जुकाम, मन्दाग्नि, सूजन, क्षय, मुँह से जल बहना, पेट के रोग, कोढ़, आँखों के रोग, बुख़ार, व्रण और मधु-मेह में थोड़ा पानी पीना चाहिये।

(७) मद्यपान से पैदा हुए रोग में, पित्तके रोगमें सन्निपात रोग में, दाह, अतीसार, पित्तरक्त रोग, मूर्च्छा, मद्य और विष की पीड़ा में, तृषा (प्यास)रोग में, छर्दि (वमन) रोग में और भ्रम में औटाकर शीतल कियाहुआ पानी अच्छा है। यह सुश्रुत का मत है।

---

* नोट—मदात्यय, तमक-श्वास, ऊर्ध्वगत-रक्तपित्त, गलग्रह, आदि शब्दों की परिभाषा या और दूसरे दूसरे कठिन शब्दों का अर्थ इसी पुस्तक के अन्त में देखिये।

(८) वैद्यक-शास्त्र में लिखा है कि शीतल जल पिया हुआ दो-पहर में पचता है। गरम करके ठण्ढा किया हुआ जल पीने से एक पहर में पचता है। और किसी क़दर गरम ही पानी पीने से चार घड़ी में पचता है; लेकिन गरम पानी पीने में अच्छा नहीं लगता; इसलिये पानी औटाकर ठण्ढा कर लिया जावे और वही पिया जावे तो उत्तम है।

(९) जब प्यास लगे तब साफ़ पानी अवश्य पीना चाहिये; किन्तु एक बार ही लोटाका लोटा पानी झुका जाना उचित नहीं है। कई बारमें थोड़ा थोड़ा जल पीना ठीक है।

(१०) भोजनके पहले पानी पीनेसे कमजोरी हो जाती है और अन्तमें पीनेसे शरीर मोटा हो जाता है; इसवास्ते भोजनके बीचमें थोड़ा थोड़ा पानी पीना अच्छा है। भोजन कर चुकते ही पानी न पिये। भोजन करनेके घण्टे आध घण्टे बाद जल पीना ठीक है।

(११) अगर बिना भोजन किये ही प्यास लगे तो पानीके बदले शरबत या शर्करोदक * पीले या कुछ खाकर पानी पीवे जिससे हानि कम हो। निहार मुँह पानी पीना अच्छा नहीं है। हिकमतकी किताबोंमें लिखा है कि निहार मुँह जल पीनेसे अनेक रोग हो जाते हैं और बुढ़ापा जल्दी आजाता है; लेकिन वैद्यक में लिखा है कि,जो शख़्स सूरज उदय होनेसे पहले यानी तारोंकी छायामें आठ अञ्जली पानी पीता है वह वात, पित्त और कफको जीत कर १०० वर्ष तक जीता है। इसका खुलासा बयान आगे लिखेंगे।

---

* नोट—ठण्ढे पानीमें सफ़ेद चीनी या मिश्री घोल कर उसमें कपूर, लौंग, इलायची और गोलमिर्च जरा जरासी डालदे। इसीको विद्वान लोग शर्करोदक कहते हैं। यह शीतल, वीर्यवर्द्धक, दस्तावर, रुचिकारक, स्वादिष्ट और हलका है। बादी, पित्त, मूर्च्छा वमन, प्यास, दाह, और ज्वर नाश करता है।

(१२) रातमें जागतेही पानी पी लेनेसे नज़ला पैदा होजाता है। परिश्रम, मैथुन, स्नान और खरबूजे तरबूज़ आदि तर मेवों के पीछे भी, तत्काल, जल पीना मना है। परिश्रम, कसरत, मैथुन आदिके पीछे और पसीनोंमें जल पीनेसे ज़ुकाम खाँसी आदि रोग होजाना सम्भव है।

(१३) यद्यपि पानी प्राणोंका प्राण है तथापि अधिक पीनेसे हानि करता है। इसवास्ते प्यास लगने पर थोड़ा थोड़ा पानी पीना उचित है।

(१४) अगर सफ़रमें तरह तरहका जल पीनेका मौका पड़ जाय तो उस जलका अवगुण दूर करनेको कच्ची प्याज़ खायँ। जो प्याज़से परहेज़ रखते हों वह हलकीसी भँग पीवें। जिन्हें कुछ भाँग पीनेका अभ्यास होता है उन्हें कहींका पानी नहीं लगता।

भोजन-परीक्षा।
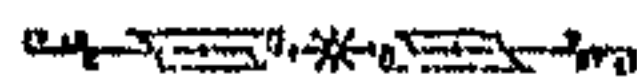
सुश्रुत-संहिताके कल्प-स्थानमें लिखा है कि, "राजासे पराजित हुए शत्रु, अपमानित नौकर चाकर और ईर्षायुक्त राज कुटुम्बके लोग ही राजाको विष दे देते हैं। बहुतसी मूर्खा स्त्रियाँ अपने सौभाग्यकी इच्छासे या अपने पतियोंको वश करनेकी इच्छासे चाहे जो विषैली चीजें उन्हें खिला देती हैं।" अनेक बदचलन औरतें, अपनी आज़ादीके लिये, पति श्वसुर आदिको विष खिला देती हैं; इसवास्ते भोजनकी परीक्षा करके भोजन करना चाहिये।

भोजनके पदार्थों, नहाने और पीनेके पानी, हुक्का चिलम, माला, वस्त्र, लेपन करनेके चन्दनादि, लगानेके तेल और सूंघनेके इत्र आदि अनेक चीज़ोंमें ज़हर देनेवाले ज़हर देते हैं; इसवास्ते,

नीचे, खाने पीनेकी चीज़ोंमें विष पहचाननेकी सहज तरकीबें लिखते हैं —

(१) जो कुछ भोजन तैयार हुआ हो उसमें से पहिले कुछ मक्खियों और कौओंको खिलाओ। ज़हर मिला हुआ होगा तो वह जीव तत्काल मर जायँगे।

(२) जलता हुआ साफ़ अङ्गारा ज़मीन पर रक्खो। जो कुछ पदार्थ बने हों उनमें से ज़रा ज़रासा उस अङ्गार पर डालो। अगर भोजन की चीज़ों में विष होगा तो आग चटचट करने लगेगी या उस अङ्गार में से मोर की गरदन के माफ़िक़ नीली नीली ज्योति निकलेगी। यह ज्योति दुःसह और छिन्न-भिन्न होगी। धूआँ बड़े ज़ोर से उठेगा और जल्दी शान्त न होगा।

(३) चकोर, कोकला, क्रौंच, मोर, तोता, मैना, हंस और बन्दर आदि रसोई के स्थानके पास रक्खे। अगर उपरोक्त सब जानवरोंको न रख सके तो एक दो ही को रक्खे। क्योंकि इन से विष-परीक्षा बड़ी आसानी से होती है।

ज़हर मिले हुए पदार्थ खाते ही चकोर की आँखें बदल जाती हैं; कोकला की आवाज़ बिगड़ जाती है; मोर घबराया सा होकर नाचने लगता है; तोता, मैना पुकारने लगते हैं; हंस अति शब्द करने लगता है; भौंरा गूञ्जने लगता है; साम्हर आँसू गिराने लगता है और बन्दर बार बार विष्टा त्याग करता है।

(४) विष मिले हुए भोजन की भाफ़से ही हृदय, शिर और आँखों में दुःख मालुम होने लगता है।

(५) अगर दूध, शराब और जल आदि पतले पदार्थोंमें विष मिला होगा तो उनमें अनेक भाँति की लकीरें सी होजावेंगी या भाग और बुलबुले पैदा हो जायँगे या उन चीज़ोंमें छाया न दीखेगी अगर दीखेगी तो पतली पतली अथवा बिगड़ी हुईसी दीखेगी।

(६) अगर शाक, दाल, भात और माँस आदिमें विष मिला होगा तो वह तत्काल ही बासी हुए या बुसे हुएसे मालूम होने लगेंगे। सब पदार्थोंकी सुगन्ध और रस रूप मारे जायँगे। पके फल ज़हर मिलानेसे फूट जाते हैं या नरम पड़ जाते हैं और कच्चे फल पकेसे होजाते हैं।

(७) ज़हर मिला हुआ अन्न मुँहमें जाते ही जीभ कड़ी पड़ जाती है, अन्नका स्वाद ठीक नहीं मालूम होता, जीभमें जलन या पीड़ा होने लगती है।

(८) अगर पीनेकी तमाखूमें विष मिला होगा तो चिलम या हुक्का पीते ही मुँह और नाकसे खून आने लगेगा, शिरमें पीड़ा होगी, कफ गिरने लगेगा और इन्द्रियोंमें विकार हो जायगा।

जहाँतक होसके भोजनकी परीक्षा अवश्य कर लिया करें। हमारे यहाँ भोजन तैयार होने पर बलि वग़ैरः देने या भोजनकी सामग्रीमेंसे कुछ कुछ आग पर डालनेकी रीति बहुत अच्छी है। अब भी हज़ारों आदमी वैसन्धर जिमाये बिना भोजन नहीं करते; किन्तु ऐसे बहुत कम लोग हैं जो ऋषियोंके इस गूढ़ आशय को समझते हों।

भोजन सम्बन्धी नियम।

(१) जिस तरह लौकिक आग बिना ईंधनके बुझ जाती है उसी तरह भूख लगने पर भोजन न करनेसे जठराग्नि मन्दी पड़ जाती है। शरीरकी अग्नि, खाये हुए आहारको पचाती है; किन्तु जब आहार नहीं पहुँचता तब वात आदि दोषोंको पचाती है। दोषोंके क्षय होने पर धातुओंको पचाती है और धातुओंके क्षय होने पर प्राणोंको पचाती है। प्रत्यक्षमें भी देखते हैं कि, भूख के समय न खानेसे शरीर टूटने लगता है, अरुचि उत्पन्न होती है,

ऊँघ आने लगती है, आँखें कमज़ोर होजाती हैं और शरीरकी शक्तिका नाश होजाता है ; इसवास्ते भूँख लगने पर हज़ार काम छोड़कर भोजन कर लेना चाहिये।

(२) नियत समय पर भोजन करना बहुत ही ज़रूरी है। बँधे हुए समय पर खानेसे जठराग्नि पहिलेके खाये हुए अन्नको, आसानीसे, पचा लेती है और काफ़ी समय मिलनेसे दूसरा भोजन पचानेको तैयार हो जाती है।

(३) जो मनुष्य भोजनका समय होनेसे पहिले ही भोजन कर लेते हैं उनका शरीर असमर्थ हो जाता है। असमर्थ होनेसे शिर में दर्द, अजीर्ण, विशूचिका, विलम्बिका आदि भयङ्कर रोग हो जाते हैं। इन प्राणघातक रोगोंके पञ्जोंमें फँसकर बिरले ही भाग्यवान बचते हैं; इसवास्ते भोजनके मुक़र्रर समय पर, विशेष कर खूब भूँख लगने पर, भोजन करना उचित है।

(४) जो मनुष्य भोजनके समयसे बहुत पीछे भोजन करते हैं उनकी आहार पचानेवाली अग्निको वायु नाश करदेता है। समय से पीछे जो अन्न खाया जाता है वह, अग्निके नष्ट होजानेके कारण बड़ी कठिनाईसे पचता है और फिर दूसरी बार भोजन करनेकी इच्छा नहीं होती। इसवास्ते भूँख लगने पर भोजनके समयको टालना अक़्लमन्दी नहीं है।

(५) जब शरीरमें उत्साह हो, अधो-वायु ठीक खुलती हो, बदन हलका हो, शुद्ध डकारें आती हों, भूँख और प्यास लगें तब जानना चाहिये कि भोजन पच गया। एक भोजन पच गया हो और दूसरे भोजनका समय भी हो गया हो तो, अवश्य भोजन करना चाहिये।

नोट—भोजन पचनेमें प्रायः तीनसे पाँच घण्टे तक लगते हैं। कोई कोई चीजें जल्दी पच जाती हैं और कोई कोई देरमें। चाँवल प्रायः एक घण्टेमें पच जाता है किन्तु भेड़का माँस तीन घण्टोंमें पचता है।

(६) पेटके चार भाग कीजिये, उनमेंसे दो भाग अन्नसे भरिये, तीसरा भाग पानीसे भरिये और चौथा भाग हवाके चलने फिरने को खाली रहने दीजिये। मतलब यह है कि, कुछ कम खाना अच्छा है किन्तु अधिक खाना अच्छा नहीं है। एक अँगरेज़ी पुस्तकमें लिखा है कि, बहुत ही ज्यादा खानेसे अधिक मनुष्य मरते हैं; उसकी अपेक्षा बहुत कम खानेसे कम मनुष्य मरते हैं।

(७) बहुतही गर्म भोजन करनेसे बलका नाश होता है; शीतल और सूखा हुआ अन्न कठिनतासे पचता है; जल आदि से भीँजा हुआ अन्न ग्लानि करता है; सड़ा हुआ और बहुत दिनोंका रक्खा हुआ भोजन भी हानिकारक होता है; इसवास्ते ऐसे भोजनोंसे बचना चाहिये।

(८) खाना न तो बिलकुल कम ही खावे और न अति अधिक ही खावे, क्योंकि मात्रासे कम खानेसे शरीर कमज़ोर होजाता है और ताक़त घट जाती है; मात्रासे अधिक खानेसे आलस्य, भारीपन, पेट-फूलना, पेटमें गुड़गुड़ाहट आदि उपद्रव हो जाते हैं।

(९) जो पदार्थ एक बार खा कर दूसरी बार माँगा जाय या जो पदार्थ खानेवालेको अच्छा लगे उसे ही "स्वादिष्ठ" कहते हैं। स्वादिष्ठ पदार्थ खानेसे चित्त प्रसन्न होता है, एवं बल उत्साह और उम्रकी बढ़ती होती है; इसके विपरीत स्वादरहित भोजन करनेसे चित्त अप्रसन्न होता है और बल, पुष्टि, उत्साह तथा उम्रकी घटती होती है। इसवास्ते जिस चीज़से दिल नाराज़ हो वह कदापि न खानी चाहिये।

(१०) बुद्धिमानको खूब भूँख लगने पर, अपने शरीर, अपनी प्रकृति, और देश काल आदिके अनुकूल, भोजन करना चाहिये। जो पदार्थ, शीघ्र पचनेवाले, पवित्र, स्वादिष्ठ और हितकारी हों

नहीं खाने चाहियें। सूखे, बासी, सड़े हुए, अधपके, जले हुए, जूठे और बेस्वाद पदार्थ न खाने चाहियें।

(११) चौला आदि सूखे अन्न, दूध-मछली अथवा दूध-मूली आदि विरुद्ध पदार्थ, चना मसूर आदि विष्टम्भी अन्न खानेसे 'अग्नि' मन्द हो जाती है ; अतः अहितकारी और विरुद्ध पदार्थोंसे सदा बचना चाहिये।

(१२) बहुत जल्दी जल्दी खानेसे भोजनके गुण-दोष मालूम नहीं होते और भोजन देरमें पचता है ; क्योंकि दाँतोंका काम बेचारी आँतोंको करना पड़ता है ; इस लिये भोजनको खूब रौंथ-कर खाना चाहिये। अच्छी तरह चबा कर खाया हुआ अन्न सहजमें पच जाता है और अधिक पुष्टि करता है।

(१३) वैद्यक-शास्त्रमें सवेरे शाम दो समय भोजन करनेकी आज्ञा है। सवेरे का भोजन १० बजेके क़रीब और शामका भोजन ८।९ बजे रातके भीतर ही कर लेना चाहिये। शामके भोजनमें कदापि देर न करें ; क्योंकि रातको देर करके खानेसे आहार अच्छी तरह नहीं पचता और अजीर्ण होजाता है। लेकिन आयुर्वेद ग्रन्थोंमें ऐसा भी लिखाहै कि रस, दोष और मल के पच जाने पर भूँख लगती है ; इसवास्ते समय हुआ हो या न हुआ हो जब भूँख लगे तब ही भोजन का समय है।

एक अँगरेज़ी पुस्तकमें लिखा है :—"यदि सवेरे ही, काम पर जानेसे पहले, कुछ जल-पानके तौर पर खा लिया जाय तो बहुत उत्तम हो—इससे शरीर पुष्ट होता है और ज्वर आनेका खटका नहीं रहता। ताज़ा भोजन दोपहरके क़रीब करना चाहिये और संध्या-कालको ब्यालू सात बजेके पहले ही कर लेना उचित है। रातको देर करके न खाना चाहिये।" जिनकी अग्नि तेज़ हो अर्थात् जिन्हें सवेरे भूँख लगती हो और जिनको शारीरिक या मानसिक परिश्रम अधिक करना पड़ता हो यदि वह लोग सुख्य

भोजनोंके बीचमें, दिल-दिमाग़में तरी व ताक़त लानेवाला थोड़ा भोजन कर लें तो बुरा नहीं है।

(१४) प्यास लगने पर जल न पीनेसे कण्ठ और मुख सूख जाते हैं, कान बन्द हो जाते हैं और हृदयमें पीड़ा होती है; अतः प्यास लगने पर "जल" अवश्य पीना चाहिये।

(१५) प्यासमें भोजन करना और भूँखमें पानी पीना उचित नहीं है। प्यासमें बिना जल पिये, भोजन करनेसे "गुल्म-रोग" हो जाता है। इसी तरह भूँखमें बिना भोजन किये जल पीनेसे जलो-दर रोग हो जाता है।

(१६) भोजन करनेसे पहले "जल" पीनेसे अग्निमन्द और शरीर निर्बल हो जाता है। भोजन के अन्तमें पानी पीनेसे कफ बढ़ता है; किन्तु भोजनके बीचमें थोड़ा थोड़ा पानी पीनेसे अग्निदीपन होती है और शरीर समान रहता है अर्थात् बहुत मोटा और दुबला नहीं होता।

(१७) अधिक 'जल' पीनेसे अन्न अच्छी तरह नहीं पचता और जल न पीनेसे भी अन्न नहीं पचता; इस लिये ऐसा भी न करें कि भोजन करके लोटा भर जल झुका जाय और ऐसा भी न करे कि जल पीवे हो नहीं। अग्नि बढ़ानेके लिये बारम्बार थोड़ा थोड़ा जल पीना हितकारी है।

(१८) मनुष्यको भोजन ऐसी जगह करना चाहिये जहाँ बहुत आदमियोंका जमघट न हो। शास्त्रोंमें भोजन और मैथुन आदि एकान्तमें ही अच्छे लिखे हैं।

(१९) भोजन हमेशा एकाग्रचित्त होकर करे। भोजनके समय सब तरफ़का ध्यान छोड़ दे। जब तक भोजन न पच जाय तब तक चिन्ता, फ़िक्र, ईर्षा, द्वेष, और कलह आदिसे बिलकुल बचे; क्योंकि भोजनके समय चिन्ता फ़िक्र आदि करनेसे भोजन

अच्छी तरह नहीं पचता। भोजन न पचनेसे अजीर्ण आदि रोग हो जाते हैं।

(२०) हमेशा एक ही तरहकी चीजें न खानी चाहियें। अदल बदल कर भोजन करने चाहियें। अर्थात् जब कभी हो सके नाना प्रकारके भोजन करने चाहियें।

(२१) हमेशा एक ही प्रकारका रस खाना भी उचित नहीं है। बहुत 'मीठा' खानेसे ज्वर, श्वास, गलगण्ड, अर्बुद, कृमि, स्थूलता, प्रमेह और मन्दाग्नि आदि रोग हो जाते हैं। बहुत 'खट्टा रस' खानेसे खुजली, पीलिया, सूजन और कुष्ट आदि रोग हो जाते हैं। 'नमकीन' रस अधिक खानेसे नेत्र-पाक रक्तपित्त आदि रोग हो जाते हैं, शरीरमें सलवटें पड़जाती हैं, बाल उड़ जाते हैं और सफ़ेद हो जाते हैं। अधिक 'चरपरी चीजें' खानेसे मुख, तालू, कण्ठ और होठ सूखते हैं; मूर्च्छा और प्यास उत्पन्न होती है और बल तथा कान्तिका नाश होता है। इसी तरह 'कड़वे' और 'कसैले रस' अधिक खानेसे भी अनेक रोग होजाते हैं। इसवास्ते किसी एक रस को अधिकतासे न खाना चाहियें।

(२२) भोजनके पहले सेंधा-नमक और अदरख खानेसे अग्निदीपन और भोजन पर रुचि होती है तथा जीभ और कण्ठ की शुद्धि होती है।

(२३) 'फल' यदि अच्छी भाँति पका हो तो भोजनके साथ खाना अच्छा है; किन्तु यदि कच्चा हो या बहुत ही पक गया हो तो हानिकारक है।

(२४) दाल साग आदिमें मसाले खाना अच्छा हैं परन्तु बहुत ही जियादह मसाले खाना पेटको नुकसान पहुँचाता है।

(२५) भोजन करते समय पहले मीठे पदार्थ खाय; बीचमें खट्टे और खारी पदार्थ खाय; अन्तमें चरपरे, कड़वे, कसैले पदार्थ खाय।

(२६) भोजनमें, बहुधा, खारी, खट्टे, चरपरे, गरम और दाह-कारक पदार्थ खाये जाते हैं—उनसे पित्तकी वृद्धि होती है। इस वास्ते पित्तकी वृद्धि रोकनेको भोजनके अन्तमें 'दूध' पीना चाहिये।

(२७) फल हों तो पहले अनार खाय, किन्तु केला और ककड़ी न खाय। अगर भोजनमें रोटी, दाल, भात, तरकारी और दूध आदि हों तो सबसे पहले रोटी और साग खाय, इनके पीछे नर्म दाल भात खाय, अन्तमें दूध या छाछ आदि पतले पदार्थ खाय ; क्योंकि शास्त्रमें पहले करड़े पदार्थ, बीचमें नर्म पदार्थ, और अन्तमें पतले पदार्थ खाना लिखा है।

(२८) मूँग आदि हलके होते हैं; किन्तु मात्रासे अधिक खानेसे भारी होते हैं। उड़द आदि स्वभावसे ही भारी होते हैं और पिसे हुए अन्न पिट्ठी आदि संस्कारसे भारी होते हैं। जिसको मन्दाग्नि हो यानी जिसे भूँख कम लगती हो वह मनुष्य मात्रासे भारी, स्वभावसे भारी और संस्कारसे भारी पदार्थ न खाय।

(२९) मनुष्यको चाहिये कि रूखा अन्न न खाय; क्योंकि रूखा सूखा अन्न अच्छी तरह नहीं पचता। हाँ, दूध आदि द्रव पदार्थ उसके साथ उपयोग किये जायँ तो भली तरह पच सकता है। यदि दोपहरकी भोजनके बाद सेंधा-नोन और जीरा आदि मिलाकर मट्ठा पिया जाय और शामको दूध पिया जाय तो भोजन अच्छी तरह पच जायगा और किसी तरहका रोग न होगा।

(३०) भोजनके समय दाँतोंमें अन्न लगा रह जाता है—उसे सोने चाँदी की दाँत-कुरेदनी या तिनकेसे निकाल कर खूब कुल्ले कर डाले। दाँतोंमें अन्न रह जानेसे मुखमें बदबू आया करती है और कीड़े भी पड़ जाते हैं। किन्तु धीरे धीरे निकालनेसे जो न निकले उसे दाँत समझकर छोड़ दे, उसके लिये ज़ियादह कोशिश न करे।

(३१) भोजन करके जल्दी जल्दी चलना या दौड़ना उचित नहीं है। भोजन करके जो दौड़ता है उसके पीछे मौत दौड़ती है।

(३२) जब तक भोजन न पच जाय तब तक **क्रोध, चिन्ता, भय, लोभ** और **ईर्षा** आदिको बुद्धिमान अपने पास न आने दें; क्योंकि इन मानसिक विकारोंसे भी भोजन नहीं पचता और अजीर्ण हो जाता है। इसी वजहसे अनेक ग्रन्थोंमें भोजनके समय और भोजनके पीछे प्रसन्न-चित्त रहना बहुत ही ज़रूरी लिखा है।

(३३) भोजनके पीछे चित्तको अप्रसन्न करनेवाली, भय, और चिन्ता पैदा करनेवाली बातें न सुने। बदबूदार और मन बिगाड़नेवाली चीज़ोंको न तो देखे और न छूए। दुर्गन्धित चीज़ोंको न सूँघे और अत्यन्त हँसे भी नहीं। भोजनके बाद बुरी चीज़ें देखने, सूँघने और ज़ोरसे हँसनेसे वमन हो जाती है।

(३४) अत्यन्त जल पीने, एक आसन बैठे रहने, दिशा पेशाब और अधो-वायु आदि वेगोंके रोकने और रातको जागनेसे, समय पर किया हुआ, सानुकूल और हलका भोजन भी नहीं पचता।

(३५) भोजन करतेही, गर्मीके मौसमके सिवाय और मौसमों में, नींद लेकर सोनेसे कफ कुपित होकर 'अग्नि'को नाश करता है; इसवास्ते भोजन करके सोवे नहीं लेकिन लेट जावे।

(३६) भोजन करके परिश्रम करना और नींद भरकर सोना दोनों बातें अच्छी नहीं हैं। भोजनके पीछे धीरे धीरे १०० क़दम टहले। भोजनके पीछे टहलनेसे खाया हुआ अन्न अच्छी भाँति पच जाता है तथा गरदन, घुटने और कमरको सुख पहुँचता है।

(३७) सुश्रुतमें लिखा है कि, सौ क़दम टहल कर बाईं करवट लेट जावे। भावप्रकाशमें लिखा है कि,—पहले सीधा सो कर आठ साँस ले, फिर दाहिनी तरफ करवट लेकर १६ साँस ले और पीछे बाईं करवट लेकर ३२ साँस ले। भोजनके

पीछे ८। १६। ३२ साँस लेकर फिर जो इच्छा हो सो करे। प्राणियोंकी नाभिके ऊपर, बाईं तरफ़, अग्निका स्थान है; इस कारण भोजन पचानेके लिये बाईं करवट सोना चाहिये।

(३८) भोजन करके बैठ जानेसे आलस्य और तन्द्रा (ऊँघ) आती है; सो रहनेसे शरीर पुष्ट होता है; दौड़नेसे मृत्यु पीछे दौड़ती है और धीरे धीरे चलने से उम्र बढ़ती है।

(३९) भोजनके पीछे अच्छी अच्छी बातें या मनोहर गाना बजाना सुनने, रूपवान स्त्री पुरुषोंके चित्र देखने या उनको साक्षात देखने, रस सेवन करने और इत्र फूल वग़ैरः सुगन्धित पदार्थों के सूँघने और छूनेसे खाया हुआ अन्न भली भाँति पच जाता है।

(४०) भोजन करके स्त्री प्रसङ्ग करना, आग तापना, धूपमें फिरना, जलमें तैरना, घोड़े वग़ैरः की सवारी करना, रास्ता चलना, युद्ध करना, गाना, अधिक बोलना, बहुत हँसना, बहुत सोना, बैठना, कसरत करना और पानी आदि पतली चीजें अधिक पीना—तन्दुरुस्ती चाहनेवालोंको, कमसे कम एक घण्टे को, छोड़ देने चाहियें।

रसोई का स्थान।

रसोई-घर जहाँ तक हो सके अग्निकोण में बनवाना चाहिये। उसमें अँधेरा और मकड़ियोंके जाले आदि न हों, आसपास पाखाना और पेशाब की मोरी न हों, धूएँ से दीवारें और छत काली न हो रही हों; बल्कि रसोई लिपी पुती साफ़ और हवादार हो। धूआँ निकलने के लिये ऐसे रास्ते बने हों कि धूआँ, बिना रुके, निकल जावे। मोरियाँ ऐसी होनी चाहियें कि पानी डालते ही बह जाय, जिससे मच्छर आदि जीव पैदा न हों। यदि ऐसा प्रबन्ध हो कि, बाहर से मक्खियाँ वग़ैरः भी रसोई में

न आने पावें तो बहुत ही उत्तम हो ; क्योंकि ये जीव मल-मूत्र, थूक, खखार आदि पर बैठते हैं और पीछे यही उत्तमोत्तम खाने पीने के पदार्थों पर बैठते और उनको गन्दा करते हैं।

रसोइया

रसोइया मैला कुचैला, अपवित्र, कुरूप, क्रोधी और नादीदा न होना चाहिये। उसे, सदा, स्नान आदि से पवित्र रहना और स्वच्छ वस्त्र पहनने चाहिये। रसोइये को उचित है कि, हजामत बनवाने और नाखून कटाने में बहुत दिन तक सुस्ती न किया करे। रसोइया वही उत्तम होता है जो भोजन बनाने में चतुर और कारीगर हो एवं दयालु, उदार, स्नेही, मिठबोला और शान्त-स्वभाव हो। हरएक चीज़ बड़ी चतुराई, सफ़ाई और सूपशास्त्र की विधि से बनावे ; क्योंकि रसोई को रसायन कहते हैं और रसायन वह होती है जिसके सेवन से रस रक्त आदि धातुओं की पुष्टि हो। उत्तम रसोइये बिना अच्छी रसोई नहीं बन सकती। रसोई बनाने में जितनी चतुराई और धीरज से काम किया जायगा, रसोई उतनी ही उत्तम बनेगी।

भोजन-घर।

भोजन करने का कमरा यदि रसोई से कुछ फ़ासिले पर हो तो अति उत्तम हो। भोजन घर साफ़ सुथरा हो, उसमें रूपवान स्त्री-पुरुषोंके चित्र या तस्वीरें लगरही हों, आसपास सुगन्धित फूलोंवाले पौधे गमलोंमें रक्खे हों। तोता, मैना, चकोर आदि के पिंजरे लटक रहे हों। पक्षी मीठी मीठी बोली बोलते हों। पासही मधुर गाना बजाना होता हो। जो असमर्थ हैं, उनसे ये सामान इकट्ठे नहीं किये जासकते—उनको उचित है कि, अपना भोजन-स्थान साफ़ सुथरा ही रक्खें।

भोजन परोसने की विधि।

परोसनेवाले को उचित है कि, सुन्दर चौकी या पटड़े पर बहुत साफ़ चौड़ा और मनोहर थाल रक्खे। भोजन करनेवाले के सामने दाल, भात, रोटी और हलुआ आदि नरम पदार्थ रक्खे। फल, लड्डू आदि भक्ष्य पदार्थ और दूसरे सूखे पदार्थ दाहिनी तरफ़ रक्खे। पानी, आम, इमली और नीबू आदिके पन्ने, तथा दूध माठा आदि पतले पदार्थ बाईं तरफ़ रक्खे। जिस प्रकार के बर-तन में जो चीज़ न बिगड़े उस प्रकार के पात्र में ही उसे परोसे।

भोजन करने की विधि।

भोजन-करनेवाला, सुन्दर आसन पर, पल्थी मारकर बैठे। अपने शरीर को दहिने बायें या ऊँचा नीचा न करे और न झुक कर ही बैठे। समान शरीर से एकाग्रचित्त होकर, "पहिले कहे हुए नियमों को ध्यान में रख कर," भोजन करे। पीछे आचमन लेकर गीले हाथों को अपनी आँखों से लगावे। इस क्रिया से आँखों को बड़ा लाभ होता है। शार्ङ्गधर में लिखा है :—

भुक्त्वा पाणितलं घृष्ट्वा चक्षुषोर्यदि दीयते।
जातारोग विनश्यन्ति तिमिराणि तथैव च॥

भोजन करके दोनों हाथों को धो, गीले हाथों की दोनों हथेलियाँ, आपस में घिसकर, आँखों से लगावे तो, आँखों में पैदा हुए रोग आराम होजावें और आँखों के सामने अँधेरी आना दूर हो; और भी लिखा है :—

शर्यातिश्च सुकन्या च च्यवनं शक्रमश्विनौ।
भोजनान्ते स्मरेन्नित्यं चक्षुस्तस्य न हीयते॥

जो शख़्स, भोजनके पीछे, नित्य, शर्याति, सुकन्या, च्यवन,

इन्द्र और अश्विनीकुमारों को याद करता है उसकी आँखें कभी नहीं जातीं।

भोजन पचाने की एक विधि वैद्यक-शास्त्र में बहुत ही अद्भुत लिखी है। भाव प्रकाश में लिखा है :—

अङ्गारकमगस्तिं च पावकं सूर्य्यमश्विनौ ।
पंचैतान् संस्मरेन्नित्यं भुक्तं तस्याशु जीर्य्यति ॥

"मङ्गल, अगस्त, अग्नि, सूर्य और अश्विनीकुमार इन पाँचों को जो, रोज, याद करता है—उसका खाया हुआ अन्न जल्दी पच जाता है।" इस तरह कहता हुआ अपने हाथ पेट पर फेरे। पीछे पान खाकर, सुन्दर पलङ्ग पर आराम करे।

पान के गुण

पान—चरपरा, गरम, रुचिकारक, कड़वा, कसैला, हलका और दस्तावर होता है; कफ, मुँह की बदबू और मुँहका मैल नाश करता है। जीभ और दाँतों को स्वच्छ रखता है। कामोद्दीपन करता, सुन्दरता और सुख बढ़ाता तथा कण्ठके रोगों को नाश करता है; किन्तु रक्तपित्त रोग करता है।

नया पान—मीठा, कसैला, भारी, कफकारक और विशेष करके साग के समान गुणकारक है।

बङ्गला पान—सिर्फ़ तीक्ष्ण रसवाला, दस्तसाफ़ लानेवाला, पाचक, पित्तकारक और कफ को नाश करनेवाला है।

पका पान—हलका, पतला, नरम और पीले रङ्ग का होता है; इसमें तीक्ष्णता नहीं होती। यह पान बड़ा गुणदायक समझा जाता है। मुरझाये हुए पान निकम्मे होते हैं।

कत्था, चूना और सुपारी।

कत्था—कफ और पित्त को नाश करता है। **चूना**—बादी और कफ का नाश करता है; लेकिन पान के साथ चूना और कत्था खाने से तीनों दोषों का नाश होता है।

सुपारी—भारी, शीतल, रूखी, कसैली, कफपित्त नाशक, मोहकारक, अग्निप्रदीपक, रुचिकारी और मुख की विरसता को नाश करनेवाली है। **चिकनी सुपारी**—त्रिदोष नाशक है। **नयी सुपारी** नुकसानमन्द है।

पान लगाने की विधि।

अगर सवेरे पान खाय तो ज़रा सुपारी अधिक रक्खे; दोपहर को कत्था और रात को कुछ चूना अधिक रक्खे। चूना, कत्था और सुपारी के अलावः कपूर, छोटी इलायची, केशर, लौंग, जायफल, जावित्री और कस्तूरी, अन्दाज़ से, पान में रखने से पान बहुत मज़ेदार और गुणकारी हो जाता है। बुद्धिमान ऋतु अनुसार मसाले रक्खे।

पान का अगला हिस्सा, जड़ और बीच का भाग निकाल देना चाहिये। पान की जड़ और फुनगी आदि खाने से रोग पैदा होते हैं और आयु क्षीण होती है। ख़ाली सुपारी खाना अच्छा नहीं है। बिना पान, सुपारी खानेसे मुख का स्वाद फीका होजाता है; जीभ कठोर हो जाती है और माथे में कमज़ोरी आजाती है। जिस तरह बिना पान, सुपारी खाना ठीक नहीं है उसी तरह बिना सुपारी, पान खाना भी अच्छा नहीं है। किसी ने कहा है:—

बिना कुचों की स्त्री, बिना मूछ का ज्वान।
ये तीनों फीके लगें, बिना सुपारी पान॥

चूना, कत्था, पान, सुपारी इन चारों का मेल है। इसवास्ते विधि सहित पान लगा कर, उचित समय पर, खाना चाहिये ;

पान खाने के समय।

दिन भर, बकरी की तरह, पान चबाना लाभदायक नहीं है। नियत समय पर पान खाने से बहुत लाभ होता है। भावप्रकाश में लिखा है :—

रतौ सुप्तोत्थिते स्नाते भुक्ते वान्ते च सङ्गरे।
सभायां विदुषां राज्ञां कुर्यात्ताम्बूलचर्वणम्॥

स्त्रीप्रसङ्ग के समय, सोकर उठने पर, स्नान करके, भोजन करके, वमन करके और लड़ाईमें पान चबाना चाहिये।

पान सम्बन्धी नियम।

(१) बहुत पान खाने से शरीर, आँख, बाल, कान, दाँत, वर्ण, बल और जठराग्नि का नाश होता है; शोष रोग पैदा होता है; पित्त वात और रुधिर की वृद्धि होती है। एक डाक्टरी पोथी में लिखा है कि,—पान दाँतों के लिये हानिकारक है और कभी कभी नासूर पैदा कर देता है।" इसवास्ते, नियत समय से अधिक, **पान** न खाना चाहिये।

(२) कमज़ोर दाँतवाले, नेत्र रोगी, विष से पीड़ित, बेहोशी वाले, नशे से मतवाले, जुलाब लेनेवाले, भूखे, प्यासे, रक्तपित्तवाले और क्षत क्षीण मनुष्य को **पान** भूल कर भी न खाना चाहिये।

(३) पान की पहली पीक विष के समान है; दूसरी पीक दस्तावर और दुर्जर है; लेकिन तीसरी पीक रसायन और अमृत के समान गुणकारी है। इसवास्ते पान चबाकर पहिली और दूसरी पीक न निगले, किन्तु थूकदे। पहिली दो पीक थूकनेबाद, तीसरी पीक पीने में कुछ हानि नहीं है।

पगड़ी धारण करना।

भारतवर्षमें पगड़ी धारण करने की चाल बहुत पुरानी है। यद्यपि, आजकल, इस की चाल कम होती जाती है; तथापि, अब भी अधिकाँश भारतवासी पगड़ी पहनना ही पसन्द करते हैं। कुछ अँगरेज़ी पढ़े लिखे जैण्टिलमैनों और नक़ली बाबुओं ने पगड़ी छोड़कर टोपी पहनना शुरू कर दिया है। सुश्रुतने लिखा है—

वाणवारं मृजाग्र्यं तेजोबलविवर्द्धनम्।
पवित्रं केश्यमुष्णीषं वातातपरजोपहम्॥

"पगड़ी शिरको तीर की चोट से बचाती है; सिर को साफ़ रखती और मैल वग़ैरः नहीं भरने देती; वर्ण, तेज और बल को बढ़ाती है; पवित्र और बालों को हितकारी है; वायु, धूप और धूलसे मस्तकको बचाती है।" पगड़ी बाँधना, वास्तव में, हितकारी है। इटली की टोपियाँ पहनने से हमको इतना लाभ नहीं हो सकता; उलटा देश का धन विदेश में जाता है। इसवास्ते भारतवासियों को पगड़ी ही पहनना चाहिये; किन्तु पगड़ी बहुत भारी पहनना ठीक नहीं है। भारी पगड़ी से गरमी और आँखों में रोग पैदा हो जाते हैं। जो भाई, पगड़ी पहनना नापसन्द करते हों उन्हें उचित है कि, देश की बनी हुई टोपियाँ पहनें।

छाता लगाना

छाता—लगाने से वर्षा, धूप, हवा और धूलसे बचाव होता है। छाता शीतनाशक, नेत्रों को लाभदायक और मङ्गल-रूप समझा जाता है। वलायत प्रभृति सर्द देशों में बर्फ़ और ओस आदि से बचने को रातमें भी छाता लगाते हैं।

लकड़ी या छड़ी
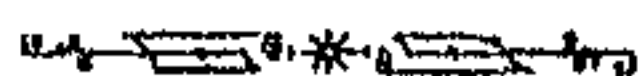
लकड़ी—मनुष्य के दूसरे साथी के बराबर है। इस के पास होने से दूना साहस और बल होजाता है। कुसमय में इस से बड़ा काम निकलता है। वैद्यक-ग्रन्थों में लिखा है,—लकड़ी शक्ति, उत्साह, बल, स्थिरता, धैर्य्य और तेज को बढ़ाती है; कुत्ता, साँप, बैल गाय आदि जानवरों से रक्षा करती है; खड्डे खोचरे में गिरने, ठोकर खाने और लड़खड़ाने से रोकती है। लकड़ी हाथमें रखने से कलाई पुष्ट होती है और थकाई नहीं पढ़ती। बूढ़ों और अन्धों को तो लकड़ी रखनी ही पड़ती है। जवानों को भी लकड़ी, छड़ी या बेत हाथमें लिये बिना घर से बाहर न जाना चाहिये; किसी कविने कहा है:—

छुरी छड़ी छतुरी छला, छबड़ा पाँच छकार।
इन्हें नित्य ढिंग राखिये, अपने अहो कुमार॥

हे राजकुमार! चाकू, लकड़ी, छतरी, छल्ला और लोटा—ये सदा अपने पास रखने चाहियें।

जूते पहनना

जूते—पहनने से पाँव नर्म और साफ़ रहते हैं, आँखों को सुख होता है, और उम्र बढ़ती है। जूते पहने हुए आदमी को काँटे, काँच वग़ैरः लगने और सर्प बिच्छू आदि के काटने का भय नहीं रहता। बिना जूते पहने चलने से आरोग्यता और आयु की हानि होती है तथा आँखों की ज्योति नाश होती है।

जूते-हलके, नर्म, सुन्दर और ज़रा ऊँची एड़ी के अच्छे होते हैं। वलायती जूते अथवा डासन के बूटों की बनिस्बत देशी जूते

सुखदायी और टिकाऊ होते हैं। देशी जूते पहननेसे बहुत सा रुपया बचता है और स्वदेशी कारीगर भूखों मरनेसे बचते हैं। इसवास्ते स्वदेश-प्रेमियोंको, ज़रा से शौक़ के लिये, अपनी गाढ़ी कमाईका धन सात समन्दर पार फेंकना बुद्धिमानी नहीं है।

साफ़ हवा।

हमें यदि कई दिन तक अन्न और जल न मिले तो भी हम जी सकते हैं; किन्तु बिना साफ़ हवा के चन्द मिनिट भी नहीं जी सकते। जन्म समय से मृत्यु समय तक, सोते और जागते, हम साँस लेते रहते हैं। जब हम साँस लेते हैं तब साफ़ हवा भीतर जाती है और दूषित हवा बाहर आती है। हमारी ज़िन्दगी क़ायम रहने के लिये स्वच्छ हवा की सबसे अधिक ज़रूरत है। साफ़ हवा ही साँस द्वारा भीतर जाकर खून की नालियों में बहाती है। हवासे ही खून शुद्ध और साफ़ होता है। स्नान हमारे बदन को बाहर से सफ़ाई करता है; लेकिन साफ़ हवा बदन के भीतर सफ़ाई करती है। हमारे तन्दुरुस्त और मज़बूत रहने में साफ़ हवा की सहायता की विशेष आवश्यकता है।

बुद्धिमान को चाहिये कि ऐसे मकानमें रहे जहाँ साफ़ हवा, बिना रुकावटके, आती हो। अगर मकानमें हवा आने और जाने को कितनी ही खिड़कियाँ आदि न होंगी तो घरकी बुरी हवा बाहर न निकल सकेगी।

हमको चाहिये कि, मकानके आसपास कूड़ा करकट और फलों के छिलके आदि न फेंके। नाबदान और मोरियोंमें पानी न जमा होने दें। क्योंकि सड़ी गली चीज़ों, कूड़े करकट और मैल से हवा गन्दी होजाती है। जिस मकान में हवाके आने जाने के लिये बहुत द्वार होते हैं, जो मकान सूखा, साफ़ और उजेला

होता है, जिस मकान के आगे हरे हरे पौधे लगे रहते हैं— उस मकान की हवा गन्दी नहीं होती और उस घरमें बीमारी भी प्रवेश नहीं कर सक्ती।

हवा खाना।

घरकी हवा से मैदानों और बागों की हवा बहुत साफ़ होती है। इस लिये प्रातःकाल के सिवाय शामको भी, शौच आदि से निपटकर, हाथमें छड़ी लेकर पैदल या किसी सवारी पर चढ़ कर स्वच्छ वायु सेवन करने को बाहर निकल जाना चाहिये। एक जगह बैठे रहने और दिन रात घर की गन्दी हवा खानेसे मनुष्य बेढँगा मोटा, निकम्मा और रोगी होजाता है। सामर्थ अनुसार साफ़ हवामें धीरे धीरे टहलने से बदन आरोग्य रहता, भूखलगती, आयु, बल और बुद्धि बढ़ती तथा इन्द्रियाँ सचेत होजाती हैं।

ग्रीष्म और शरद ऋतु में अपनी इच्छा और शक्ति अनुसार हवा खावे; किन्तु अन्य ऋतुओं में अधिक हवा से बचे। शीतल और मन्दी हवामें फिरना लाभदायक है, लेकिन तेज़ हवा में घूमना लाभदायक नहीं है; क्योंकि तेज़ हवासे शरीर रूखा और चहरे की रङ्गत बिगड़ जाती है।

पूरब की हवा

पूरबदिशा की हवा—भारी, चिकनी; परिश्रम, कफ और शोष रोगियोंको परम हितकारी होती है। चर्म-रोग, बवासीर, विष-रोग, कृमिरोग, सन्निपात-ज्वर, श्वास और आमवात आदि रोगोंको दूषित करती है।

पच्छम की हवा

पच्छम की हवा—तीक्ष्ण, शोषकारक, बलकारक, हलकी होती

है। मेद, पित्त और कफ का नाश करती है और बादी को बढ़ाती है।

दक्खनकी हवा।

दक्खनकी हवा—स्वादिष्ठ, पित्तरक्त-नाशक, हलकी, शीतवीर्य्य, बलकारक, आँखों को हितकारी और बादी को पैदा करने-वाली है।

उत्तरकी हवा।

उत्तर की हवा—चिकनी, वात आदि दोषों को कुपित करने वाली और ग्लानिकारक है; लेकिन निरोग मनुष्यों को बल-दायक, मधुर और कोमल है।

सवारियों के गुण।

पालकी—ऊपर से ढकी हुई पालकी में बैठने से मनुष्यों के तीनों दोष शान्त होते हैं और यह सब को अच्छी लगती है।

नाव—भ्रम पैदा करती है। बादी और कफ के रोगों को अच्छी नहीं है।

हाथी—इस पर बैठने से बादी और पित्त बढ़ते हैं; लेकिन लक्ष्मी और उम्र बढ़ती है।

घोड़ा—इस पर चढ़ने से वात पित्त और अग्नि बढ़ती हैं। थकाई आती है। मेद, वर्ण और कफ नाश होता है। बलवानों को घोड़े की सवारी बहुत अच्छी है।

दूसरे भोजन का समय।

दूसरा भोजन या ब्यालू, सन्ध्या-समय टालकर, ८।९ बजे के पहले ही कर लेनी उत्तम है। रात को, दिनके भोजनकी अपेक्षा,

कम खाना चाहिये। जो पदार्थ देर से पचनेवाले हों वह ब्यालू के समय न खाने चाहियें। शामके भोजनके बाद "दूध" पीना हित-कारी है। सुश्रुत में लिखा है कि, यदि सन्ध्या का भोजन न पचने की शंका हो तो, सवेरे सोंठ, हरड़, सैंधानोन इन तीनों का चूर्ण शीतल जल से फाँक ले। भोजन के समय, यदि भूख लगे तो, थोड़ा सा हलका भोजन करे।

सन्ध्या-कालमें निषिद्ध कर्म।

बुद्धिमानों को साँझ समय भोजन करना, मैथुन करना सोना, पढ़ना और रस्ता चलना ये पाँच काम न करने चाहियें। शाम को भोजन करने से रोग होता है, मैथुन करने से गर्भ में विकार आता है, सोने से दरिद्रता आती है, पढ़ने से आयु यानी उम्र घटती है, और रस्ता चलने से भय होता है।

वीर्य-रक्षा करना हमारा प्रधान कर्त्तव्य है।

भोजन के बयान में हम साफ़ तौर पर लिख चुके हैं कि, जो कुछ हम खाते पीते हैं उस से रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र ये सात धातु तैयार होती हैं। इन्हीं सातों धातु हमारे शरीर को धारण करती हैं। अर्थात् इन सातों से ही हमारी काया स्थिर है।

इन सातों में शुक्र—वीर्य—प्रधान है। वीर्य ही हमारी दिमाग़ी ताक़त है, वीर्य ही हमारी स्मरण-शक्ति है। वीर्य-बलसे ही हमें बे-शुमार बातें याद रहती हैं। वीर्य-बलसे ही हम बुद्धि-मान्, विद्वान और बलवान कहलाने लायक़ होते हैं। वीर्य ही, सब सुखों में प्रधान, आरोग्यता का मूल कारण है। वीर्य ही हमारे शरीर रूपी नगर का राजा है। वही इस नौ दरवाज़े के किले—शरीर—में रोग रूपी शत्रुओं से हमारी रक्षा करता है। खुलासा मतलब यह है कि, जब तक हमारे शरीर रूपी नगर का

राजा—वीर्य—पुष्ट और बलवान रहता है तबतक किसी रोग रूपी दुश्मन को हमारी तरफ़ आँख उठा कर देखने की हिम्मत नहीं पड़ती। परन्तु वीर्यके निर्बल या क्षय होजाने से हमें चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा नज़र आता है। राजा—वीर्य—को कमज़ोर देखकर दुश्मनों—रोगों—को चढ़ाई करने का मौक़ा मिल जाता है। इसवास्ते राजा—वीर्य—बिना नगर—शरीर—रक्षा होना असम्भव है।

वीर्य-रक्षा ही के प्रताप से अर्जुन भीम—धनुर्धारियों और गदाधारियों में श्रेष्ठ समझे जाते थे। विराट-नगर में अकेले अर्जुनने भीष्म, कर्ण और द्रोणाचार्य आदि समस्त कौरव वीरों को परास्त करके गौओं की रक्षा की थी—वह सब वीर्य-रक्षा ही का प्रताप न था तो और क्या था? महाभारत के युद्ध में बूढ़े भीष्म-पितामह ने जो त्रिलोक-विजयी अर्जुन-भीम के छक्के छुटा दिये थे वह सब वीर्य-रक्षा के प्रताप के सिवाय और क्या था? वीर्य-रक्षाके ही बल से लक्ष्मण, रावण-पुत्र मेघनाद के मारने में समर्थ हुएथे।

प्राचीनकालके लोग वीर्य-रक्षाको अपना प्रधान कर्त्तव्य समझते थे। लेकिन इस ज़माने के लोग वीर्य-रक्षा को कुछ चीज़ नहीं समझते। बल्कि वीर्य-नाश करने को अपना परम पुरुषार्थ समझते हैं। पहले समय के लोग सन्तान पैदा करनेके सिवाय, इन्द्रियों की प्रसन्नताके लिये, स्त्री प्रसङ्ग करना महा हानिकारक समझते थे। आजकल के जवान स्त्री को ही अपनी उपास्य देवी समझते हैं; सोते जागते, खाते-पीते हर समय उसीके ध्यानमें मग्न रहते हैं। उनको इस से होने वाली हानियों का पता नहीं है। चरक-संहिता के चिकित्सा-स्थान के दूसरे अध्याय में लिखा है—

रस इक्षौ यथा दध्नि सर्पिस्तैलन्तिले यथा।

सर्वत्रानुगतं देहे शुक्रं संस्पर्शने तथा॥

तत्स्त्रीपुरुषसंयोगेचेष्टासंकल्पपीड़नात् ।
शुक्रंप्रच्यवतेस्थानाज्जलमार्द्रात्पटादिव ॥

"जिस तरह ईखमें रस, दही में घी, और तिल में तेल है उसी तरह समस्त शरीर और चमड़े में वीर्य है। जिस भाँति गीले कपड़े से पानी गिरता है उसी भाँति स्त्री-पुरुष के संयोग, चेष्टा, संकल्प और पीड़न से वीर्य अपने स्थानों से गिरता है।" जो वीर्य, ईख में रस की तरह हमारे शरीर का सार है, जो वीर्य हमारी विद्या, बुद्धि और आरोग्यता—तन्दुरुस्ती—का मूल आधार है—उसे अति स्त्री-सेवन द्वारा नष्ट करना बुद्धिमानी नहीं है। दिन रात स्त्रियों का ध्यान रखना बिलकुल वाहियात है; क्योंकि वीर्य का स्वभाव है कि, स्त्रियों की इच्छा या ध्यान करने मात्र से अपने स्थान से अलग होने लगता है।

इस कलिकालमें, अति स्त्री प्रसङ्ग तक ही ख़ैर नहीं है। आज कलके ना-समझ लोगोंने हस्त-मैथुन, गुदा-मैथुन आदि और भी कितनी ही वीर्य-नाशक तदबीरें निकाली हैं। इन नयी नयी खोटी तदबीरों के कारण भारतवर्ष का जो पटड़ा हो रहा है उसे लिखने में हमारी क्षुद्र लेखनी असमर्थ है। इन कुकर्मोंके प्रताप से हजारों मूर्ख जवानी में ही नपुंसक और निकम्मे होगये और अनेक घर सन्तान-हीन होगये। सैकड़ों कुलवती स्त्रियाँ कुलटा और व्यभिचारिणी बन गईं। अति मैथुन, अयोनि-मैथुन आदि की हानियाँ पूर्णरूप से हम आगे लिखेंगे। यहाँ हम "चरक" से इन कामोंकी हानियाँ संक्षेपसे दिखलाते हैं। चरक-संहिताके विमान-स्थान केपाँचवें अध्याय में लिखा है:—

अकालयोनिगमनान्निग्रहादतिमैथुनात् ।
शुक्रवाही निदुष्यन्ति शस्त्रक्षाराग्निभिस्तथा ॥

"कुसमय मैथुन करने, गुदा-मैथुन या पशु-योनि मैथुन करने;

इन्द्रियों के जीतने, अत्यन्त मैथुन करने, और शस्त्र, क्षार तथा अग्नि कर्मके दोषसे शुक्रवाही यानी वीर्यवाही स्रोत बिगड़ जाते हैं।" सुश्रुत की चिकित्सा स्थानके चौबीसवें अध्याय में लिखा है:—

प्रत्यूषस्यर्द्धरात्रे च वातपित्ते प्रकुप्यतः।
तिर्यग्योनावयोनौ च दुष्टयोनौ तथैवच॥
उपदंशस्तथा वायोः कोपः शुक्रस्य च क्षयः

"सवेरे और आधीरात के समय मैथुन करने से वायु और पित्त कुपित हो जाते हैं। घोड़ी, गधी और कुतिया आदि के साथ मैथुन करने और दुष्ट योनि में मैथुन करने से गर्मी का रोग हो जाता है तथा वायु का कोप और शुक्र—वीर्य—का क्षय होता है।" चरक के निदान-स्थान के छठे अध्याय में लिखा है:—

आहारस्यपरमधामशुक्रंतद्रक्ष्यमात्मनः।
क्षये ह्यस्य बहून रोगान्मरणंवा नियच्छति॥

"वीर्य ही खाये पिये पदार्थों का अन्तिम परिणाम है। वीर्य के क्षय होने से अनेक रोग अथवा मृत्यु तक हो जाती है; इस-वास्ते प्राणी को वीर्य-रक्षा करना परमावश्यक है।"

अति-मैथुन, गुदा-मैथुन आदिकी हानियाँ जैसी चरक औरसुश्रुत ने लिखी हैं—वह राई रत्ती सच हैं। इन कामोंकी बुराइयोंको हम आँखों देख रहे हैं; अतः इस विषयमें सन्देह करनेकी जरूरत नहीं है। जब कि वीर्य-क्षय होने से हमारी मृत्यु तक हो जाना सम्भव है; तब दीर्घजीवी होने के लिये **वीर्य-रक्षा करना हमारा प्रधान कर्त्तव्य है।**

आजकल के ना-समझ लड़कों और जवानों की भूलें और उनका बुरा परिणाम ।

प्राचीन समय के प्रायः समस्त उच्च-वर्णों के भारतवासी आयुर्वेद और कामशास्त्र पढ़ते थे और पद पद पर उनके नियमों का ध्यान रखते थे। इसी कारण वह लोग पूर्ण-आयु भोग कर पञ्चत्व को प्राप्त होते थे। उनकी औलाद भी हृष्ट पुष्ट बलिष्ट और दीर्घजीवी होती थी। अब समय का कैसा परिवर्त्तन हो गया है कि, साधारण लोग तो इन ग्रन्थों के देखने योग्य ही नहीं रहे; अथवा वैद्यक शास्त्र के संस्कृत भाषा में होने के कारण उसे परिश्रम उठा कर पढ़नाही नहीं चाहते। सर्वसाधारण लोगों की बात तो बहुत दूर है, जो इस का पेशा करते हैं उनमें भी बहुत ही थोड़े आयुर्वेद का पठन पाठन करते हैं। आजकल के अधिकाँश वैद्यों की शिक्षा "अमृतसागर" तक ही समाप्ति को पहुँच जाती है; तब सर्वसाधारण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों में इस महोपयोगी विद्या का प्रचार कहाँ से हो? सर्वसाधारणमें इस वैद्यक-विद्या के अभाव से जो जो कुरीतियाँ प्रचलित होगई हैं और उनके कारण जो असंख्य अकाल मृत्यु होती हैं—उनका स्मरण मात्र करने से कलेजा काँपने लगता है। आजकल जो देश में अति स्त्रीप्रसङ्ग, वेश्या-गमन, परस्त्री गमन और गुदा-मैथुन आदि की भर मार हो रही है—इस से देश तबाह हो रहा है। इस लिये आगे हम अति स्त्री-प्रसङ्ग आदि, नियम विरुद्ध, कुकर्मों की हानियाँ, संक्षेप से, दिखलाते हैं:—

अति स्त्री-प्रसङ्ग की हानियाँ।

वर्त्तमान समयके नादानों का ख़याल है कि, स्त्री ही हमारे परमानन्दकी चरम सीमा है। स्त्रीमें ही स्वर्ग-सुख है। उन बेचारों को इस बात की बिलकुल खबर नहीं है कि, जिस में परमानन्द और स्वर्ग-सुख है उस में घोर दुःख और नर्क-यातना भी मौजूद है। इक-तरफ़ी बात जानने के कारण ही ना-समझ लोग,सुख और आनन्दकी लालसा से, स्त्री का अतिशय सेवन करते हैं।

यह उनकी भारी भूल है। रसायन, यद्यपि, जरा और मृत्यु नाशक है; तथापि वह भी यदि अति मात्रा से सेवन की जाय तो रोग और मृत्यु का कारण हो जाती है। अन्न-जल से प्राणियों की प्राण-रक्षा होती है; किन्तु वह भी यदि अति मात्रा से सेवन किये जायँ तो, अजीर्ण और विशूचिका आदि रोग पैदा करके प्राणो के प्राणान्त कर देते हैं। यही बात स्त्रियों के विषय में समझनी चाहिये। यदि 'स्त्री' बिलकुल ही सेवन न की जाय तो फल नहीं देती, यदि बहुत ही सेवन की जाय तो दुःखदायी होती है। इसवास्ते 'स्त्री' मध्यावस्था से सेवन करनी चाहिये। अर्थात् न बहुत जियादह हो न बिलकुल कम हो। अति स्त्री-सेवन से सिवाय हानिके लाभ नहीं है; क्योंकि स्त्री बलवीर्य और पुरुषार्थ बढ़ानेवाली नहीं, किन्तु घटानेवाली है। प्रसिद्ध नीतिकार चाणक्य ने कहा है:—

सद्यः प्रज्ञाहरा तुंडी, सद्यः प्रज्ञाकरी वचा।
सद्यः शक्तिहरा नारी, सद्यः शक्तिकरं पयः॥

"कुँदरू शीघ्र ही बुद्धि नाश करता है, बच तुरन्त ही बुद्धि देती है; स्त्री चटपट शक्ति हर लेती है और दूध झटपट बल

पैदा कर देता है।" बलहरण करना तो स्त्रीका सहज स्वभाव है। अतिस्त्री-प्रसङ्ग करने से तो बहुत ही नुक़सान पहुँचता है।

अति मैथुन करनेवाले जवान पट्ठों के चहरों से जवानी की चमक दमक हवा हो जाती है। रूप लावण्यका नाम निशान नहीं रहता। आँखों की ज्योति मलीन हो जानेसे, जवानी में ही, चश्मा लगाने की ज़रूरत हो जाती है। मुख पर काले काले धब्बे और झुर्रियाँ पड़जाती हैं। चार क़दम चलने से हाँफनी चढ़ने लगती है। असमय में ही, बाल सफ़ेद हो जाते हैं। धातुपुष्ट करनेवाली और नामर्दी नाशकरनेवाली दवाइयों की खोज होने लगती है। अन्त में, धातु-क्षीण होजाने के कारण, क्षय अर्थात् राजयक्ष्मा रोग हो जाता है। चरक संहितामें लिखा है कि,—राजयक्ष्मा होनेके जितने कारण हैं उनमें "अति स्त्री-प्रसङ्ग करना" प्रधान कारण है। सुश्रुत संहिताके चिकित्सा-स्थान में लिखा है :—

अतिस्त्रीसंप्रयोगाच्च रक्षेदात्मानमात्मवान्।
शूलकासज्वरश्वासकार्श्य पांड्वामयक्षयाः।
अतिव्यवायाज्जायंते रोगाश्चाक्षेपकादयः॥

"सावधान आदमीको अति स्त्री-प्रसङ्ग न करना चाहिये; क्योंकि अति-स्त्री प्रसङ्ग करनेसे शूल, खाँसी, बुखार, दुबलापन, पीलिया, राजयक्ष्मा और आक्षेपक आदि वायु-रोग हो जाते हैं।" इलाजुल-ग़ुर्बामें लिखाहै कि,—जो पुरुष जवानी में, वीर्य की अधिकतासे, बहुत ही स्त्री प्रसङ्ग करता है—वह जल्दी बूढ़ा होता और दुःख पाता है। मैथुन सदा सम-भावसे करना चाहिये।"

चरकके सूत्रस्थानमें लिखा है :—

व्यायाम हास्य भाष्याध्व ग्राम्यधर्मप्रजागरान्।
नोचितानपि सेवेत बुद्धिमानतिमात्रया॥

"कसरत, हँसी, भाषण, रस्ता चलना, स्त्री-संसर्ग और जागरण----इनको बुद्धिमान प्राणी, ज़रूरी मौक़े पर भी, ज़ियादः न करे। जिस प्रकार सिंहके खींचनेसे हाथी सहसा नष्ट हो जाता है उसी प्रकार इन कामोंको अधिकतासे करनेवाला प्राणी सहसा विनष्ट हो जाता है।"

हमारे माननीय ऋषि मुनियोंने जो कुछ अपनी अपनी संहितात्रोंमें लिखा है—वह उनके हज़ारों लाखों वर्षके अनुभवका फल है। जो कुछ उन्होंने लिखा है वह अक्षर अक्षर सही है। हम अपनी आँखोंसे देख रहे हैं कि, उनकी अमूल्य उपदेशोंके न जाननेवाले या जान बूझ कर उन पर अमल न करनेवाले हज़ारों जवान स्त्री पुरुष इस "अति-मैथुन"के कारण राजयक्ष्मा—तपेदिक़—आदि रोगोंमें गिरफ़्तार होकर, असमयमें ही, कालके गालमें समा जाते हैं। अति मैथुन अथवा अति स्त्री-प्रसङ्ग साक्षात् मृत्यु है। बुद्धिमानों को इससे, सदा, बचना चाहिये। जान, बूझ कर कुएँमें गिरना और अपना अमूल्य दुष्प्राप्य जीवन खोना बुद्धिमानी नहीं है।
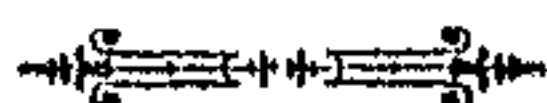
वेश्या-गमनकी हानियाँ।

वेश्या-गमन यानी रण्डी-बाज़ी करना महा निन्दित कर्म है। वेश्याके साथ सङ्गम करनेसे अमूल्य वीर्य, जिससे एक शरीरी पैदा होता है, वृथा नष्ट होता है; उम्र घटती है; जात-पाँत मटियामेट हो जाती है; कुलका नाम डूबता है; इज़्ज़त आबरू खाकमें मिलजाती है; धनका सत्यानाश हो जाता है और उपदंश सोज़ाक आदि रोग इनाममें मिलते हैं; जो आराम हो जाने पर भी आराम नहीं होते; हड्डी हड्डीमें अपना घर कर लेते हैं। अन्तमें, मृत्युके साथ पीछा छोड़ते हैं। एक बात और भी है कि,

ों से जितना वीर्य नाश होता है, वेश्या द्वारा उससे कहीं नाश होता है।

इतने कष्ट भोगने और सर्वस्व देदेने पर भी वेश्या अपनी नहीं होती। उसमें प्रेमका लेश भी नहीं है। वह सदा धनकी ग्राहक है। निर्धन होनेपर बात नहीं करती ; बल्कि जूतियाँ लगाती और घरमें नहीं आनेदेती। चाणक्य नीतिमें लिखा है:—

निर्धनं पुरुषं वेश्या, प्रजा भग्नंनृपं त्यजेत्।
खगावीतफलंवृक्षं, भुक्ताअभ्यागतागृहम् ॥

"धन-हीन पुरुष को वेश्या—रण्डी—छोड़ देती है, शक्ति-हीन राजाको प्रजा त्याग देती है, फल-रहित वृक्षको पक्षी और भोजन करके घरको अभ्यागत छोड़ देते हैं।" भर्तृहरि महाराजने अपने शृङ्गारशतक में वेश्या की तारीफ़ में लिखा है :—

जात्यन्धाय च दुर्मुखाय च जराजीर्णाखिलाङ्गाय च
ग्रामीणाय च दुष्कुलाय च गलत्कुष्ठाभिभूताय च ॥
यच्छन्तीषु मनोहरं निजवपुर्लक्ष्मीलवश्रद्धया
पण्यस्त्रीषु विवेककल्पलतिकाशस्त्रीषु रज्येतकः ॥
वेश्यासौ मदनज्वाला रूपेन्धन समेधिता।
कामिभिर्यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च ॥
कश्चुम्बति कुलपुरुषो वेश्याधरपल्लवं मनोज्ञमपि।
चारभट चौर चेटकनटविटनिष्ठीवनशरावम् ॥

"वेश्या, थोड़ासा धन मिलने की आशा से, जन्मके अन्धे, बद-सूरत, बुढ़ापे से लटकती खालवाले, गँवार, नीच-जात और कोढ़ चूते हुए पुरुषोंको, अपना मनोहर शरीर सौंप देती है और

विवेक रूपी कल्पलता की छुरीसी है। ऐसी वेश्याके साथ कौन रमण करना चाहेगा ? अर्थात् कोई नहीं चाहेगा।

वेश्या, रूपरूपी ईन्धन से प्रचण्ड, कामाग्नि की ज्वाला है। उस वेश्यारूपी अग्निमें, कामी पुरुष, अपना धन और जवानी होमते हैं।

यद्यपि वेश्या का अधर पल्लव—नीचेका होंठ—सुन्दर है, तथापि कौन कुलीन पुरुष उसे चूमना चाहेगा ? अर्थात् कोई कुलीन पुरुष उसे न चूमना चाहेगा ; क्योंकि वह ठग, ठाकुर, चोर, नीच, नट, भाँड़ और जारों के थूकने का ठीकरा है।"

भर्तृहरि महाराजने वेश्याके विषय में जो कुछ कहा है वह यथार्थ है। इससे अधिक हम क्या कहेंगे ? समझदारों को इतना ही बहुत है। बुद्धिमानों को भूल कर भी इस रास्ते न जाना चाहिये।
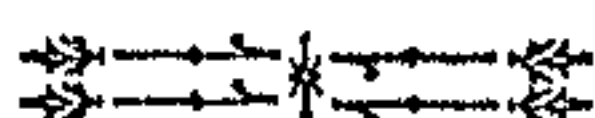
परस्त्री-गमन की हानियाँ।

पर-स्त्री-गमन में भी सिवाय हानि के कुछ लाभ नहीं है। हमारी समझ में तो पर-स्त्री-गमन में वेश्या-गमन से भी अधिक बुराइयाँ हैं। वेश्या-गमन करनेवालों के धन, जीवन, प्रतिष्ठा आदि ख़ाक में मिल जाते हैं वही दशा इस काम में होती है। हर समय भय लगा रहता है कि, कोई देख न ले। यदि देखा-देखी होजाती है तो लाठियाँ चलतीं और सिर फूटते हैं। जिस की जिससे आँखें लड़ जाती हैं, जब तक वह नहीं मिलते जुदाई की आग में भस्म होते रहते हैं। उन्हें खाते चैन न सोते आराम, अष्टपहर चौसठ घड़ी मिलने की बन्दिशें बाँधने में लगे रहते हैं। रुपया पैसा कँकड़ मिट्टी की तरह बखेरते हैं। अगर खुश-क़िस्मती से मिलाप हो भी गया तो क्या ! प्रेमी प्रेमिका दोनों भय

और चिन्ता में चूर। अगर बद-क़िस्मती से किसी ने देख लिये तो कुल का नाम डूबा। इज़्ज़त के टके होगये। तालियाँ पिटने लगीं। ऐसा काम करनेवालों का परिणाम, सदा, खोटा ही होता है। कितने ही आत्महत्या कर बैठते हैं। कितने ही दूसरों द्वारा मारे जाते हैं। याद कीजिये, पर-स्त्री-गामी रावण का क्या बुरा हाल हुआ! कुटुम्बका नाश हुआ, राज्य गया और अन्तमें आप भी मारा गया। पर-स्त्री-गामी 'बालि' भी बुरी तरह मारा गया। पर-स्त्री-गामी नीच 'कीचक' द्रौपदी पर बुरी इच्छा रखने के कारण, भीमसेनसे मारा गया। दिल्ली-पति शाहन्शाह 'अकबर' में भी यह खोटी लत थी। एक राजपूत स्त्री द्वारा उसकी भी खूब मिट्टी खराब हुई। अन्तमें, उसे इस नीच कर्मसे तोबः करनी पड़ी। इस तरह की बहुत सी नज़ीरें हैं। जिन्होंने इस कुराह में क़दम रक्खा, उन सबने ही आफ़तें भोगीं और नीचा देखा।

समझदार लोग इस निन्दित कर्म के नज़दीक नहीं जाते। वह पर-स्त्रियोंको अपनी मा बहिनकी समान समझते हैं। चाणक्य ने कहा है :—

मातृवत्परदारांश्च परद्रव्याणिलोष्टवत्।
आत्मवत्सर्वभूतानि यः पश्यति स पश्यति॥

"दूसरेकी स्त्रीको माताके समान, दूसरेके धनको ढेलेके समान और अपने समान सब प्राणियोंको जो देखता है, वही देखता है।" लेकिन ऐसे पुरुष-रत्न संसारमें थोड़े होते हैं। भर्तृहरि महाराजने बहुत ही ठीक कहा है :—

अप्रियवचनदरिद्रैः प्रियवचनाढ्यैः स्वदारपरितुष्टैः
परपरिवादनिवृत्तैः क्वचित् क्वचिन्मंडिता वसुधा।

"अप्रिय-वचनके दरिद्री, प्रिय-वचनोंसे सम्पन्न, अपनी ही स्त्री

सन्तुष्ट और पराई निन्दासे रहित, जो पुरुष हैं-उनसे कहीं कहीं ही पृथ्वी शोभायमान है अर्थात् ऐसे पुरुष सब जगह नहीं होते।"

बुद्धिमानोंको सत्पुरुषोंके मार्ग में चलना चाहिये। पर-स्त्रीको विषय की मञ्जरी समझना चाहिये और उससे सदा बचना चाहिये। किसी कविने कहा है :—

परनारी पैनी छुरी, तीन ठौरतें खाय।
धन छीजे जोबन हरे, मरे नर्क लेजाय॥

हस्त-मैथुन आदि की हानियाँ।

गुदा-मैथुन, हस्त-मैथुन और घोड़ी गधी आदि से मैथुन करने-वाले, नीचों से भी नीच हैं। उनका मुँह देखने से भी पाप लगता है। किन्तु आजकल यह कुत्सित कर्म बहुत फैल गये हैं; जिस से देश का बहुत कुछ सत्यानाश होरहा है। इन कुकर्मों की बदौलत हज़ारों आदमी नपुंसक होगये। हज़ारों कुलवती स्त्रियाँ कुलटा और व्यभिचारिणी होगईं। फिर भी लोग इनको नहीं छोड़ते!

ये कुकर्म, सृष्टि-नियम और राज-नियम दोनों के विरुद्ध हैं। भगवानने इस काम के लिये स्त्री पैदा की है। जो ये कुकर्म करते हैं, यहाँ तो राजा से सज़ा पाते हैं और मरने पर ईश्वर से दण्ड पाते हैं। बहुतेरों को तो इस जन्म में ही अपनी करनी का फल मिल जाता है। थोड़े ही दिनों में वीर्य्य-हीन, तेज-रहित और निकम्मे हो जाते हैं। इनकी लिंगेन्द्री बेकाम हो जाती है अर्थात् स्त्री-प्रसङ्गके योग्यही नहीं रहती; इनकी स्त्रियाँ, प्रायः, पर-पुरुष-रता होजाती हैं। पुत्र न होने से सदा को कुल का नाम डूब जाता है।

ऐसे दुराचारी, अन्त में, अपने किये पर पछताते और वैद्य हकीमों को तलाश करते फिरते हैं। यदि प्रारब्ध-वश कोई सद्वैद्य या अनुभवी हकीम मिल गया तब तो कुछ सम्भात हो जाती है। यदि किसी अताई या अनाड़ी से पाला पड़ गया तो, विष उपविष या कच्ची पक्की धातु खाकर, रोग-ग्रसित हो, इस दुनियासे कूँच हो कर जाते हैं। अत: बुद्धिमानों को इन घोर नारकीय कामों से, सदा, बचना चाहिये।

कोकशास्त्र के मत से

चार प्रकारकी स्त्रियाँ।

कोक-शास्त्र में रूप गुण आदिके भेदसे चार प्रकारकी स्त्रियाँ लिखी हैं। पद्मिनी, चित्रनी, हस्तनी और सङ्खनी। यद्यपि इन से कुछ विशेष मतलब नहीं निकलता तथापि, हम शौकीनों के मनोरञ्जनार्थ इन की पहचान आदि लिख देते हैं।

पद्मिनी स्त्री।

पद्मिनी औरत सब प्रकार की औरतों से अच्छी होती है। इसका क़द न लम्बा न ठिंगना, चहरे का रङ्ग नीलोफ़र के फूल के माफ़िक़, बाल बल खाये हुए, कुशादा पेशानी, कमानके समान भौं, स्याह पुतलियाँ, सफ़ेद आँखें, पतले होंठ, छातियाँ उभरी हुईं, कमर पतली, बाल लम्बे और नर्म, उँगलियाँ पतली पतली, नाजुक बदन, प्यारी और मीठी बोली, हँसमुख और निहायत शर्मदार होती है। इसका स्वभाव बहुत अच्छा होता है। अपने तईं हमेशा पाक साफ़ रखती है। पतिको सुलाकर सोती और उस से पहले जागती है। अपने पति को बहुत ही चाहती

और उसकी सेवामें कुछ त्रुटि नहीं करती। पति जब घर में नहीं होता, उदास रहती है और उसके देखते ही प्रसन्न होजाती है। लेकिन नाज़ुक होने के कारण इसे पुरुष की इच्छा कम होती है।

चित्रनी स्त्री।

चित्रनी का क़द बीचका होता है। यह न तो लम्बी होती है न मोटी। बाल लम्बे, हाथ लम्बे, सख़्त बदन, ऊँची आवाज़, स्वभाव बुरा, चूचियाँ बड़ी, हठीली, सिर और पेट बड़े होते हैं। ज़रासी बात पर नाराज़ और ज़रा सी बात पर राज़ी होजाती है। हमेशा नाज़ोनख़रे करती रहती है। गाना बहुत पसन्द करती है। एक बात पर क़ायम नहीं रहती और एक जगह नहीं ठहरती। रङ्गीन कपड़ों से बहुत राज़ी रहती है। हर वक़्त ऐश व आराम चाहती और पुरुष की इच्छा रखती है।

हस्तनी स्त्री।

हस्तनी का सिर बड़ा, छातियाँ मोटी मोटी, गर्दन छोटी, ताक़तवर, और मोटी होती है। हथनीकी सी चाल चलती और चलते समय नख़रे करती है। लड़ाई झगड़े करनेवाली होती है और मैथुन से तृप्त नहीं होती। खट्टी कड़वी और नमकीन चीज़ें खाना पसन्द करती और बहुत भोजन करती है। इसके पसीनों में बुरी बदबू आती है। इस क़िस्म की औरत ख़राब होती है।

सङ्खनी स्त्री।

यह औरत लम्बी, दुबली और सुन्दर होती है। कलाइयाँ और पिंडलियां बारीक और हाथ पांव लम्बे होते हैं। झगड़ालू, क्रोधी और शत्रुता रखनेवाली और दुष्ट स्वभाववाली होती है। फ़ौरन तबियत पर रञ्ज ले आती है। यह औरत बड़ी चालाक दग़ाबाज़ और नालायक़ होती है। अपने पति की वैरिन और उसे दुःख देनेवाली होती है। खाने को बहुत खानेवाली और

छोटे दिलवाली होती है। हमेशा बुरे बुरे ख़यालातों में डूबी रहती है। निहायत झूठ बोलनेवाली और हर काम की हामी भरलेनेवाली और अपवित्र रहनेवाली होती है। इसकी उंग- लियों में बाल होते हैं। इसे पुरुष की इच्छा बहुत रहती है।

विशेष सूचना—पद्मिनी, इत्र फूल वगैरः खुशबूदार चीज़ों को अधिक पसन्द करती है। चित्रनी, गाना ज़ियादह पसन्द करती है। पद्मिनीको रातके पहले पहरमें, चित्रनीको दूसरे पहरमें, और हस्तनी को तीसरे पहर में पुरुष की ख़्वाहिश होती है; किन्तु सङ्खनी को हर समय पुरुष की इच्छा रहती है।

वैद्यक मत से

चार तरहकी स्त्रियाँ।

वैद्यक शास्त्रवालों ने अवस्था के अनुसार औरतों की चार किस्में मानी हैं। (१) बाला, (२) तरुणी, (३) प्रौढ़ा, (४) वृद्धा। सोलह साल से नीचे और सोलह वर्षतक की स्त्री को बाला कहते हैं, सत्तरहवें वर्षसे ३२ वें वर्षतककी स्त्रीको तरुणी, ३३ से ५० पचास वर्ष तक की स्त्रीको प्रौढ़ा और पचास से ऊपर की स्त्री को वृद्धा कहते हैं।

त्याज्य स्त्रियाँ।

सज्जनों को तो अपनी विवाहिता स्त्रियों के सिवाय और सब ही स्त्रियाँ त्याज्य हैं। और कामी आनन्द विलासियों को भी

सन्यासिन, गुरु की स्त्री, लावारिस स्त्री, अपने गोत्र की स्त्री, बूढ़ी स्त्री, गर्भिणी, रोगिणी, हीनाङ्गी, मलीना, दुर्बला, रजस्वला और बाँझ स्त्रीसे मैथुन न करना चाहिये। अपनी भार्या भी जब रजस्वला, रोगिणी या गर्भवती हो तब उससे भी मैथुन करना अनुचित है।

सन्यासिन, गुरु की स्त्री, लावारिस स्त्री, अपने गोत्र की स्त्री और बूढ़ी स्त्री से मैथुन करने से पुरुष के बल, पुरुषार्थ और आयु का नाश होता है। अर्थात् इन से मैथुन करनेवाला क्षय आदि रोगों में फँस कर जल्दी मर जाता है। गर्भवती के साथ मैथुन करने से गर्भ को तकलीफ़ होती है और अक्सर गर्भ गिर जाता है। रोगिणी के साथ सङ्गम करनेसे बल घटता है। हीनाङ्गी (लँगड़ी लूली आदि) मैली कुचैली, कमज़ोर और बाँझके साथ प्रसङ्ग करने से वीर्य क्षीण और मन मलीन होता है। रजस्वला के साथ मैथुन करने से आँखें कमज़ोर हो जाती हैं, उम्र घटती है, तेज नाश होता है और खून-फ़िसाद तथा उपदंश—गरमी का रोग—हो जाता है। चरक, सुश्रुत और भावप्रकाश आदि समस्त वैद्यक ग्रन्थोंमें उपरोक्त स्त्रियों से मैथुन करना मना किया है। बुद्धिमानों को, घोर काम-वश होकर भी, इन से परहेज़ रखना चाहिये।

विलासियोंके लिये उपयोगी नियम।

(१) प्राणियोंके शरीर में नित्य मैथुन करने की इच्छा होती है। इच्छा होने पर जो मैथुन नहीं करते उनको प्रमेह होजाता है, मेद बढ़ जाती है अर्थात् शरीर मोटा होजाता है और

शिथिलता होजाती है। इसवास्ते, निरोग-अवस्था में, इच्छा होने पर, मैथुन अवश्य करना चाहिये।

(२) स्वास्थ्य सुख और आयु चाहने वालोंको १४७ सफ़ेमें लिखी हुई "त्याज्य स्त्रियों" से कदापि मैथुन न करना चाहिये। बारह बरससे नीची अवस्थावालीसे भी मैथुन करनेसे पुरुष और स्त्री दोनों को दुःख होता है। अगर छोटी अवस्थावालीके गर्भ रह जायगा तो वह खण्डित होकर गिर जायगा; अगर पूरा होकर बालक पैदा भी होजायगा तो बहुत दिन न जियेगा। यदि जियेगा भी तो सदा रोगीला, रोगन और कमज़ोर रहेगा; इसवास्ते कम-उम्र स्त्रीसे मैथुन न करना चाहिये। इसी तरह बूढ़ी और बीमार स्त्रीसे भी मैथुन न करे, क्योंकि बूढ़ीकी सन्तान सदा निर्बल और रोगिणी होगी। मैथुन, सदा, अपनी अवस्था से छोटी और निरोग स्त्री से करना, हर हालत में, लाभदायक है।

(३) जिसने बहुत खाया हो, जिसे धीरज न हो, जो भूँखा हो, जिसका अङ्ग दुखता हो, जिसे प्यास लगरही हो, जिसे पाखाने या पेशाब की हाजत हो या जिसे गर्मी सोज़ाक आदि रोग हों—उसे और बूढ़े तथा बालक को मैथुन करना हानिकारक है। भूँख, प्यास, घबराहट और कमज़ोरी की हालत में मैथुन करने से वीर्य की हानि और वायु का कोप होता है। बीमारी की हालत में मैथुन करने से तिल्ली बढ़ जाती है और कभी कभी मूर्च्छा और मृत्यु तक हो जाती है। पाखाने पेशाब की हाजत होते हुए मैथुन करने से पथरी और सोज़ाक आदि रोग हो जाते हैं। सोलह वर्ष से कम अवस्था का बालक यदि मैथुन करने लगता है तो, थोड़े जल के तालाब की तरह सूख जाता है और सत्तर वर्ष का बूढ़ा मैथुन करता है तो सूखे काठ की तरह बिखर जाता है।

(४) पुरुष नीचे और स्त्री ऊपर—इस भाँति जो मैथुन

किया जाता है उसे **विपरीत रति** कहते हैं। ऐसा उलटा मैथुन करने से वीर्य की पथरी और सोज़ाक आदि रोग होजाते हैं। अगर इस तरह मैथुन करने से गर्भ रह जाय और कन्या पैदा हो, तो उस जन्मी हुई कन्या की चेष्टायें मर्द की सी होंगी और सम्भव है कि उसके मूछ डाढ़ी भी निकलें। अगर पुत्र होगा तो उसकी चेष्टा स्त्रियों की सी होगी। अर्थात् वह ज़नानिया होगा। इसवास्ते बुद्धिमानों को भूल कर भी **विपरीत रति** न करना चाहिये।

(५) बहुत से नादान पुरुष, मैथुन के समय, अधिक आनन्द की लालसा से, चलते यानी छुटते हुए वीर्य को रोकने की कोशिश किया करते हैं। यह उनकी भारी भूल है। गिरते वीर्य को रोकने से तत्काल **पथरी** हो जाती है।

(६) आजकल अधिकांश लोगों का वीर्य प्रमेह आदि होने से निर्बल और पतला रहता है। ऐसे लोगों की स्त्री-प्रसङ्ग करने की इच्छा तो होतीहै, लेकिन स्तम्भन नहीं होता और स्तम्भन—रुकावट—न होने से लोगों की इच्छा पूरी नहीं होती। इच्छा पूरी करने को कितने ही अफ़ीम खाते हैं, कितने ही गाँजा और भाँग आदि खाते हैं। नशीली चीज़ों से रुकावट तो होजाती है; किन्तु थोड़े दिन बाद ही वीर्य सूख जाता है और स्त्री के काम के नहीं रहते। नशीली चीजें खाकर मैथुन करने और पेशाब न करने से भयङ्कर सोज़ाक हो जाता है। रुकावट के लिये अफ़ीम, गाँजा आदि नशीली चीज़ें खाना—अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारना है। इसवास्ते बुद्धिमानों को भूल कर भी ऐसी हानि-कारक चीजें न खानी चाहियें; बल्कि वाजीकरण औषधियों से वीर्य पुष्ट और बलवान करना चाहिये। जब वीर्य पुष्ट और निर्दोष होगा तब आपही रुकावट होगी।

(७) मैथुन, सदा, अपनी अवस्था से छोटी अवस्थावाली स्त्री से करना चाहिये। अपने से बड़ी स्त्री से मैथुन करना, हमेशा, हानिकारक है। **बाला** के साथ मैथुन करने से बल बढ़ता है ; **तरुणी** के साथ मैथुन करने से बल घटता है ; **प्रौढ़ा** के साथ मैथुन करने से बुढ़ापा आता है। **बूढ़ी** के साथ मैथुन करने से जवान भी बूढ़ा होजाता है। भाव प्रकाश में लिखा है :—

सद्यो मांसं नवं चान्नं बालास्त्री क्षीरभोजनम् ।
घृतमुष्णोदके स्नानं सद्यः प्राणकराणि षट् ॥
पूति मांसं स्त्रियो वृद्धा बालार्कस्तरुणं दधि ।
प्रभाते मैथुनं निद्रा सद्यः प्राणहराणि षट् ॥

"ताज़ा माँस, नवीन अन्न, बाला स्त्री, दूध पीना, घी खाना और गर्म जल से स्नान करना—ये छः तत्काल बल देते हैं। सड़ा माँस, बूढ़ी स्त्री, प्रातःकाल का सूरज, तत्काल का जमाया हुआ दही, प्रभात समय का मैथुन और प्रातःकाल का सोना—ये छः तत्काल बल को नाश करते हैं।"

(८) जो स्थान माता पिता और गुरु आदि बड़े लोगों के पास हो, जो स्थान खुला हुआ यानी चौड़ा चपाट हो, जहाँ दूसरे आदमी की नज़र पहुँच सके, जहाँ दिल बिगड़ानेवाली बातें सुनाई दें—ऐसे स्थानों में पुरुष कदापि स्त्री-प्रसङ्ग न करे ; क्योंकि ऐसे स्थान में मैथुन का आनन्द नहीं आता और वीर्य वृथा नष्ट होता है।

(९) जब तक स्त्री-पुरुषके वीर्य और आर्तव शुद्ध और निर्दोष न हों तब तक कदापि मैथुन न करना चाहिये। अशुद्ध वीर्य और आर्तव के संयोग से भी गर्भ तो रह जाता है ; किन्तु रोगी, अन्धा, काना, गूँगा, बहरा और दूसरे दोषोंवाला बालक पैदा होता है।

शुद्ध वीर्य और रज के संयोग से जो बालक जन्मता है वह निरोग, बलवान, बुद्धिमान और सर्वाङ्ग-पूर्ण होता है। जिस स्त्री-पुरुष के रुधिर और वीर्य कुष्ट—कोढ़—नामक महारोगसे बिगड़ जाते हैं अगर वह स्त्री-पुरुष मैथुन करें और गर्भ रह जाय तो जो सन्तान पैदा होगी उसके भी कोढ़ होगा ; इसवास्ते रोग की हालत में और वीर्य रुधिर के अशुद्ध होने पर, मैथुन करना अनुचित है।

(१०) जो पुरुष अत्यन्त मैथुन करते हैं ; किन्तु **वाजी-करण** औषधियाँ सेवन नहीं करते—उनको, वीर्य-क्षय होनेसे, ध्वज-भङ्ग—नामर्दी—रोग हो जाता है। अर्थात् ऐसे लोगोंकी चैतन्यता नहीं होती ; अगर होती भी है तो जलदी शिथिलता होजाती है। अगर किसी खज़ाने से खर्च ही खर्च किया जाय, उसमें कुछ रक्खा न जाय, तो वह खज़ाना, निस्सन्देह, किसी न किसी दिन खाली हो जायगा। अतः जो अधिक विषयी हों उन्हें **वाजीकरण क्रिया** अवश्य करनी चाहिये। क्योंकि ऐसी औषधियों और क्रियाओं से वीर्य की कमी पूरी होकर, बल पुरुषार्थ और वीर्य की वृद्धि होती है।

(११) जो पुरुष बहुत ही चरपरे, खट्टे, खारी और गरम पदार्थ खाते पीते हैं या बल बढ़ाने की इच्छा से कच्ची पक्की धातु और विष उपविष आदि अयोग्य रीति से सेवन करते हैं—उनका वीर्य क्षीण होजाता है और वह नपुंसक होजाते हैं ; इसवास्ते बुद्धि-मानों को खटाई मिर्च आदि कम खानी चाहियें और किसी अनाड़ीकी फूँकीहुई धातुभस्मादि कदापि न सेवन करनी चाहियें।

(१२) जो लोग गुप्त-इन्द्री बढ़ाने की इच्छा से अताइयों की दी हुई अण्ट सण्ट दवाएं सेवन करते हैं—उनको **शूकरोग** होजाता है और जो बाजारू औरतों में जा मरते हैं उन्हें **गर्मीका**

रोग होजाता है। अव्वल तो शूक्र और उपदंश से छुटकारा पाना ही मुशकिल है ; अगर खुश-क़िस्मती से छुटकारा भी मिल गया तो नपुँसकता घेर लेती है। अतः चतुर पुरुषों को इन बातों से सदा बचना चाहिये।

(१३) चतुर पुरुष को ज़बरदस्त और मुँह-फट या बेहया अथवा द्वेष-युक्ता स्त्री से कदापि मैथुन न करना चाहिये ; क्योंकि ऐसी स्त्रियाँ, बहुधा, इस तरह की बातें मुँह से निकाल बैठती हैं कि जिस से पुरुष का मन बिगड़ जाता है। मन बिगड़ने से चैतन्यता नहीं होती या होकर नष्ट होजाती है।

(१४) जबतक भोजन न पच जाय कदापि मैथुन न करे ; क्योंकि बिना भोजन पचे मैथुन करने से अनेक प्रकार के रोग होनेकी आशङ्का रहती है।

(१५) बहुत से ना-समझ, मैथुन करके, तत्काल, शीतल जल से गुप्त-इन्द्री को धोने लगते हैं। कुछ दिनों बाद ऐसे लोग नपुंसक होजाते हैं। अव्वल तो इन्द्री को कपड़े से पोंछ लेना ही उत्तम है। अगर धोने की ही इच्छा हो तो निवाये जलसे धोलें। मैथुन के पीछे, तत्काल, गुप्तेन्द्री धोना और नहाना अच्छा नहीं है। हाँ, गर्मीके मौसम में नहा सकते हैं, सो भी मैथुन के कुछ देर बाद, जब कि बदन को गर्मी शान्त हो जाय।

(१६) सवेरे, साँझ, पर्व के दिन, आधीरात को, गायों को छोड़ने के समय, और मध्याह्नकाल में मैथुन करना बहुत ही हानिकारक है।
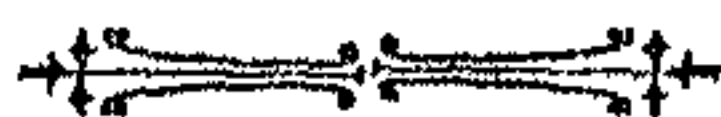
कामोन्मत्त करनेवाले सामान।

तेलकी मालिश, उबटन, स्नान, अतर आदि, फूलमाला, गहने,

सुन्दर सजा हुआ मकान, उत्तम पलँग, मनोहर तस्वीरें, चित्र-विचित्र वस्त्र, तोता मैना आदि पक्षियों की बोली, स्त्रियों के गहनों की झनझनाहट, मन चुरानेवाली स्त्रियों से पैर दबाना—ये सब उपाय वाजीकरण हैं। अर्थात् ये पदार्थ पुरुष को मैथुन करने में बहुत ही समर्थ करते हैं। मतवाले भौंरों से सेवित कमल-युक्त जलाशय, चमेली, कमल, सुगन्धित शीतल बँगले, नीलेरङ्ग की चोटीवाला पर्वत, नीले २ मेघ, चाँदनी रात, शीतल मन्द पवन का चलना, जाड़े की लम्बी २ रातें, मनोहर महल जिसके पास माता पिता गुरु आदि बड़े आदमी न हों, वह उपवन जहाँ कोकिला का मनोहर शब्द सुनाई दे, उत्तम अन्न-पान, मनोहर गाने और सुन्दर बाजों की ध्वनि, चित्त में शान्ति, दिलमें प्रसन्नता और सुन्दरी स्त्रियाँ—ये सब कामदेव के हथियार हैं। अर्थात् इन सब से देह में काम—स्त्री इच्छा—का सञ्चार होता है।

नयी उम्र और वसन्त ऋतु भी कामोन्मत्त करनेवाली हैं। अर्थात् इन में, स्वभाव से ही, अधिक स्त्री-इच्छा होती है। घी-दूध के सेवन करनेवाला, निर्भय, आरोग्य, नित्य-कर्मों में परायण और युवा पुरुष मैथुन करने की अत्यन्त शक्ति रखता है।
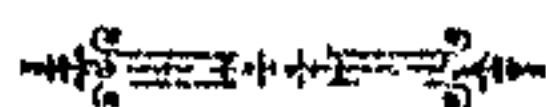
गर्भाधान के अयोग्य स्त्रियाँ।

जिसने अधिक भोजन किया हो, जिसका मन बिगड़ रहा हो, जो भूखी हो, जो प्यासी हो, जो भय-भीत हो या जो अतिकामा हो यानी मैथुन से धापती न हो—ऐसी ऐसी सब स्त्रियाँ गर्भाधान के अयोग्य हैं अर्थात् ऐसी स्त्रियों को गर्भ नहीं रहता।
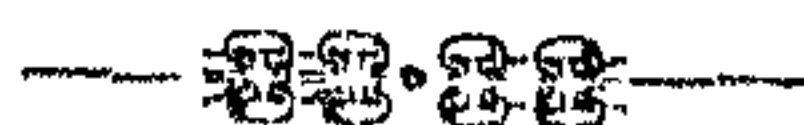
औरतों के बदचलन होने के सबब।
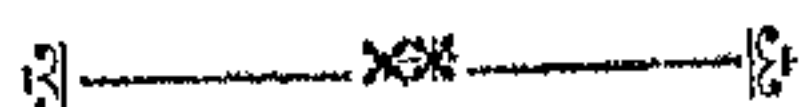
(१) हमेशा बाप के घर में रहने से ; क्योंकि वहाँ उन को अधिक स्वतन्त्रता मिलती है। अर्थात् कहीं फिरने डोलने या किसी से बात चीत करने की सख़्त मनाही नहीं होती। (२) नीच जात के स्त्री-पुरुषों की संगति करने से ; क्योंकि सङ्गति का असर आये बिन नहीं रहता। (३) पति की लम्बी जुदाई अथवा पति के अधिक दिनों तक परदेशमें रहनेसे और उस मौके पर अपने ऊपर किसी का दबाव न रहने से ; (४) बूढ़े या बालक पतिके मिलने से, (५) पति के सदा बीमार रहने से, (६) पति के अधिक कञ्जूस या तकरारी होनेसे, (७) बदमाश औरतों या मर्दों के साथ बैठ कर हँसी दिल्लगी करने से, (८) खाने पहिनने को रोटी कपड़ा न मिलने से, (९) बचपन या भर जवानी में विधवा होनेसे भी प्रायः स्त्रियाँ बद-चलन यानी छिनाल होजाती हैं। पुरुषों को स्त्रियों की खूब रक्षा करनी चाहिये। इन को अधिक आज़ादी देना महा हानिकारक है। भिखारन, बैरागन,नायन,धोबन, दाई, बुढ़िया, मालिन और छोटी२ लड़कियाँ छिनाल औरतों को दूतियों का काम देती हैं। अर्थात् उनका सन्देशा उनके यारों के पास पहुँचाती हैं और वहाँ की खबर इन को ला देती हैं। ऐसी औरतें बड़े बड़े घरोंमें बे-खटके आती जाती हैं और अपनी चालाकी और मक्कारी से प्रायः पतिव्रताओं को भी महा व्यभिचारिणी बना देती हैं। चतुर पुरुषों को उचित है कि, ऐसी औरतों को घर में न आने दें या इन पर कड़ी नज़र रक्खें। औरतों को, अकेली, अपनी घर गाड़ी बग्घियों में भी, साईस

कोचवानों के साथ गङ्गास्नान करने या मेले-ठेले कहीं न भेजें। हाल होमें, यहाँ देख चुके हैं कि, दो बड़े बड़े लखपती घरों की स्त्रियाँ ऐसी ही भूलों से मुसलमान साइसों के साथ ख़राब होगईं।

पतिव्रता स्त्रीके लक्षण।

जो पर पुरुष की कामना मन से भी न करे। ग़ैर मर्दसे न कभी बात करे न उस से हँसी मज़ाक़ करे। मन, वचन और कर्म से पति ही की सेवामें लगी रहे। पति को देखते ही प्रसन्न होजाय। पति से पहले जागे और पति से पीछे सोवे। पति के दुःख से दुखी और पतिके सुख से सुखी रहे। पति की आज्ञा बिना कोई काम न करे और उमसे कोई बात न छिपावे। पति सेवा को ही जप, तप, नियम, व्रत और गङ्गास्नान समझे। पति-दर्शन को ही देव-दर्शन समझे। यदि पति अन्धा, लूला, लङ्गड़ा, बहरा और नपुंसक भी हो; तोभी उसका अपमान, सपने में भी, न करे। लेकिन इस ज़माने में ऐसी पतिव्रता शायद किसी ही भाग्यवान के घरमें हो। अनसूया जीने सीता जीसे कहा है :—

"पतिव्रता चार प्रकार की होती हैं। उत्तम, मध्यम, नीच और लघु। उत्तम पतिव्रता वह होती है जो सुपने में भी पर-पुरुष को नहीं चाहती। मध्यम वह होती है जो पराये मर्द को भाई बाप और पुत्र के समान समझती है। नीच वह होती है जो मनमें पर-पुरुष की इच्छा तो रखती है; किन्तु अपने धर्म और कुल का ख़्याल करके व्यभिचार नहीं करती। लघु पतिव्रता वह होती है जो पर-पुरुष से रति करना तो चाहती है; किन्तु सास सुसर पति और जेठ आदिके भय से या दाँवघात न लगने से ऐसा काम नहीं करती।" आज कल प्रायः तीसरे और चौथे दरजे की स्त्रियों की ही अधिकता नज़र आती है।

छिनाल औरतोंके लक्षण।

जो हमेशा या हर समय सोच—फ़िक्र—में डूबी रहे, जो हर वक्त अपने शृङ्गार या सजावट में ही लगी रहे, जो बात बात में झूँठ बोले, जो अपने पति से लड़ाई झगड़े किया करे, जो पति से मुँह फेर कर सोवे, पतिके गालचूमने पर गाल पोंछ डाले, जो कभी घूँघट खोले और कभी ढके, जिस की छातियों पर आंचल न टिके, जो बालों को आगे की तरफ़ छिटकावे, जो भौं चढ़ा कर तिरछी नज़र से देखे, जो ग़ैर मर्दों से हँस हँस कर बात चीत करे, जो दूसरों के घर रात को गाने के लिये जाय, जो सदा रोग का बहाना कर के पड़ी ही रहे, जो ग़ैर मर्दों की तारीफ़ किया करे, जो झरोखे या खिड़कियों से रस्ता चलनेवालों को देखा करे, जो बिना अपने घर के आदमी के वैद्य हकीम के यहाँ दवा कराने जाय, जो नीच मर्द औरतों से बात-चीत किया करे, जो पतिके मित्रों या रिश्तेदारों के साथ शत्रुता रक्खे, जो मकान की दहलीज़ या पौली में रास्ते की तरफ़ मुँह करके खड़ी रहे या वहाँ बैठ कर चरखा काता करे या सीना पिरोना किया करे, जो बात बात में हर मर्द को बाप भाई बनावे, जो मेले तमाशे या मर्दों की भीड़ में अकेली बे-खटके जाय, जो पति के घर रहने पर मुँह सुजाये रहे और उसके घरसे बाहर जाते ही हँसती फिरे, जो पतिके प्यार करने पर भी नाराज़ ही रहे—ऐसी कुल स्त्रियाँ प्रायः छिनाल अर्थात् पर-पुरुषके चाहनेवाली होती हैं।

स्त्री सम्बन्धी बातें।

स्त्री की योनि से, अपने आप, महीने महीने, आर्तव—खून—गिरता है। यह खून महीने भर तक इकट्ठा होता रहता है। पीछे महीना पूरा होने पर, वही इकट्ठा हुआ खून, कुछ

> रजो-दर्शन जारी होने और बन्द होने का समय।

कालोंसी और बदबूदार सूरत में, योनिके मुँह पर आजाता है—इसी को "रजोदर्शन" होना कहते हैं। स्त्री का "रजोदर्शन" अन्दाज़न, बारह वर्ष की अवस्था से पीछे होने लगता है और पचास वर्ष की अवस्था तक होता रहता है। पीछे शरीर पक जानेके कारण आर्तव क्षय हो जाता है ; तब "रजोदर्शन" होना बन्द होजाता है।

सुश्रुत में लिखा है,—"यदि स्त्री का आर्तव—खून—खरगोश के खून के समान हो या लाखके रङ्ग के समान हो या आर्तव—खून—में रँगा हुआ कपड़ा सुखा कर, धोने से सफ़ेद हो जाय या खून का भीगा हुआ कपड़ा रङ्गत बदले लेकिन सुर्ख़ ही रहे तो जानना चाहिये कि यह आर्तव शुद्ध है यानी गर्भ रहने लायक़ है।" अगर इन लक्षणों के विपरीत हो तो अशुद्ध आर्तव समझना चाहिये और उसकी शुद्धि का उपाय करना चाहिये ; क्योंकि दूषित आर्तव से सन्तान नहीं हो सकती। स्त्रियों को अपने "आर्तव" पर सदा ध्यान रखना चाहिये ; क्योंकि स्त्रियों की तन्दुरुस्ती और सन्तान का पैदा होना—दोनों बातें उन के आर्तव पर मुनहसिर हैं।

शुद्ध आर्तव की परीक्षा करने की विधि।

स्त्री जिस दिन से ऋतुमती हो, यानी जिस दिन से उसका रजोदर्शन हो, उस दिन से तीसरे दिन तक पति-संग भूलकर भी न करे। रजोदर्शन होने के 'पहिले दिन' मैथुन करने से पुरुष की उम्र घटती है और उसे उपदंश या मूत्रकृच्छ्र रोग हो जाता है। दूसरे इस समय गर्भ नहीं रहता, अगर गर्भ रहभी जाता है, तो बालक जन्मते ही मर जाता है। 'दूसरे और तीसरे दिन' मैथुन करने से भी यही हानियाँ होती हैं। अगर इस समय

ऋतुमती को प्रथम तीन दिन पति-संग करना निषेध है।

में गर्भ रहा और बालक पैदा होते ही न भी मरा, तो पीछे जल्दी मर जायगा अथवा लूला लङ्गड़ा अधूरे अङ्गवाला पैदा होगा। इसवास्ते इन दिनों में स्त्री, पुरुष का संग छोड़, पुरुष का दर्शन भी न करे। इस बचाव के लिये ही ऋषि मुनियों ने स्त्री को रजोदर्शन के पहले दिन चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी और तीसरे दिन धोबिन कहा है।

ऋतुमती स्त्री, पहले तीन दिनों में, पति के दर्शन और संग न

ऋतुमती के दूसरे कृत्य।

करने के सिवाय, हिंसा न करे, कुशों की शैया या चटाई पर सोवे, पत्तल या मिट्टी के बरतन में जौ चावल आदि भोजन करे, रोवे नहीं, नाखून न काटे, तेल की मालिश न करावे, चन्दन आदि का लेपन न करे, आँखों में काजल या सुरमा न लगावे, बालों में कंघी न करे, स्नान न करे, दिन में न सोवे, इधर उधर न डोले, अत्यन्त ऊँचे शब्द न सुने, अत्यन्त हँसे नहीं, अत्यन्त बोले नहीं, मिहनत न करे, नाखूनों से ज़मीन न खोदे और हवा में न बैठे।

अगर स्त्री मूर्खता से, आलस्य से, लोभ से, या प्रारब्ध-वश होकर ऊपर लिखे हुए निषिद्ध कर्म करती है, यदि उस ऋतु कालमें गर्भ रह जाता है, तो गर्भ को नुकसान पहुँचता है। रजस्वला के रोने से गर्भ विकारयुक्त नेत्रोंवाला होता है, नाखून काटने से बुरे नाखूनवाला, और तेल लगाने से कोढ़ी होता है, चन्दनादि का लेप करने से दुःखित, अञ्जन लगाने से अन्धा, दिन में सोने से बहुत सोनेवाला, दौड़ने से चञ्चल, अत्यन्त ऊँचे शब्द सुनने से बहरा होता है; हँसने से बालक के तालु, दाँत, ओंठ और जीभ श्यामवर्ण होते हैं; बहुत बोलने से अति बोलनेवाला, मिहनत करने से पागल, ज़मीन खोदने और हवा में बैठने से भी पागल बालक पैदा होता है। बुद्धिमती स्त्रियों को इन बातों को दिलमें जमा लेना और इन से बचना चाहिये। जो पढ़ी लिखी न हों

उनके पुरुषों को मुनासिब है कि, यह अमूल्य विषय अपनी स्त्रियों को समझा दें। प्राचीन समय की स्त्रियाँ इन बातों को जानती थीं ; किन्तु आज कल की स्त्रियाँ दो चार बातों के सिवाय और कुछ नहीं जानतीं। इसी कारणसे आजकल अनेक घरों में ऐसी बेंड़ी बहरी कानी और ऐबदार सन्तान पैदा होती हैं।

स्त्री चौथे दिन स्नान करे, चन्दन वगैरः लगावे, सुन्दर धोती पहने, गहने धारण करे, और सब से पहले अपने पतिका दर्शन करे। क्योंकि ऋतुस्नान करके स्त्री, पहिले पहल, जिसको देखेगी उसी के रूप आकार के समान पुत्र होगा। यदि उस समय पति मौजूद न हो तो अपने पुत्र को देखे या देवता का दर्शन करे।

> चौथे दिन स्नानादिक करके ऋतुमती पहिले पति-दर्शन करे।

स्त्री, जिस दिन से रजस्वला हो उस दिन से, सोलह रात्रि तक "ऋतुमती" कहलाती है। इससमय को ऋतुकाल और पुष्प-काल भी कहते हैं। इन सोलह रातों में ही गर्भ रह सकता है। इन सोलह रातों के बीतने पर गर्भाशय का मुँह बन्द हो जाता है; अतः पीछे गर्भ नहीं रहता।* इन सोलह रातों में से पहिली, दूसरी और तीसरी रात में मैथुन करना मना है और गर्भाधान करने के लिये तेरहवीं, चौदहवीं पन्द्रहवीं और सोलहवीं रातें भी बुरी समझी गई हैं। अब गर्भाधान करने योग्य चौथी, पाँचवीं, छठी सातवीं, आठवीं, नवीं, दशवीं, ग्यारहवीं और बारहवीं रातें रहीं। इन में भी जिसको इच्छा पुत्र की हो वह चौथी, छठी, आठवीं,

> गर्भ रहनेका समय। सम—विषम रातें।

---

* रजस्वला न होने पर भी कभी २ गर्भ रह जाता है। बालक दूध पीता पीता छोड़ दे, या दूध पीता बालक मर जाय, या बालक तो गोद में हो, किन्तु बहुत दिन से पति-संग करने की ख्वाहिश हो—ऐसे ऐसे मौक़ों पर बिना रजस्वला हुए भी गर्भ रह जाता है। उसे इनाम का गर्भ कहते हैं।

दशवीं, और बारहवीं रात में मैथुन करें। इन पाँचों रात्रियों को **सम** रात्रियाँ कहते हैं। जिन को इच्छा **कन्या** पैदा करने की हो वह पाँचवीं, सातवीं, नवीं और ग्यारहवीं रात्रियों में मैथुन करें इन चारों को **विषम** रात्रियाँ कहते हैं। सुश्रुत में और भी लिखा है कि,—"शुक्र—वीर्य—की बाहुल्यता—अधिकता—से लड़का होता है और स्त्री के आर्तव—खून—की बाहुल्यता से कन्या पैदा होती है।" सम रातों में स्त्रीके रज अथवा आर्तव की प्रबलता नहीं होती और विषम रातों में स्त्रीके रज—आर्तव—की प्रबलता रहती है; इसी कारण **सम** रात्रियों में मैथुन करने से पुत्र पैदा होता है और विषम रात्रियों में कन्या।

गर्भ के चार हेतु।

जिस तरह **फ़सल, खेत, जल**—और **बीज**फल पैदा होनेके चार हेतु हैं उसी तरह गर्भ के भी यही चार हेतु हैं। इसमें ऋतुमती का ऋतुकाल अर्थात् पुष्पकाल ही ऋतु अर्थात् फ़सल है; शुद्ध गर्भाशय चेत या खेत है; माता के भोजन का यथोचित रस ही जल है और शुद्ध वीर्य ही बीज है। "फ़सल, खेत, जल और बीज" इन चारों के संयोग—मिलने—से खूबसूरत, गम्भीर दीर्घायु और माता-पिता को प्रेमी सन्तान पैदा होती है।

गर्भवती रजस्वला नहीं होती।

जब स्त्री को गर्भ रह जाता है तब उसके आर्तव—रक्त—बहने-वाले छिद्रों का रास्ता "गर्भ" से रुक जाता है।* इसी वजहसे गर्भवती स्त्रियाँ बालक न पैदा होने तक रजस्वला नहीं होतीं; लेकिन

---

* गर्भवती रजस्वला नहीं होतीं। क्योंकि उनका आर्तव—खून—नीचे नहीं आता। रुक जाने से ऊपर को गर्भाशय में आता है। वहाँ उससे कफ आदि मिल जाते हैं और वही जेर कहलाता है। उस आर्तव का कुछ बाकी पतला भाग और भी बहुत ऊपर चढ़ कर चूचियों में पहुँचता है; इसी से गर्भवती स्त्रियों की चूचियाँ खूब पुष्ट और ऊँची ऊँची हो जाती हैं और उनमें दूध हो आता है।

जब रजोधर्म का मार्ग वातादिक दोषों (वीयक्त वात कफ) से रुक जाता है तब भी स्त्री रजस्वला नहीं होती। आर्तव क्षय हो जाने से भी समय पर रजोदर्शन नहीं होता या कुछ दिन चढ़कर होता है या थोड़ा आर्तव गिरता है और योनि में पीड़ा होती है। यह रोग के लक्षण हैं। ऐसी हालत में किसी अच्छे वैद्य से इलाज कराना चाहिये।

अगर स्त्री की योनि से वीर्य और रुधिर—खून—न बहे, थकान मालुम हो, आँखों में पीड़ा हो, प्यास लगे, ग्लानि हो और योनि फड़के तो जान लेना चाहिये कि गर्भ रह गया। इसके पीछे यदि चूचियों के अगले भाग काले पड़ जायँ, रोएं खड़े हों, विशेष करके आँखें मिचें, पथ्य भोजन करने पर भी वमन—उल्टी—होजाय, उत्तम सुगन्धित चीज़ों से भी भयभीत हो, मुँह से लार गिरे और शरीर जकड़ जाय तो स्त्री को जान लेना चाहिये कि मैं गर्भवती हूँ।

गर्भवती के लक्षण।

अगर गर्भवती को दूसरे महीने में गर्भ पिण्ड के से आकार का मालुम हो, दाहिनी आँख कुछ बड़ी जान पड़े, पहिले दाहिनी छाती में दूध आवे, दाहिनी जाँघ भारी हो, मुख का रङ्ग श्रेष्ठ और प्रसन्न हो, जागते और सोते में पुरुष संज्ञक चीज़ों की इच्छा हो, सुपने में आम वगैरः फल और कमल आदि फूल मिलें तो जान लेना चाहिये कि पुत्र होगा। अगर इसके विपरीत—उल्टे—लक्षण जान पड़ें तो जानना चाहिये कि कन्या होगी। अगर दोनों कोखों में गर्भ ऊंचा सा मालुम हो और आगे से पेट बड़ा हो तो जानना चाहिये कि नपुंसक होगा।

गर्भ में पुत्र कन्या की परीक्षा।

जब से स्त्री गर्भवती हो, तब से बालक जनने के समय तक, बहुत मिहनत न करे, बोझ न उठावे, मैथुन न करे, उल्टी या दस्त कराने वाली तेज़ दवा न ले, दिन को सोवे नहीं और रात को जागे नहीं, शोक या फ़िक्र

गर्भवती के कर्म।

न करे, सवारी पर न बैठे, डरे नहीं, ज़ोर से न खाँसे, ऊँची नीची जगहों में न चढ़े न उतरे, शरीर को टेढ़ा मेढ़ा करके न बैठे, फ़स्द वग़ैरः लगवाकर ख़ून न निकलवावे, मल मूत्र डकार आदि वेगों को न रोके, तेल आदि की मालिश न करावे। * वात आदि दोषों से या चोट वग़ैरः लगने से स्त्री के जिस जिस भाग को पीड़ा पहुँचेगी; गर्भ के बालक के भी उसी२ भाग को पीड़ा पहुँचेगी। सुश्रुत में लिखा है कि,—"गर्भवती, ऋतुस्नान करने के दिन से ही खुश रहे, शृंगार करे, साफ़ कपड़े पहने, और देवता आदि में भक्ति रक्खे। मैले कुचैले लँगड़े लूले अन्धे बहरे काने मनुष्यों को न छुए; बदबूदार और दिल बिगाड़नेवाली चीज़ों से दूर रहे; चित्त को नाराज़ करनेवाली कहानियाँ और बातें न सुने; सूखी, सड़ी गली, बासी और रूसी चीज़ें न खावे; बाहर न फिरे; सूने मकान में न रहे, श्मशान और छत्रियों में न जावे; वृक्षों के नीचे न रहे, क्रोध और भयसे भी परहेज़ करे; बोझा न उठावे और चिल्ला कर न बोले; बहुत न सोवे; बहुत बैठी ही न रहे; बिना बिछौने धरती पर न बैठे; उछला कूदी न करे; मीठा पतला तथा हृदय को आनन्दकारी भोजन करे। गर्भ रहने के समय से बच्चा होने के समय तक इन नियमों का पालन करे तथा और भी गर्भ-खण्डन करनेवाले आहार विहार न करे।"

सूचना।

गर्भवती और प्रसूता स्त्रियों के सम्बन्ध में और भी अनेक बातें सुश्रुतादि ग्रन्थों में लिखी हैं—उन सब के लिखने से हमारा ग्रन्थ बहुत बढ़ जायगा।

---

* अधिक तेल न लगवावे। आठवें महीने मालिश तो तेल लगवाना उचित ही है।

इस लिये वे सब बातें हम एक दूसरे ग्रन्थ में लिखेंगे ।

सन्तानार्थ मैथुन सम्बन्धी लाभ दायक नियम ।

(१) **बाला** स्त्री ग्रीष्म और शरद् में हितकारी होती है, **तरुणी** शीतकाल में हितकारी होती है और **प्रौढ़ा** वर्षा तथा वसन्त में हितकारी होती है। जिनकी **बाला** हो वे ग्रीष्म और शरद् ऋतुमें मैथुन करें, जिनकी **तरुणी** हो वे शीतकाल में मैथुन करें और जिन के **प्रौढ़ा** हो वे वर्षा और वसन्त में मैथुन करें ॥

(२) हेमन्त ऋतुमें वाजीकरण औषधियाँ खावे और बलवान होकर इच्छानुसार मैथुन करे। शिशिर ऋतुमें भी इच्छानुसार मैथुन करे। वसन्त और शरद् ऋतुओं में तीन तीन दिनके उपरान्त मैथुन करे। वर्षा और ग्रीष्म ऋतुमें पन्द्रह पन्द्रह दिनमें मैथुन करे। सुश्रुत लिखते हैं :—"बुद्धिमान लोग, सदा, तीन तीन दिन में स्त्री-प्रसङ्ग करते हैं और गर्मीके मौसम में तो पन्द्रह पन्द्रह दिन में ही मैथुन करना उचित समझते हैं।"*

(३) सुश्रुत में लिखा है कि निरोग, चढ़ती जवानीवाले और वाजीकरण † पदार्थों के सेवन करनेवाले पुरुषों को सब मौसमों में नित्य नित्य भी मैथुन करना हानिकारक नहीं है। विलासी पुरुषों को वाजीकरण औषधियाँ बहुत ही हितकारी हैं।

---

* हेमन्त शिशिर आदि ऋतुओं में कौन २ मास होते हैं—अगर यह जानना हो तो इसी पोथीके ९७ सफ़ेका फुट नोट देखो।

† जिस पदार्थ को उचित रीति से सेवन करने से पुरुष अत्यन्त वेग और पराक्रमवाला होकर स्त्रियों को मैथुन से राजी करे उस पदार्थ को "वाजीकरण" कहते हैं।

(४) शीतकाल में रातके समय, गरमी में दिनके समय, वसन्तमें रात या दिन किसी समय, जब जी चाहे, मैथुन करे; किन्तु वर्षा में जब बादल गरजता हो और बिजली चमकती हो तब मैथुन करे। शरद् ऋतु में, जब दिल चाहे, सरोवर आदि के किनारे बने हुए स्थानों में मैथुन करे।

(५) पुत्र चाहने वालों को ऋतुकाल की चौथी छठी आदि सम रात्रियों में और कन्या चाहनेवालोंको पाँचवीं, सातवीं आदि विषम रात्रियों में स्त्री-प्रसङ्ग करना चाहिये *। यह भी याद रखना चाहिये कि तेरहवीं, चौदहवीं, पन्द्रहवीं और सोलहवीं अन्त की चार रात्रियों में गर्भाधान के लिये मैथुन करना मना है।

(६) स्त्री जब काम-बाण से मतवाली होजाय, तब ही मैथुन करना चाहिये। जब तक उसकी इच्छा न हो तब तक मैथुन करना फ़िज़ूल है। यदि स्त्री का काम न जागा हो तो चुम्बन मर्दन और आलिङ्गन आदि से काम जगाना उचित है। † बिना काम जगाये मैथुन करने से कुछ आनन्द नहीं आता और गर्भ भी नहीं रहता। मैथुन का आनन्द जब ही आता है जब कि स्त्री-पुरुष दोनों कामके मद से मतवाले हो जायँ। चित्त प्रसन्न रखने और जल्दबाज़ी न करने से यह काम ठीक होता है।

---

* कोई कोई आचार्य यह भी लिखते हैं कि यदि स्त्रीका आर्तव—रज—अधिक होगा तो कन्या होगी और अगर पुरुष का वीर्य अधिक होगा तो पुत्र पैदा होगा। अगर स्त्री-पुरुष के आर्त्तव और वीर्य बराबर होंगे तो नपुंसक पैदा होगा। सम और विषम रात्रियों का भी यही मतलब है कि सम रात्रियोंमें स्त्रीके आर्तव की प्रबलता नहीं रहती और विषम रात्रियोंमें रज—आर्तव—की प्रबलता रहती है, इसी कारण सम रात्रियोंमें गर्भाधान करने से पुत्र और विषम रात्रियोंमें कन्या होती है।

† जिस स्त्रीका मुख पुष्ट और प्रसन्न हो, पुरुष से प्यारी प्यारी बातें करे; कोख, आँखें और बाल ढीले से हो जायँ; हाथ, छातियाँ कमर, नाभि, जाँघ और चूतड़ आदि फड़कने लगें; पुरुष के साथ बहुत ही छेड़छाड़ करे उसे काम से मतवाली समझना चाहिये।

(७) जहाँ स्त्री-पुरुष मैथुन करें वह कमरा ऐसा हो जहाँ दूसरा न देख सके। जहाँ भय चिन्ता आदि न पैदा हो सकें ; जहाँ दिल बिगाड़नेवाली बातें न सुनाई दें।

कमरा खूब साफ़ सजा हुआ और हवादार हो, उसमें रूपवान स्त्री पुरुषों की सुन्दर सुन्दर तस्वीरें लगी हों, अच्छे अच्छे क़ालीन ग़लीचे आदि बिछे हों, एक ओर सुन्दर पलङ्ग पड़ा हो। पलङ्ग पर साफ़ दूध के समान चादर बिछी हो और उसके चारों पाये पलङ्ग-कसों से कसे हों। इधर उधर छोटे बड़े गोल और लम्बे ४।६ तकिये रक्खे हों। पास ही कहीं दूसरे स्थान में सुन्दर गायका दूध मन्दी मन्दी कोयलों की आग पर औटता हो। पानी की सुराही और लोटे गिलास आदि ज़रूरी चीज़ें एक चौकी पर रक्खी हों। गर्भाधान के लिये या ऐसे ही स्त्री प्रसङ्ग करने वालों को यह सामान बहुत ही लाभदायक और ज़रूरी हैं।

(८) सन्तानार्थ या ऐसे ही मैथुन करनेवाले पुरुषों को चाहिये कि जिस दिन स्त्री-प्रसङ्ग करना हो उस दिन खूब स्नान करके, शरीर में ऋतुके अनुकूल चन्दनादि का लेप करें। सुगन्धित तेल और अतर वग़ैरः काममें लावें और फूलमाला पहनें। उस दिन खट्टे-चरपरे और बहुत नमकीन पदार्थ न खायँ, किन्तु खीर हलुआ आदि तर और ताक़तवर पदार्थ खायँ। चित्त प्रसन्न करनेवाले और ऋतुके अनुकूल वस्त्र पहनें। मसालेदार पानकी बीड़ी चबावें और चित्तको सब झंझटों से हटाकर प्रसन्न रक्खें। स्त्रीको भी पुरुष के माफ़िक़ स्नान आदि करना और काजल बिन्दी आदि सोलह शृङ्गार करने उचित हैं।

(९) पुरुष को उचित है कि मैथुन करने बाद, अगर गरमी का मौसम हो तो, स्नान करके अन्यथा हाथ पैर धोकर, अध-औटा "दूध" मिश्री मिलाकर पीवे ; किन्तु जल न पीवे। पङ्खे की हवा सेवन करे और चैन से नींद लेकर सोजावे। मैथुन के पीछे दूध

मिश्री का पीना, पङ्खेकी हवा सेवन करना और सोजाना—ये तीनों बातें बहुत ही हितकारी हैं। प्रायः समस्त वैद्यक-ग्रन्थोंमें इन तीनों की प्रशंसा लिखी है।

(१०) मैथुन करने को रातकी सवेरे उठ कर, बदन में चन्दनादि तैल या और कोई अच्छा तैल मालिश कराकर स्नान करे। उस दिन दूध भात खीर आदि अच्छे अच्छे भोजन करे और दोपहर को थोड़ी देर आराम करे।

जो इन नियमों और पहिले लिखे हुए नियमों के अनुसार स्त्री-प्रसङ्ग करेंगे—उनका वीर्य कदापि क्षीण न होगा और उनके सुन्दर मनभावनी सन्तान पैदा होगी।

गर्भाधान विधि।

मैथुन में अभिलाषा होने से प्रीति-युक्त स्त्री पुरुष सुन्दर सेज तय्यार करावें। उस सेज पर पुरुष पहिले अपना दाहिना पैर रक्खे और स्त्री बायाँ पैर रक्खे। पीछे बैठ कर इस मंत्र का पाठ करें;—

"अहिरसि आयुरसि सर्वतः प्रतिष्ठासि धाता त्वाद्‌ धातु विधाता त्वाद्‌ धातु ब्रह्मवर्चसा भवेदिति।
ब्रह्मा बृहस्पतिर्विष्णुः सोमः सूर्यस्तथाश्विनौ।
भगोऽथ मित्रावरुणौ पुत्रं वीरं दधातु मे।" चरक श०

पीछे हाव भाव कटाक्ष आदि से स्त्री, पुरुष का काम चैतन्य करे और पुरुष आलिङ्गन * चुम्बनादि से स्त्री का काम चैतन्य करे †। पीछे स्त्री चित्त ‡ लेट कर पुरुष का वीर्य ग्रहण करे। ऐसा करने से वायु पित्त और कफ अपने अपने स्थान पर रहे आते हैं। जब गर्भाधान होचुके तब स्त्री उठ कर अपनी आँख मुँह आदि को शीतल जल से धो डाले।

* आलिङ्गन = चिपटाना, छातीसे लगाना। † देखो १६८ सफे के फुट नोट।

निद्रा।

सुश्रुतमें लिखा है कि,—"हृदयका आकार कमलके समान है। इसका मुँह नीचेकी ओर रहता है। यह हृदय ही विशेष करके चेतनाका स्थान है; लेकिन जब यह—हृदय—तमोगुणसे ढक जाता है तब प्राणियोंको नींद आती है। जब प्राणी जागते रहते हैं तब यह हृदयरूपी कमल खिला हुआ सा रहता है और जब सोते हैं तब कुछ बन्दसा हो जाता है। निद्रा—सर्वव्यापी, विष्णु की माया और पापमय है। वह स्वभावसे ही सब प्राणियोंको आती है।"

अब हमको यह विचार करना चाहिये कि सोनेसे क्या लाभ और न सोनेसे क्या हानि होगी? जिस तरह हमको हवा पानी और भोजनकी अवश्यकता है उसी भाँति हमको नींदकी भी ज़रूरत है। जिस तरह हम 'जल वायु और आहार बिना' ज़िन्दा नहीं रह सकते उसी तरह हम 'नींद' बिना भी नहीं जी सकते। पुराने ज़मानेकी बात है कि, पाश्चात्य देशोंमें जब किसीको बेदर्दीसे

---

* मर्दन, चुम्बन और आलिंगन आदिसे काम चैतन्य करना बहुत ज़रूरी है। बेवकूफोंकी तरह गमन करना और वीर्य नाश करना ठीक नहीं है। बिना परस्पर काम जगाये जो जल्दबाज़ी करते हैं उनको कुछ आनन्द भी नहीं आता और गर्भ भी नहीं रहता। ज़रूरी बातें हमने यहां लिख दी हैं। बुद्धिमान इतनेहीसे और बातें जान लें। यहां और अधिक खुलासा लिखनेसे अश्लीलताका दोष आता है और वह आज कलके क़ानूनके भी ख़िलाफ़ है इसवास्ते आगे और नहीं लिख सकते। जो चरक सुश्रुत आदिमें लिखा है वह हमने लिख दिया।

† स्त्री कुबड़ी हो कर अथवा करवट लेकर सहवास न करे। कुबड़ी हो कर सहवास करनेसे वायु योनिमें बाधा प्रगट करता है। दाहिनी करवट सहवास करनेसे कफ गिर कर गर्भाशयको ढक लेता है और बाईं करवट सोकर सहवास करनेसे पित्त, रुधिर और वीर्यको दूषित करता है।

मार डालना चाहते थे तब उसे सोने नहीं देते थे। जिसे न सोने देते थे वह तड़प तड़प कर प्राण दे देताथा। इससे साफ मालूम होता है कि बिना सुख की नींद सोये प्राणी ज़िन्दा नहीं रह सकता। इस बातकी परीक्षा करना तो बहुत ही आसान है जब आपको नींद आने लगे आप न सोइये। बारम्बार नींदके वेगको रोकिये। पीछे देख लीजिये कि आपको जंभाई और ऊँघ आती हैं या नहीं; माथा और आँखें भारी हो जाती हैं या नहीं। थोड़ा भी नींदका वेग रोकनेसे ही जंभाई आदि उपद्रव अवश्य होते हैं ; तो लगातार कितने ही दिन न सोनेसे भयङ्कर रोग होने और मर जानेमें क्या सन्देह है ?

जब हम सारे दिन काम-धन्धा करते और फिरते डोलते रहते हैं तब रातको थक जाते हैं। उस थकानके समय हमारा शरीर और हृदय दोनों आराम चाहते हैं। हम, दिन भर, जो कुछ काम धन्धा लिखना पढ़ना बोलना आदि करते हैं—उससे हमारे शरीरमें कुछ न कुछ कमी हो जाती है। जब हम सोते हैं तब वह कमी पूरी होती है। जिस तरह हम दिन भर जिस कुएँसे जल भरे जाते हैं शामको उसका जल घट कर नीचा हो जाता है और रातको जब हम उस कुएँका जल नहीं भरते तब सवेरे उसमें ढेर पानी जमा हो जाता है। इसी भाँति जब हम दिन भर मिहनत करके रातको सो जाते हैं और सवेरे उठते हैं तब हममें नया उत्साह और नवीन बल आजाता है ; इसवास्ते हमें ताक़तवर और तन्दुरुस्त होनेके लिये काफ़ी नींद की बहुत ही ज़रूरत है। भाव प्रकाशमें लिखा है:—

निद्रा तु सेविता काले धातुसाम्यमतन्द्रिताम्।
पुष्टिं वर्णं बलोत्साहं वह्निदीप्तिं करोतिहि॥

"रातको समय पर सोनेसे धातुओंकी समता होती है, सुस्ती

नाश होती है, पुष्टि प्राप्त होती है, उत्साह और बल बढ़ते हैं और जठराग्नि तेज़ होती है।" निद्रासे निस्सन्देह इतने लाभ होते हैं, किन्तु यही निद्रा, नियम विरुद्ध चलनेसे, बहुतसी हानियाँ भी करती है। इसवास्ते नीचे हम निद्रा सम्बन्धी लाभदायक नियम लिख देते हैं। बुद्धिमान और सुख चाहनेवालोंको उन पर अमल करना चाहिये।

निद्रा सम्बन्धी नियम।

(१) सोनेके लिये रात सबसे अच्छा समय है। दस बजेके क़रीब रातको सो जाना और पौफटे बिस्तर छोड़ देना—सबसे अच्छा नियम है।

(२) दिनमें सोना ईश्वरके नियम विरुद्ध है। दिनमें सोनेसे वात, पित्त, कफ और रक्त कुपित हो जाते हैं। उनके प्रकुपित होनेसे दिनमें सोनेवालोंको खाँसी, श्वास, जुकाम, सिरका भारी होना, शरीर टूटना, अरुचि, ज्वर और मन्दाग्नि—ये विकार हो जाते हैं। इसी भाँति रातमें जागनेसे वायु पित्तके रोग और अनेक उपद्रव हो जाते हैं। दिनमें सोने और रातको बहुत जागनेसे रोग हो जाते हैं; इसवास्ते बुद्धिमान न तो दिनमें सोवे न रातमें, नियत समयसे अधिक, जागे। इस नियम पर चलनेवाला सदा निरोग बलवान और पुरुषार्थी रहेगा। वह न तो बहुत मोटा होगा, न दुबला होगा और दीर्घजीवन लाभ करेगा। लेकिन जिनको दिनमें सोने और रातको जागनेकी आदत पड़ गई हो और उनको इस बेक़ायदे सोने और जागनेसे कुछ हानि न होती हो तो दिनमें सोने और रातमें जागनेसे कोई नुक़सान नहीं है। बल्कि जिनको दिनमें सोनेका अभ्यास है और वह दिनको न सोवें तो उनके वायु

आदि दोष कुपित होजाते हैं; इस कारण उनको दिनमें सोनेकी आयुर्वेदमें मनाही नहीं है।

(३) जिनको दिनमें सोनेका अभ्यास है वह तो दिनमें सोही सकते हैं; लेकिन जिन को दिनमें सोनेका अभ्यास नहीं है वह, ग्रीष्म ऋतु के सिवाय और ऋतुओं में, दिनमें नहीं सो सकते।

(४) ग्रीष्मके सिवाय दूसरी ऋतुओंमें भी कसरत करनेसे थके हुए, अधिक परिश्रम और स्त्री-प्रसङ्गसे थके हुए, रास्ता चलनेसे थके हुए, घोड़े हाथी आदिकी सवारी करनेसे थके हुए, श्रमयुक्त, अतिसार रोगी, शूलरोगी, श्वासरोगी, वमन करनेवाले, प्यासके रोगी, हिचकीके रोगी, वातसे पीड़ित, क्षीण, जिनका कफ क्षीण हो गया हो, शराब या दूसरा नशा करनेवाले, बूढ़े, अजीर्ण रोगी, रातमें जागनेवाले, उपवास करनेवाले अर्थात जिन्होंने लङ्घन किया हो—ऐसे मनुष्य इच्छा अनुसार दिनमें सो सके हैं।

(५) बालकों को जवानों की बनिस्बत अधिक नींद की जरूरत होती है। बहुत ही छोटे बच्चे को दिन का अधिक भाग सोने में खर्च करना चाहिये। बारह वर्ष की अवस्था के आस पास के लड़के लड़कियों को नौ घण्टे के करीब और पूरे आदमी को सात घण्टे के लगभग सोना चाहिये। इस पर भी यह बात है कि कुछ लोगों को अधिक नींद की आवश्यकता होती है और कुछ को कम की।*

(६) सोने को जाने से बहुत थोड़ी देर पहले पूर्ण आहार करना अनुचित है। ऐसा करने से घोर निद्रा आती है और स्वप्न दीखते हैं।

---

*सुश्रुतमें लिखा है:—जिनमें तमोगुणकी अधिकता होती है उन्हें दिन और रात दोनों समय नींद आती है। रजोगुणकी अधिकतावालोंको कभी दिनमें और कभी रातमें नींद आती है लेकिन सत्वगुणकी अधिकता जिनमें होती है उन्हें आधीरातके समय थोड़ीसी नींद आती है।

(७) रात में साफ़ हवा की विशेष आवश्यकता होती है। बन्द कमरों में सोना हानिकारक है। सोने के कमरे में बरतन भाँडे और खाने पीनेके सामान आदि रखने से वायु का आवागमन रुकता है। सोनेके कमरेमें कमसे कम दो खिड़कियाँ, आमने सामने, होनी चाहियें। एक खिड़कीसे काम नहीं चल सकता। सोने-वाले हवा को दूषित करते हैं। दूषित हवाके निकल जाने और ताज़ा एवं साफ़ हवा के अन्दर आनेको, आमने सामने, खिड़कियों का होना बहुत ज़रूरी है।

(८) सोते समय मुँहको कपड़ेसे लपेट कर सोना भी बहुत हानिकारक है। क्योंकि जो गन्दी हवा नाक मुख आदि से साँस द्वारा बाहर आती है वही फिर अन्दर जाती है ; किन्तु ताज़ी हवा नहीं जाती।

(९) गरमी के मौसम में लोग खुली हवा में सो सकते हैं, लेकिन जब ओस पड़ती हो तब, चौड़े में सोने से ज्वर आदि रोग होजाने का भय रहता है। ओस पड़ती हो तब ऊपर से शामि-याना वग़ैरः तान लेना उचित है।

(१०) जहाँ हवा के झकोरे लगते हों या जहाँ हवा शरीर को पार करके निकलती हो वहाँ न सोना चाहिये। इससे शरीर की गर्मी निकल जाती है और रोग हो जाते हैं। जब कि ज्वर या हैज़ा फैल रहा हो तब, बदन को गरम रखना विशेष आव-श्यक है।

(११) ज़मीन पर सोने से चारपाई या पलङ्ग पर सोना अच्छा है। जहाँतक होसके ज़मीन पर न सोना चाहिये, लेकिन जब कि ज़मीन सूखी हो और ज्वर न फैल रहा हो तब, ज़मीन पर सोना उतना हानिकारक नहीं है। सीली धरती पर सोने से बदन में दर्द अथवा दूसरे रोग होजाते हैं। ज्वर पैदा करनेवाली ख़राब हवा नीचे रहती है। ज़मीन से ज़रा ऊँची ही चारपाई

उसे शरीर में प्रवेश नहीं करने देती। इसवास्ते जहाँतक होसके खाट पर ही सोना ठीक है। ज़मीन पर सोनेवालों को साँप बिच्छू आदि का भी भय रहता है। यह जानवर रात को अपनी खुराक ढूँढ़ते फिरते हैं और अक्सर ज़मीन पर सोनेवालों को काट खाते हैं। अगर किसी शख़्स के पास चारपाई होही नहीं और ज़मीन सोती हो तो, उसे कुछ घास फूस या सूखी पत्तियाँ बिछाकर सोना चाहिये। भाव प्रकाश में लिखा है कि,—"खाट त्रिदोषनाशक है; पलङ्ग वात तथा कफ को शमन करता है। ज़मीन का सोना पुष्टिकारक और वीर्यवर्द्धक है; तख़्त या लकड़ी के पाटे पर सोना वातकारक है।" लेकिन दूसरे ग्रन्थकर्त्ता लिखते हैं कि,— "पृथ्वी पर कपड़ा बिछा कर सोने से वात की उत्पत्ति होती है; अत्यन्त रूखापन होता है और पित्त तथा खून का नाश होता है।" "भाव प्रकाश" ही में लिखा है:—

सुशय्याशयनं हृद्यं पुष्टिनिद्राधृतिप्रदम्।
श्रमानिलहरं वृष्यं विपरीतमतोऽन्यथा॥

"सुन्दर शय्या यानी अच्छे पलङ्ग पर सोने से मन प्रसन्न होता है; पुष्टि निद्रा और धीरज की प्राप्ति होती है; थकाई और बादी दूर होती है; तथा वीर्य पैदा होता है। इसके विपरीत खराब खाट पर सोने से उलटे गुण होते हैं। सोते हुए हाथ पाँव दब-वाने से माँस, खून और चमड़े में अत्यन्त आनन्द आता है प्रीति, और वीर्य की वृद्धि होती है; सुखसे नींद आती है; कफ बादी और थकाई नाश होती है।

(१२) हिकमत की किताबों में लिखा है,—"चित्त सोना भेजे (Brain) को हानिकारक है; इस तरह सोने से बुरे बुरे सुपने दिखाई देते हैं। अगर किसी को चित्त सोने की आदत हो तो वह इसे छोड़ दे। सिर को तकिये पर इस तरह रक्खे कि, मुँह

और दोनों आँखें दाहिनी बाईं तरफ़ झुकी रहें—इस तरह सोना सुखदायक है। इसे पट सोना कहते हैं। दाहिनी और बाईं करवट सोना हानिकारक नहीं है। निहार सोना नज़ला पैदा करता है। भूख की हालत में सोने से शरीर चीण होता है। धूप में सोना अच्छा नहीं है; लेकिन चाँदनी में सोना लाभदायक है। बहुत जागना गरमी और खुश्की की निशानी है।* सोने और जागनेमें सम-भाव रखना चाहिये; अर्थात् न बहुत जागना चाहिये और न बहुत सोना चाहिये।

उषः पान के गुण।

सूर्योदय से पहले, कुछ तारों की छाया में, आठ अँजली बासी पानी पीना बहुत लाभदायक है। जो नित्य सोता उठ कर इस भाँति जल पीता है वह वात, पित्त और कफ को जीतकर सौ बरस तक जीता है। भाव प्रकाश में लिखा है:—

अर्शः शोथग्रहण्यो ज्वरजठरजराकुष्ठमेदो विकारा मूत्राघातास्रपित्तश्रवणगलशिरःश्रोणि शूलाक्षि-रोगाः। ये चान्ये वातपित्तक्षतजकफकृता व्याधयः सन्ति जन्तोः, तांस्तानभ्यास योगादपहरति पयः पीतमन्ते निशायाः॥

---

* वायु और पित्तसे, मनके सन्तापसे, क्षयसे और चोट आदिके पीड़ासे नींदका नाश हो जाता है। अगर नींद न आती हो तो शरीर पर तेल मलकर उबटन लगाना, नहाना, सिर में तेल लगाना, और धीरे धीरे हाथ पाँव दबवाना, गेहूँ और पिट्ठी आदिके पदार्थ और दूध चीनी आदि चिकने और मीठे पदार्थ खाना लाभदायक है। रातको दाख, मिश्री और गन्ने की गण्डेरी सेवन करने, सुन्दर नर्म साफ बिछौने बिछे हों ऐसे पलङ्ग पर सोने और सुन्दर पालकी वगैर.की सवारीमें बैठने या लेटनेसे निद्रा-नाश रोगमें बहुत लाभ होता है।

"रातके अन्तमें, पानी पीनेका अभ्यास करनेसे—बवासीर, सूजन, संग्रहणी, ज्वर, जठर, कोढ़, मेदके विकार, मूत्राघात, रक्तपित्त नाकके रोग, गलेके रोग, शिरके रोग, कमरका दर्द, आँखोंके रोग, और इनके सिवाय वात, पित्त, क्षय और कफ से हुए दूसरे रोग भी नष्ट हो जाते है।"

रातका अन्धकार दूर होने पर जो मनुष्य प्रातः काल में नाकसे रोज़ रोज़ पानी पीता है उसकी बुद्धि खूब बढ़ती है। आँखोंकी ज्योति गरुड़के समान होजाती है। उसके शरीर पर झुर्रियाँ नहीं पड़ती और बाल सफ़ेद नहीं होते तथा सारे रोग नाश हो जाते हैं; लेकिन जिसने स्नेह पान किया हो अर्थात् घी या तेल पिया हो, जिसके घाव हों, जिसने जुल्लाब लिया हो, जिसका पेट अफर रहा हो, मन्दाग्नि हो गयी हो, हिचकी आती हों, कफ और बादीके रोग हो रहे हों—उनको नाकसे पानी न पीना चाहिये।

ऋतुओं का वर्णन।

भारतवर्ष षटऋतु सम्पन्न देश है। सँवत्सरात्मक काल विभागमें माघसे शुरू करके बारह महीने होते हैं और दो दो महीनों में एक एक ऋतु होती है। इस भाँति एक वर्षमें बारह महीने और छः ऋतु होती हैं। वे छः ऋतु ये हैं:—

माघ और फागुन = शिशिर ऋतु। | श्रावण और भाद्रपद = वर्षा ऋतु
चैत और वैशाख = वसन्त ऋतु। | आश्विन और कार्तिक = शरद ऋतु
जेठ और आषाढ़ = ग्रीष्म ऋतु। | अगहन और पौष = हेमन्त ऋतु

ऊपर जो ऋतु विभाग किया गया है वह धर्मशास्त्रके मतानुसार है। इस तरह बाँधी हुई ऋतुएं धर्मकार्य्य देवकार्य्यादि में मानी जाती है। वातादिक दोषोंके सञ्चय, कोप और शान्तिके लिये महर्षि सुश्रुतने ऋतु-विभाग दूसरे प्रकार किया है। वैसा ऋतु विभाग हुए बिना काम भी नहीं चल सकता। वह आगे देखिये—

वैद्यक-शास्त्रके मतसे

ऋतुविभाग।

फागुन और चैत = वसन्त ऋतु।	भाद्रपद और आश्विन = वर्षा ऋतु
वैशाख और जेठ = ग्रीष्म ऋतु।	कातिक और अगहन = शरद ,,
आषाढ़ और श्रावण = प्रावृट ऋतु	पौष और माघ = हेमन्त ऋतु।

सूचना—गङ्गाके दक्खन देशमें बरसात ज़ियादः होती है; इसी कारणसे ऋषियोंने **वर्षा** और **प्रावृट** दो ऋतुएँ अलग अलग कही हैं। गङ्गाके उत्तर देशमें सर्दी ज़ोरसे पड़ती है; इस लिये **हेमन्त** और **शिशिर** दो ऋतुएँ अलग अलग कही हैं। **हेमन्त** और **शिशिर** के गुण-दोष समान हैं। **प्रावृट** और **वर्षा**के लक्षण भी समान होते हैं।

सुश्रुतसे

ऋतुओंके लक्षण।

हेमन्तऋतु। इस ऋतुमें उत्तरकी शीतल हवा चलती है। दिशाएँ धूल और धूएँसे भरी हुईसी मालूम होती हैं। सूर्य, तुषार यानी कोहरेसे छिप जाता है। तालाब और बावड़ी आदि जलाशयों पर बर्फ़की पपड़ियाँसी जम जाती हैं। कौए, गैंड़े, भैंसे आदि जानवर प्रसन्न और मतवाले हो जाते हैं। लोध, जायफल आदिके वृक्ष खूब फूलते हैं।

शिशिरऋतु इस ऋतुमें सर्दी अधिक पड़ती है। हवा और मेघ-वृष्टिसे दिशाएँ छा जाती हैं। बाक़ी सब लक्षण हेमन्त ऋतुकेसे होते हैं।

इस ऋतुमें दिशाएँ निर्मल हो जाती हैं। ढाक, कमल और

वसन्तऋतु। आमके वृक्षोंसे वन उपवनोंकी शोभा बढ़ जाती है। कोकिलाका कल कल शब्द और भौंरोंकी मनोहर गुञ्जार सुनाई देती है। दक्खनकी हवा चलती है। दरख्तोंमें नवीन नवीन कोमल पत्ते निकल कर और भी शोभा बढ़ा देते हैं।

इस ऋतुमें सूर्यकी किरणोंकी तेजीसे धूप तेज पड़ती है।

ग्रीष्मऋतु। नैऋत कोणकी दुःखदायी हवा चलती है। धरती तपती है। दिशाएँ जलती हुईसी मालूम होती हैं। चकवा चकवी भ्रमते फिरते हैं। मृग प्यासके मारे घबरा जाते हैं। छोटे छोटे पौधे, घास और लताएँ सूख जाती हैं इत्यादि।

इस ऋतुमें पश्चिमी हवासे खींच कर लाये हुए बादलोंसे

प्रावृटऋतु। आकाश ढक जाता है। चपला चमकती है और थोड़ी वर्षा होती है। हरीहरी खेतियों और बीरबहुटियोंसे पृथ्वी बहुत अच्छी मालूम होती है। कदम्ब आदिके वृक्षों पर बहार होती है।

इस ऋतुमें नदियोंके जलका जोर रहता है। बहावकी तेजी

वर्षाऋतु। के मारे नदियोंके किनारे और आस पासके दरख्त उखड़ उखड़ कर बह जाते हैं। बावड़ी सरोवर आदि जलाशयों पर कमोदनी और नील-कमलोंकी बहार नज़र आती है। पृथ्वी पर हरियाली ही हरियाली छा जाती है। इस ऋतुमें बादल बहुत गरजते नहीं, किन्तु खूब बरसते हैं। बादलोंके मारे दिनको सूर्य और रातको तारे नज़र नहीं आते।

इस ऋतुमें, सूर्यकी किरणें कुछ तेज़ हो जाती हैं। आकाश

शरदऋतु। मेघोंसे साफ़ हो जाता है। कहीं कहीं सफ़ेद बादल नज़र आते हैं। सरोवर हंस और कमलों

से शोभायमान लगते हैं। कहीं कीचड़ और कहीं सूखी धरती होती है। लजवन्ती और दुपहरिया आदि अधिकतासे होती हैं।

सुश्रुतमें लिखा है कि,—"ये उत्तम ऋतुओंके लक्षण हैं। अगर इनसे अधिक, विपरीत या विषम लक्षण हों तो मनुष्योंके वातादि दोष कुपित हो जाते हैं। इसका खुलासा मतलब यह है कि, ऊपर ग्रीष्म ऋतुमें जैसी गर्मी पड़ना, हेमन्त ऋतुमें जैसी सर्दी पड़ना और वर्षामें जैसी वृष्टि होना लिखा है; उससे अधिक गर्मी सर्दी और वर्षा उन ऋतुओंमें हो; ग्रीष्मऋतुमें सर्दी पड़े और हेमन्तऋतुमें गर्मी पड़े या कभी कम और कभी अधिक सर्दी गर्मी आदि पड़ें, तो लोगोंके वात आदि दोष कुपित होकर अनेक रोग पैदा करते हैं।"

आजकल सुश्रुतके लेखानुसार ऋतुओंके लक्षण बहुत बार नहीं मिलते। सुश्रुतके ज़मानेमें आषाढ़में वर्षाका आरम्भ हो जाता था। आजकल बहुत बार आषाढ़में आकाश मेघाच्छन्न भी नहीं होता। किसी साल हेमन्तमें घोर सर्दी पड़ती है किसी साल बिलकुल कम। इसी तरह सब ऋतुओंमें कुछ न कुछ उलट फेर होता रहता है। यही कारण है कि, आजकल महामारी प्लेग आदि रोग धमगजरी मचाते और इस देशको चौपट करते हैं।

ऋतुओंके गुण-दोष।

हेमन्तऋतु—शीतल, चिकनी; विशेष करके प्रत्येक पदार्थको स्वादु करनेवाली और जठराग्निको बढ़ानेवाली है।

शिशिरऋतु—अत्यन्त शीतल, रूखी और वायुको बढ़ानेवाली है। अर्थात् वायुके रोग बढ़ाती है। इस ऋतुमें भी जठराग्नि तेज़ होती है।

वसन्तऋतु—चिकनी है, पदार्थोंमें मधुरता करती और कफको बढ़ाती है; अर्थात् कफको कुपित करती है।

ग्रीष्मऋतु—रूखी, पदार्थोंमें तीक्ष्णता करनेवाली, पित्त यानी गर्मी पैदा करनेवाली और कफ नाशक है।

वर्षाऋतु—शीतल, दाह करनेवाली, अग्नि मन्द करनेवाली और वायुको कुपित करनेवाली है।

शरदृऋतु—गरम, पित्त कुपित करनेवाली और मनुष्यों को मध्य-बल देनेवाली है।

वातादि दोषोंके सञ्चय आदिका
समय।

वायु—ग्रीष्मऋतुमें सञ्चय होता, प्राहट ऋतुमें कुपित होता और शरदृऋतुमें स्वयँ शान्त होजाता है।

पित्त—वर्षाऋतुमें सञ्चय होता, शरद ऋतुमें कुपित होता और वसन्तमें अपने आप शान्त हो जाता है।

कफ—हेमन्तमें सञ्चय होता, वसन्तमें कुपित होता और प्राहटमें अपने आप शान्त होजाता है।

दोषोंके सञ्चय होनेके लक्षण।

जब अपने अपने स्थानोंमें स्थित दोषोंकी वृद्धि होती है, तब उनसे कोठा भर जाता है, अङ्गोंमें पीलापन हो जाता है, अग्नि मन्द होजाती है, शरीर भारी होने लगता है, आलस्य घेरता है और जिन पदार्थोंसे दोष बढ़ते हैं उनमें अरुचि होजाती है। अर्थात् उन पदार्थोंसे दिल हट जाता है।

जब ये लक्षण नजर आवें, तब समझ लेना चाहिये कि, दोष सञ्चय हुआ। अगर उसी समय उसकी वृद्धि रोकनेका उपाय

किया जाय तो बहुत ही उत्तम हो। देर होनेसे दोष वृद्धि पाकर बहुत ही बलवान होजाता है।

कुपित दोषोंकी शान्तिके उपाय।

सुश्रुत उत्तरतन्त्रमें लिखा है:—

यस्मिन्यस्मिन्नृतौ ये ये दोषाःकुप्यन्ति देहिनाम्।
तेषु तेषु प्रदातव्या रसास्ते ते विजानता।

"जिन जिन ऋतुओं में जो जो दोष मनुष्यों के शरीर में कुपित होते हैं, उन उन ऋतुओं में उन्हीं उन्हीं दोषों की शान्ति करनेवाले **रस** जानकार वैद्य को मनुष्यों के लिये देने चाहियें।" जैसे, **वसन्त** में कफ कुपित होता है; इसलिये वसन्त ऋतु में कफ की शान्ति करनेवाले पदार्थ सेवन करे। **वर्षा** ऋतु में वायु कुपित होता है, इसलिये वर्षा में वायु-नाशक अर्थात् वायु की शान्ति करने वाले आहार विहार आदि करे। शरत्काल में पित्त कुपित होता है; इसवास्ते इस ऋतु में पित्त की शान्ति करनेवाले आहार विहार आदि सेवन करे।

हेमन्त ऋतु।

बरसात और गरमीके मौसम में दुर्बलता होती है; शरद् और वसन्त ऋतु में मध्यम बल होता है; किन्तु हेमन्त और शिशिर—शीतकाल—में पूर्णबल रहता है।

शीतकाल यानी जाड़े के मौसम में ताक़तवर आदमियों की अग्नि तेज़ रहती है। इसी कारण इस मौसम में मुश्किल से पचने योग्य और अधिक भोजन भी सरलता से पच जाता है। शीतकाल की बलवान अग्नि को यदि, किसी भाँति, यथोचित आहार रूपी

ईंधन नहीं मिलता ; तो यह शरीर के रस को सुखा डालती है। देह का रस सूख जाने से शरीर रूखा हो जाता है। शरीर का रस सूख जाने और शीत काल होने से शरीर का वायु कुपित होजाता है ; इसवास्ते इस मौसम में चिकने, मीठे, खट्टे और नमकीन रसों का सेवन करना लाभदायक है। सुश्रुत—उत्तरतन्त्र के ६४ वें अध्याय में लिखा है :—

हेमंतः शीतलो रूक्षो मंदसूर्यानिलाकुलः ।
ततस्तु शीतमासाद्य वायुस्तत्र प्रकुप्यति ॥
कोष्ठस्थः शीतसंस्पर्शादन्तः पिंडीकृतोऽनिलः ।
रसमुच्छोषयत्याशु तस्मात्स्निग्धं तदा हितम् ॥

"हेमन्त ऋतु ठण्डी और रूखी होती है। इस ऋतुमें सूर्य की तेज़ी कम होती है और वायु—हवा—तेज़ी से चलती है। सर्दी होनेके कारण 'वायु' इस ऋतु में कुपित हो जाता है। यही वायु, सर्दी लगने से, कोठे के भीतर पिंडो सा होजाता है और झट रसको सोख लेता है ; इसलिये इस ऋतु में चिकना भोजन करना हितकारक है। दूसरे मामले में चाहे मत भेद हो, किन्तु इस ऋतुमें चिकनी चीजें खाने की सबही ऋषियोंने आज्ञादी है।

हितकारी आहार विहार आदि।

इस ऋतुमें गेहूँ, चाँवल, उड़द, माँस, पिट्ठी के पदार्थ, नया, अन्न, तेल, शीतल दूध, गुड़, मिश्री, चीनी आदि ; रबड़ी, मावा, मलाई आदि ; तिल, शाक और दही इत्यादि खाने में पथ्य अर्थात् हितकारी हैं। सरोवर और तालाब का जल पीना लाभदायक है।

निवाये पानी के भरे टब में बैठ कर या ऐसे ही गरम जल से स्नान करना, सवेरे ही भोजन करना, उबटन लगाना, तेल की मालिश कराना, सिर में तेल डालना, मिहनत करना, भारी और

गरम, रूई अथवा ऊन की पोशाक पहनना; तरह २ के रङ्ग बिरङ्गे कम्बल, मृगचर्म, और रेशमी कपड़ों को काम में लाना; अगर चन्दन आदि का लेपन करना, चारों ओर से ढकी हुई सवारी में चलना, कसरत कुश्ती करना, गरम घरमें रहना—ये सब कर्म लाभदायक और स्वास्थ्य तथा बल की रक्षा एवं करने वाले हैं। रात को अच्छे मकान या महल के अन्दरूनी कमरे में पलङ्ग पर रेशमी सूती और रूई के भरे हुए गद्दे बिछवाकर, सुन्दर रजाई ओढ़कर सोवे। स्त्रियों से चित्त प्रसन्न करे और वाजीकरण औषधियों से तृप्त हो कर, पुष्ट स्तनोंवाली, कामदेव के मन को मथने वाली, स्त्रियों को आलिंगन करके सोवे। पूर्वोक्त नियमों को ध्यान में रखकर शक्ति अनुसार मैथुन करे।

महाराज भर्तृहरि ने हेमन्त का वर्णन करते हुए लिखा है:—

हेमन्ते दधिदुग्धसर्पिरशनामांजिष्ठवासोभृतः
काश्मीरद्रवसान्द्रदिग्धवपुषः खिन्ना विचित्रै रतैः॥
पीनोरुः स्थल कामिनीजनकृताश्लेषा गृहाभ्यन्तरं
तांबूलीदलपूगपूरितमुखा धन्याः सुखं शेरते॥

"दही, दूध, घी और सुगन्ध सिखरन खाये हुए, केशर कस्तूरी का गाढ़ा२ लेप सारे शरीर में लगाये हुए, विचित्र प्रकार के रति से खेद को प्राप्त हुए, पुष्ट चूचियों और पुष्ट जाँघोंवाली स्त्रियों को चिपटाये हुए, पान सुपारी खाये हुए और मञ्जीठ के रङ्ग में रङ्गे वस्त्र पहने हुए—धन्य पुरुष ही हेमन्त ऋतुमें सुख से घर में सोते हैं।

अपथ्य खान पान आदि।

बर्फ, सत्तू, बहुत हवा, अत्यन्त थोड़ा खाना, रूखे, कड़वे, कसैले, शीतल, वातकारी अन्न जलपान आदि इनसे बचे। अर्थात् इन से दूर रहे।

शिशिर ऋतु।

हेमन्त और शिशिर ऋतु के गुण-दोषों में बराबर होने पर भी शिशिर ऋतु में कुछ थोड़ीसी विशेषता है। विशेषता यही है कि, इस ऋतु में मेघ, वायु और वृष्टि होनेसे सर्दी अधिक पड़ती है। इस ऋतुमें सब वर्ताव "हेमन्त ऋतु" के अनुसार करे। विशेष करके गरम मकान और ऐसे स्थान में रहे जहाँ तेज़ और शीतल हवा के झकोरे न लगें। कड़वे, कसैले, चरपरे, बादी करनेवाले, शीतल और हलके अन्न पान आदि परित्याग करे।

वसन्त ऋतु।

हेमन्त ऋतु—शीतकाल—में सर्दी के सबब से कफ सञ्चित होता है। फिर वही सञ्चित कफ, वसन्त ऋतु में, सूरज की गर्मी से कुपित होकर, पाचक अग्नि को दूषित करता और अनेक रोग पैदा करता है। इस कारण इस ऋतु में वमन विरेचन आदि द्वारा कफ को निकाल देना चाहिये। इस ऋतु में चरपरे, रूखे, कड़वे, कसैले, हलके और निवाये पदार्थ सेवन करना हित है। मीठी, खट्टी, चिकनी, भारी—मुशकिल से पचनेवाली—चीज़ों से परहेज़ रखना उचित है।

हितकारी आहार विहार आदि।

इस ऋतु में गेहूँ, चाँवल, मूँग, जौ, परवल, बैंगन, शहत, अजवायन, ज़ीरा, अदरख, मूली, पेठा, हींग, मेथी, पकाखीरा बथुआ, कचनार की कली, चौलाई, ज़िमीकन्द, करेला, तोरई, प्राम आदि खाना; यदि आदत हो तो भँग पीना; कुआँ, बावड़ी या पर्वत के झरने का जल पीना पथ्य अर्थात्

हितकारी है। यथाविधि त्रिकुटा (सोंठ-मिर्च-पीपर), पीपला-मूल, असगन्ध, त्रिफला (हरड़-बहेड़ा-आमला), हल्दी, अड़ूसा आदिका सेवन करना ; शहद के साथ हरड़ खाना और कफनाशक कुल्ले करना इत्यादि भी लाभदायक हैं।

कसरत करना, चतुर आदमियोंसे कुश्ती लड़ना, पत्थर के गोले आदि फेंकना, मार्ग चलना, शरीर में चन्दन-केशर और अगर का लेपन करना, उबटन मलना, किसी क़दर गर्मजल से स्नान करना, अञ्जन लगाना, धूमपान (हुक्का वगैरः पीना) करना, अपनी प्यारी स्त्री अथवा समान अवस्थावालोंके साथ मनोहर बात-चीत करना, अपनी प्रिया के साथ निर्जन बाग़ बगीचोंमें विहार करना ; रेशमी या रुई के कपड़े पहनना, गुदगुदे बिछौनों पर घरमें सोना और युवती स्त्रीसे, पूर्वोक्त नियमानुसार,मैथुन करना—ये सब ऋषियोंने इस ऋतु के लिये हितकारी कहे हैं।

मीठे, खट्टे, चिकने और भारी—गरिष्ठ—पदार्थ सेवन करना ; दही खाना, दिन में सोना—इन सब को इस ऋतु में त्याग देना लाभदायक है।

ग्रीष्म ऋतु।

ग्रीष्म ऋतु में गर्मी बहुत तेज़ पड़ती है। ज़मीन तपती है। गरम हवा चलती है। मनुष्य पशु पक्षी आदि प्राणी गर्मी के मारे घबरा जाते हैं। इस ऋतु में शीतल चीज़ें खाना पीना और शीतल ही स्थानों में रहना सुखदायक है।

हितकारी आहार विहार आदि।

इस मौसम में खीर, खाँड़, सत्तू, खरबूज़े, साफ़ सफ़ेद चाँवलों का भात, जाँगल पशुओं का माँस-रस, पुराने जौ, गेहूँ, सिखरन, नीबूका पन्ना, औटाकर शीतल किया हुआ और मिश्री मिला हुआ गायका दूध, गाय या भैंस का मक्खन, घी, मिश्री, अगर आदम सी

नी जल मिली हुई शराब, पके केले की गहर, दाख, आम, पाढर के फूलों से सुगन्धित किया हुआ शीतल जल, शर्करोदक* या शर-बत, कूएँ या झरने का जल इत्यादि चीज़ों को खाना पीना परम हितकारी है।

चन्दन, कपूर और सुगन्धवाला को शरीर में लेपन करना, कमल, कमोदिनी, चमेली आदि की माला पहनना, गुलाब खस आदि के बढ़िया अतर सूँघना; दोपहर के समय पटे हुए स्थानमें, नदी किनारे के मकान में अथवा बावड़ी तालाब आदिके किनारे या खस और चन्दन से छिड़के हुए मकान में, लाल नीले और सफ़ेद कमल के पत्तों की सेज पर फूल बिछवा कर थोड़ा सोना; साफ़ सफ़ेद और बारीक मलमल आदि के कपड़े पहनना, ताड़के पंखे की या जलमें भिगोये हुए पंखे की हवा लेना, स्त्रियों या परम मित्रों के साथ जल क्रीड़ा करना यानी तैरना, मधुर स्वर के गीत सुनना; मोर, भौंरे, सूआ, सारिका आदि के मनोहर शब्द सुनना और रातके समय ऊँचे मकान की चूने से पुती हुई साफ़ सफ़ेद छत पर, नवीन नवीन फूलों की सेज बिछवाकर, चाँदनी में सोना; सुहानी हुई मन्दी मन्दी शीतल पवन स्पर्श करना, मोतियों का हार पहनना, औटा हुआ दूध मिश्री मिलाकर पीना, पन्द्रह दिनमें एक बार स्त्री-प्रसङ्ग करना— ये सब आहार विहार आदि मुनियोंने इस ऋतु में परम पथ्य लिखे हैं। महाराज भर्तृहरि ने अपने शृङ्गार शतक में ग्रीष्म ऋतुका वर्णन करते हुए लिखा है :—

स्रजो हृद्यामोदा व्यजनपवनश्चन्द्रकिरणाः
परागः कासारो मलयजरजः सीधुविशदम् ॥
शुचिः सौधोत्सङ्गः प्रतनुवसनं पङ्कजदृशो
निदाघे तूर्णां तत्सुखमुपलभन्ते सुकृतिनः ॥

---

* देखो पहिले भाग के ११० सफ़े का फ़ुट-नोट।

"अच्छी सुगन्धित माला, पंखे की हवा, चन्द्रमा की चाँदनी, फूलों का पराग, तड़ाग, चन्दन, उज्ज्वल मदिरा, सफ़ेद मकान की ऊंची छत, सुन्दर महीन कपड़े, कमल-नयनी स्त्री इत्यादि पदार्थों से, 'ग्रीष्म ऋतुमें' पुण्यवान पुरुष आनन्द करते हैं।

ग्रीष्म ऋतुमें—कसरत, मिहनत, स्त्री-प्रसङ्ग, गरम स्थानों में रहना, धूपमें फिरना, चरपरे-खारी-खट्टे-कड़वे-नमकीन-गरम और रूखे पदार्थों का सेवन—इनको बुद्धिमान परित्याग करे; अर्थात् इनको हानिकारक समझ कर इनसे परहेज़ करे।

प्रावृट ऋतु।

इस ऋतुमें ग्रीष्म ऋतुका सञ्चित 'वायु' कुपित होता है; इस-वास्ते इस मौसम में वायुनाशक आहार विहार आदि सेवन करना लाभदायक है।

प्रावृट काल में मीठे-खट्टे और नमकीन रसों का सेवन करना, निवाया दूध पीना, माँस-रस, घी, तेल, जौ, साँठी चाँवल, गेहूँ, पुराने शाली चाँवल, और दही आदि पथ्य हैं। जहाँ तेज़ हवा न हो ऐसे स्थान में अच्छे पलङ्गपर कोमल बिस्तर बिछवा कर सोना उत्तम है। यहाँ हमने इस ऋतुके आहार विहार आदि संक्षेप से लिखे हैं; आगे वर्षा में जो आहार विहार आदि लिखे जाते हैं उनमें से जो अपनी प्रकृतिके अनुकूल हों वह भी इस ऋतु में सेवन करने लाभदायक हैं।

हितकारी आहार विहार आदि।

इस ऋतुमें वर्षा का जल, नदीका पानी, रूखी और गर्म चीज़ें, छाछ, धूप, मिहनत, दिन में सोना, मैथुन करना और नदी-जलमें स्नान करना—ये सब बातें त्यागने योग्य हैं।

वर्षा ऋतु ।

सुश्रुत संहिता में लिखा है कि,—"वर्षा ऋतु में मनुष्यों के शरीर गीले रहते हैं ; इससे "अग्नि" मन्द होजाती है और गीली हवा के कारण वात आदि दोष कुपित होजाते हैं ।" चरक में लिखा है कि,—"वर्षाकाल में वर्षा होती है, जल का अम्लपाक होता है और पृथ्वी से गील के अबखरे उठते हैं ; इस कारण से इस मौसम में प्राणियों का "अग्नि-बल" क्षीण होजाता है और वातादि तीनों दोष कुपित होजाते हैं। अतएव वर्षाकाल में त्रिदोषनाशक सर्व विधियों का अनुष्ठान करना चाहिये ।"

वर्षा में अग्नि मन्द होजाती है ; इससे इस ऋतु में लघुपाकी—हलकी—भोजन आदि करना लाभदायक है। इस मौसम में कभी सर्दी, कभी गर्मी और कभी वसन्तका सा समय वर्तने लगता है ; इसवास्ते इस ऋतुमें खाना पीना पोशाक आदि समयानुसार बदलना अच्छा है। इस ऋतु में भोगने से जो क्लेश होता है—उस की शान्ति के लिये कड़वे, कसैले और चरपरे रस सेवन करना, गर्मागर्म और अग्निदीपन करनेवाले भोजन करना और विशेष पतले रूखे और चिकने पदार्थों को न खाना बहुत ही अच्छा नियम है। इस ऋतु में हवा और बादलों के ज़ोर होने और पानी की शीतलता के कारण शाक पात फल वग़ैरः पित्त और जलन पैदा करते हैं ; इस लिये इस मौसममें अधिक परिश्रम न करना चाहिये ; लेकिन परिश्रम आदि को बिलकुल छोड़ देना भी उचित नहीं है ; क्योंकि परिश्रम कसरत आदि को बिलकुल ही छोड़ देनेसे अग्नि और भी मन्दी होजाती है। ज़मीन से एक प्रकार की भूवाष्प—ज़मीन की भाफ़—यानी गैस निकलती है। उस से शरीर की रक्षा करना चाहिये। ज़मीन पर सोने से

भूशाप्य मनुष्य के शरीर में प्रवेश करजाती है; इसलिये मकान की ऊपरी मञ्जिल के कमरों में चारपाई पर सोना चाहिये। वहाँ भी भारी कपड़ा ओढ़ कर सोवे। कमरे में सोने के स्थान से कुछ फ़ासिले पर आग की अङ्गीठी रक्खे और ऐसा इन्तिज़ाम भी करे कि तेज़ हवा के झकोरे न आने पावें।

हितकारी आहार विहार आदि।

दही, पुराने शाली चाँवलोंका भात, पुराने गेहूँ, उड़द, जङ्गली जीवों का माँस और गरम पदार्थ खावे। कुएँ और झरने का जल पीवे। पसीना ले, शरीरमें उबटन लगवावे और स्नान करे। फूल-माला धारण करे, हलके सूखे और सुगन्धित वस्त्र पहने। जिसमें बौछारें न आती हों ऐसे मकान में हस्तनी स्त्रीके साथ सोवे और इसी पुस्तक के दूसरे भाग में लिखे हुए नियमों के अनुसार मैथुन करे। इस मौसम में ऊपर लिखी हुई रीतिसे अनुसार चलनेवाले को कोई मौसमी बीमारी होने का खटका भी न होगा।

अपथ्य यानी हानिकारक आहार विहार आदि।

इस वर्षाकाल में पूरब की हवा सेवन करना, वर्षा में भीगना, धूप में फिरना, ओस में सोना, अधिक मिहनत करना, नदी तीर पर बसना, दिन में सोना, शीतल और रूखे पदार्थ खाना, नित्य मैथुन करना, जल भरे हुए और कीचड़ के स्थानों में रहना, नदी के जल में स्नान करना या नदी-जल पीना, अति कसरत करना, वर्षा में नङ्गे पैर फिरना इत्यादि आहार विहारों को त्याग देने में ही भलाई है।

शरद् ऋतु।

वर्षा काल का सञ्चित "पित्त" सहसा सूर्य की किरणों से संतप्त होकर शरद् ऋतु में कुपित हो जाता है। पित्त की शान्ति

करने के लिये, इस ऋतु में, मीठे हलके शीतल और कुछ कड़वे पित्तनाशक भोजन करने चाहियें । पित्त की शान्ति के लिये पित्त प्रकृतिवालों को जुलाब लेना और बलवान पुरुषों को फस्द खुलवाना भी, इस ऋतुमें, हितकारी है ।

हितकारी आहार विहार आदि ।

इस ऋतु में घी, साफ़ मिश्री, चीनी, ईख, गेहूँ, जौ, मूँग, शाली चाँवल, गरम दूध, परवल, आमले, नदीका पानी, सरोवरका जल, अंशूदक जल,* मीठा शीतल जल, कपूर चन्दन का लेप, चाँदनी रात, फूल, कपूर-चन्दन से सुगन्धित निर्मल हलके कपड़े, मित्र-मण्डली में मनोहर बात चीत करना, सरोवरों में क्रीड़ा करना या तालाबों में तैरना, मोतियों के हार पहनना, गीत सुनना, नाच देखना इत्यादि आहार विहार मनुष्यों को हितकारी हैं । मैथुन के विषय में जो कुछ हमने इस पुस्तक के दूसरे भाग में लिखा है—उसी रीति से चलना चाहिये ।

अपथ्य यानी नुकसान-मन्द आहार विहार आदि ।

इस ऋतु में दही खाना, कसरत करना, खट्टे चरपरे गर्म और खारी पदार्थ खाना, दिन में सोना, धूप खाना, रात को जागना, अधिक खाना और पहले लिखे हुए नियम विरुद्ध मैथुन, करना, जल के जानवरों और अनूप देश के जीवों का माँस खाना, तेलकी मालिश कराना, अत्यन्त भोजन करना, तेल खाना, पूरबकी हवा सेवन करना, शराब पीना, काँजी, कूएँ का जल, खार, उड़द तिल और रूखे पदार्थ—ये सब अपथ्य हैं ; इसवास्ते इनको व्यवहार में न लाना चाहिये ।

---

* इस शरद् ऋतु में शरद् के चन्द्रमा की किरणों से भीगे हुए और अगस्त्य (मुनि) के तारे के उदय होने से निर्विष हुए सब ही जल स्फटिक के समान हो जाते हैं ; इसलिये इस ऋतु में सब ही प्रकार के जल पीने के लिये ठीक हैं । जल के विषय में इसी पोथी के ८८—१११ सफ़ों में बहुत कुछ लिखा है—उसे देखिये ।

स्वास्थ्य रक्षा

उर्फ़

तन्दुरुस्ती का बीमा।

चौथा भाग।

नाना प्रकारकी चमत्कारी औषधियाँ।

रतिवर्द्धन मोदक।

इन नौ दवाओं को बाज़ार से बराबर बराबर लाकर, पीसकूट कर, कपड़-छन करलो। यह चूर्ण तैयार हुआ। इन दवाओं के चूर्णको तोलो, जितना यह चूर्ण हो उस से अठ-गुणा गायका दूध लाओ। उस दूध को कलईदार कड़ाही में औटाओ। औटते हुए दूध में दवाओं का चूर्ण (जो तैयार किया हुआ रक्खा है) डाल दो और कौंचेसे चलाते रहो। जब खोआ—माया—सा होजाय उतार लो।

१ गोखरू
२ तालमखाना
३ असगन्ध
४ सतावर
५ मूसली
६ कौंछके बीज
७ मुलेठी

८ गंगेरन
९ खिरंटी

पीछे कड़ाही में चूर्ण के बराबर घी डाल कर, उसी में दवाइयाँ मिले हुए मावे को भूनो। भुन जाने पर, जितना माल तोल में हो, उस से दूना बहुत ही उत्तम सफ़ेद बूरा लो। भुने हुए मावे और बूरे के बल माफ़िक़ लड्डू बना लो। सवेरे शाम, एक एक लड्डू खाकर गाय का दूध पीजाओ।

इसके खाने से बल पुष्टि और वीर्य की खूब वृद्धि होती है। यह योग बहुत ही उत्तम वाजीकरण है। इसके सेवन करने से स्त्री-प्रसङ्ग में खूब आनन्द आता है। मगर कमसे कम २।३ मास खाना चाहिये। लाल मिर्च खटाई आदि गर्म चीज़ें न खानी चाहियें। अधिक परहेज़ की ज़रूरत नहीं है।

आम्रपाक।
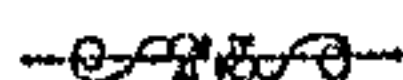
आम्र पाक बनाने की विधि।

नम्बर १ खाने में लिखी हुई, आम का रस वग़ैरः, सातों चीज़ों को मिलाकर मिट्टी के बरतन में मन्दी मन्दी आग से पकाओ। पकाते समय लकड़ी के कलछे से चलाते जाओ। जब चाशनी गाढ़ी हो जाय, नीचे उतारलो।

नीचे उतार कर उसी चाशनी में, नम्बर २ खाने में आगे लिखी हुई, धनिया आदि बारहों चीज़ों को मिला दो। जब यह सब शीतल हो जायँ, तब इन में ३२ तोले असल शहद मिला दो। बस यही सिद्ध "आम्र-पाक" है।

नम्बर १	
उत्तम पके हुए आमों का रस	१०२४ तोले
सफ़ेद उत्तम खाँड	२५६ „
गायका ताज़ा घी	६४ „
सोंठ	३२ „
काली मिर्च ...	१६ „
पीपल	८ „
साफ़ जल ...	२५६ „

नम्बर २

धनिया पिसा छना		४ तोले
जीरा ,,	,, ...	४ ,,
हरड़ ,,	,, ...	४ ,,
चीता ,,	,, ...	४ ,,
नागरमोथा	,, ...	४ ,,
दालचीनी	,, ...	४ ,,
कलौंजी ,,	,, ...	४ ,,
पीपलामूल	,, ...	४ ,,
नागकेशर	,, ...	४ ,,
इलायचीके दाने	...	४ ,,
लौंग ,,	,, ...	४ ,,
जायफल	,, ...	४ ,,

आम्रपाक सेवन करने की विधि।

इस पाक में से एक तोला रोज़ भोजन करने से पहिले खाओ अथवा मात्रा का नियम छोड़ कर अपनी जठराग्नि के बल माफ़िक अधिक या कम खाओ। ऊपर से दूध मिश्री पिओ।

आम्रपाक के गुण।

इस पाक को लगातार सेवन करने से मनुष्य मैथुन करने में घोड़े के समान हो जाता है। इसको सदा खानेवाला बलवान, पुष्ट और रोग रहित हो जाता है। यह पाक ग्रहणी, क्षय, श्वास, अरुचि, अम्लपित्त, महाश्वास, रक्तपित्त और पीलिये को नाश करता है। योगचिन्तामणि नामक वैद्यक ग्रन्थ में तो इसकी बेहद प्रशंसा लिखी है। उस में लिखा है—"इस आम्रपाक के सेवन करने से बूढ़ा भी जवान हो जाता है। सौवर्ष की अवस्था हो जाती है। बाँझ के गर्भ रह जाता है। बुढ़िया खाती है तो तरुणी हो जाती है। इसके खाने वाला पुरुष १००० स्त्रियों से गमन कर सकता है इत्यादि बहुत कुछ लिखा है।" जितना योगचिन्तामणि में लिखा है उतना तो हम नहीं आज़मा सके हैं; किन्तु यह कह सकते हैं, कि यह पाक मैथुन शक्ति बढ़ाने में बहुत अच्छा है। बल पुष्टि चाहनेवाले इसे ज़रूर बनावें खावें और बलवान हों।

स्तम्भन बटी।

पहिली आठ चीज़ोंको कूट पीस खूब महीन चूर्ण करलो। पीछे

१ अकरकरा ६ माशे	
२ सोंठ ... ६ मा०	
३ लौंग ... ६ मा०	
४ केसर ... ६ मा०	
५ पीपर ... ६ मा०	
६ जायफल ६ मा०	
७ जावित्री ६ मा०	
८ सफेदचन्दन ६ मा०	
९ अफीम... २ तोले	

उसमें अफ़ीम मिला कर आधी आधी रत्ती की गोलियाँ बनाले। नित्य एक गोली शहद के साथ खा कर ऊपरसे दूध मिश्री पीवे। अगर एक गोली सह जाय, तो पीछे दो या तीन गोली तक खा सकता है। लेकिन पहले एकही गोलीसे आरम्भ करे। इसके खानेसे वीर्य-स्तम्भन यानी रुकावट होती है। मैथुनमें अत्यन्त आनन्द आता है। स्त्रियें विशेष प्रसन्न होती हैं। कामी पुरुषों को यह गोलियाँ अवश्य खानी चाहियें।

मैथुन-शक्ति बढ़ानेवाले योग।

पीपलके दरख्तके फल, जड़, छाल और कोंपल— इन चारों को मिला कर आध सेर गायके दूधमें पकाओ। जब खूब पक जायँ, दूधको छान लो। उस दूधमें दो तोला चीनी और एक तोला शहद मिला कर पीओ। इसके ३।४ मास लगातार पीनेसे मनुष्य चिड़े की तरह मैथुन कर सकता है।

एक तोला **विदारीकन्द** को सिल पर खूब महीन पीस कर लुगदी बनालो। आधसेर गायके दूधमें एक तोला घी और दो

सूचना—चूर्ण, घृत, तैल, आसव और अवलेहमें प्रायः सफ़ेद चन्दन लिया जाता है। काढ़े और लेप आदिमें प्रायः लालचंदन लिया जाता है। प्रायः शब्द इसवास्ते लगाया है, कि कहीं कहीं इस नियमके विरुद्ध भी होता है। जैसे एलादि चूर्णमें लालचंदन लेते हैं और काढ़े लेपादिमें कहीं कहीं सफेद चँदन लेते हैं।

तोला चीनी मिला लो। लुगदीको मुँहमें रख इसी घी चीनी मिले हुए दूधसे उतार जाओ। इसको तीन चार महीने सेवन करनेसे बूढ़ेको भी जवानीका जोश आने लगता है।

दो तोले उड़दकी धुली हुई दाल को सिल पर महीन पीस लो। उसमें एक तोले घी और आधे तोले शहद मिला कर चाटो। ऊपरसे मिश्री मिला हुआ दूध पीओ। इसको लगातार चाटते रहनेसे पुरुष घोड़े के समान बली हो जाता है।

एक तोला साफ गेहूँ और एक तोला कौंच के बीजों का दलिया सा कर के, आध सेर गाय के दूध में पकाओ। जब खीर सी होजाय उतार कर शीतल करलो। पीछे इस में एक या दो तोला घी और अन्दाज़ को चीनी मिलाकर खाजाओ। ऊपर से उसी खीर का दूध पीजाओ। इस के तैयार करने से पहले कौंच के बीजों के छिलके उतार देना। सिर्फ गिरी पकाना। मैथुन शक्ति बढ़ाने में ये नुसख़ा बहुत ही उत्तम है।

कौंच के बीजों की गिरी ४ माशे, ताल मखाना ४ माशे और मिश्री ४ माशे—इन तीनों के चूर्ण को फाँक कर ऊपर से गाय का धारोष्ण*दूध पीवे, तो बल वीर्य कभी क्षीण न हो और बल की खूब वृद्धि हो। मगर २।४ महीने लगातार सेवन करने से आनन्द आता है।

उटंगन के बीज, कौंच के बीज और गोखरू—इन तीनों को बराबर लेकर चूर्ण बनाले। एक तोला चूर्ण खाकर ऊपर से

---

*नोट—देखो सफा ८१

मिश्री मिला दूध पीवे, तो बुढ़ापे में भी स्त्रियों का घमण्ड नाश कर सकता है।

कौंच के बीज एक तोला और उड़द की दाल एक तोला—इन दोनों को साथ पका कर रोज़ पीने से पुरुष मैथुन करने में खूब समर्थ हो सकता है।

पहिली बार की ब्याई गाय हो, जिसका बच्चा ६ मास से ऊपर का हो गया हो। अगर उस गाय को "उड़द के हरे पत्ते मय फलियों के" खिलावे और उसका दूध दुह कर पीवे, तो इतना बल बढ़ेगा कि लिख नहीं सकते। बल चाहनेवालों को यह योग परम वाजीकरण है।

लोलिम्बराजने लिखा है:—

> सहितेन घृतेन मधुना मधुकं
> परिसिञ्चितं पिबति योऽनुपयः।
> नवसुभ्रुवाँ सुखकरः सततं
> बहुवीर्य पूरपरि पूरितो भवेत् ॥

"जो पुरुष नवीन उम्र की कामिनियों को मैथुन से सुख देना चाहे वह मुलहठी के चूर्ण को घी और शहत मिलाकर चाटे। इसके सेवनसे बहुत ही वीर्य बढ़ता है।" मुलहठी ६ माशे, घी ६ माशे और सहत २ माशे—इन सब को मिलाकर चाटें और ऊपर से गायका दूध मिश्री मिला कर पीवें, तो लगातार कुछ दिन सेवन करने से बेशक बहुत कुछ वीर्य बढ़ेगा।

कुछ विदारी कन्द लाकर उसको कूट पीस कर चूर्ण कर

ले। कुछ ताज़ा विदारीकन्द लाकर उसे सिल पर खूब पीसे। पीछे उसे कपड़े में रख कर रस निकाले। रस इतना हो जिस में चूर्ण डुब जावे; लेकिन रस में पानी न मिलावे। विदारी कन्द के रस में उस विदारी कन्द के चूर्ण को डुबो दे और पीछे सुखा दे। फिर उसी तरह रस तैयार करके उस में सुखाये हुए विदारीकन्द के चूर्ण को पुनः डुबावे। इस माफ़िक़ कम से कम सात दिन करे। पीछे एक तोला विदारीकन्द के चूर्ण में (जो भावना देकर तैयार किया है) ६ माशा घी और ३ माशा सहत मिलाकर चाटे। इसके सेवन करने से पुरुष दश स्त्रियों से नहीं हार सकता। किन्तु ३।४ दिन खाने से ही ऐसा बल न होगा। लगातार ३।४ मास तो खावे;

महा अजीर्ण नाशक चूर्ण।

इन पन्द्रह औषधियों को बराबर बराबर दो दो तोले लेकर, कूट पीस कर, कपड़-छन कर लो। पीछे एक शीशी में भर कर, काग लगाकर रख दो। इसका मात्रा एक माशे से तीन माशे तक है। फाँक कर थोड़ा ताज़ा जल पीना चाहिये। दोनों भोजन के पीछे इसे नित्य खाने से भोजन अच्छी तरह पच जाता है। भूख खुल कर लगती है और दस्त साफ़ होने लगता है। अगर अजीर्ण या बदहज़मी होने पर इसे सेवन किया जाय तो पत्थर के समान अजीर्ण को भी भस्म कर देता है।

१ इमली	९ काला नोन
२ अम्लवेत	१० मनियारी "
३ चीता	११ वाय विड़ङ्ग
४ हरड़	१२ स्याह ज़ीरा
५ सोंठ	१३ सफ़ेद ज़ीरा
६ गोलमिर्च	१४ अजमोद ...
७ पीपर	१५ अजवायन
८ सैंधानोन	... ...

लवण भास्कर चूर्ण ।

इन अठारह औषधियोंको कूट पीस कर महीन छान लो।

१ समन्दर नोन	८ तोला
२ संचर नोन	५ ,,
३ बिड नोन	२ ,,
४ सैंधा नोन	२ ,,
५ धनिया	२ ,,
६ पीपर	२ ,,
७ पीपरामूल	२ ,,
८ काला जीरा	२ ,,
९ तेजपात	२ ,,
१० नागकेसर	२ ,,
११ तालीसपत्र	२ ,,
१२ अमलवेत	२ ,,
१३ कालीमिर्च	२ ,,
१४ सफ़ेद जीरा	२ ,,
१४ सोंठ	२ ,,
१६ अनारदाना (सूखा)	४ ,,
१७ छोटी इलायची के दाने	१/२ ,,
१८ दालचीनी	१/२ ,,

पीछे शीशीमें भर कर रख दो। शारङ्गधर में लिखा है,—"इस चूर्णके सेवन करनेसे प्लीहा यानी तिल्ली, बवासीर, संग्रहणी, दस्त क़ब्ज़, भगन्दर, पेट और समस्त शरीरकी सूजन, पेटका दर्द, श्वास और आमवात, मन्दाग्नि, हृदयरोग आदि बीमारीयाँ आराम होती हैं। इस चूर्णको संसारके उपकारके लिये भास्कर अर्थात् सूर्य भगवानने कहा है, इसवास्ते इसका नाम भास्कर चूर्ण रक्खा गया है।" वास्तवमें, यह चूर्ण मातदिल और बहुत ही गुणकारी है। हमने इसे तिल्ली, संग्रहणी, मन्दाग्नि, दस्तक़ब्ज़, सूजन और पेटके दर्दमें आज़माया है। इसको लगातार सेवन करनेसे अवश्य बहुत फ़ायदा होता है। जल्दी न करनी चाहिये। विश्वास रख कर, जब तक रोग नाश न हो जाय, इसे खाते रहना चाहिये। स्त्री पुरुष और बालक सबको लाभदायक है। स्त्रियों और बालकोंको कम मात्रा देनी चाहिये। पेटकी सूजन और संग्रहणीमें इसे गायकी छाछके साथ और क़ब्ज़ तथा श्वास आदि में गरम जलके साथ लेना चाहिये। हमने इसे अर्क सौंफके साथ सेवन करानेसे बहुत लाभ होते देखा है। मात्रा १ माशेसे ४ माशे तक है। लालमिर्च, खटाई, गुड़, तेल, अचार आदि गरम चीज़ोंसे परहेज़ रखना और शीघ्र पचनेवाली चीज़ोंका व्यवहार रखना ज़रूरी

है। दिनमें तीन दफ़ा सवेरे दोपहर और शामको खाना चाहिये। बुरीर डकारें आने और बदहज़मीमें इससे बहुत ही जल्दी फ़ायदा नज़र आता है। गृहस्थियोंको इसे बनाकर रखना चाहिये।

हैज़ेकी गोलियाँ।

इन पाँचों चीज़ोंको खरलमें डालकर खूब घोटो। पीछे दो दो रत्तीकी गोलियाँ बनालो। जब तक दस्त और कय न आराम हों, तबतक एक एक घण्टे पर एक एक गोली गरम जलके साथ रोगी को दो। इनसे ईश्वर कृपासे हैज़ा अवश्य आराम होगा। इन गोलियोंसे आँवके दस्त भी आराम हो जाते हैं। रोगीको प्यास लगे, तब थोड़ा थोड़ा जल दो। आराम हो जाने पर भूँख लगे, तो साबूदाना पका कर खिलाओ। यह गोलियाँ परीक्षित हैं। गृहस्थियोंको बनाकर पास रखनी चाहियें। सोलह सालसे नीची अवस्थाके बालकको आधी गोली देनी चाहिये। अगर पेशाब न हो, तो राईकी पट्टी कमर पर रक्खो या ज़रासा कपूर पेशाबकी इन्द्रीके छेदमें रक्खो या कलमी-शोरा और टेसूके फूल आधी छटाँक मिलाकर, जलमें पीस कर, पेड़ू पर, गाढ़ा गाढ़ा लेप करो। इनमें से किसी न किसी उपायसे पेशाब हो जायगा। अगर कय बन्द न हों या वमन का बहुत ज़ोर हो तो पानी में "राई" पीसकर एक चौकोर पतले काग़ज़ पर लगाकर पेट पर रक्खो। जब जलन हो उतार दो। इससे फ़ौरन कय यानी वमन बन्द हो जाती हैं।

१	अफ़ीम ६ माशे
२	जायफल ६ मा०
३	लौंग ६ मा०
४	केसर ६ मा०
५	कपूर ६ मा०

सूचना—सब विषयोंमें नवीन औषधियोंकी योजना करनी चाहिये। परन्तु वाय-बिडंग, पीपर, गुड़, धनिया, घी और शहद ये छः पदार्थ पुराने गुणकारी होते हैं। इसवास्ते ये पुराने लेने चाहियें। पका हुआ पुराना घी गुणहीन होता है। उसे न लेना। वायबिडंग आदि १ वर्ष बाद पुराने समझे जाते हैं।

गिलोय, कुड़ा, अड़ूसा, पेठा, सतावर; असगन्ध, पियाबाँसा, सौंफ़ और प्रसारनी—ये सब औषधियाँ सदा गीली लेनी चाहियें। परन्तु गीली समझकर दूनी न लेनी चाहियें।

घोर अजीर्णनाशक चूर्ण ।

इन सब औषधियों को कूट पीस कर छान लो। शीशी में भर कर रख दो। इसका मात्रा जवान आदमी को ४।५ माशे तक है। इसके सेवन करने से पेट की गुड़गुड़ाहट, आम-रोग, पेट का दर्द, दस्त साफ न होना और वायु-गोला आदि नाश होते हैं। इस से पत्थर समान अजीर्ण भी नाश हो जाता है।

१ सौंठ	...	५ भाग
२ पीपर	...	४ ,,
३ अजमोद		३ ,,
४ अजवायन		२ ,,
५ सेंधा नोन		१ ,,
६ हरड़	...	१५ ,,

सिर दर्द की दवाएँ ।

पिपर मिन्ट के फूल तीन चाँवल भर और इतना ही कपूर—दोनों मिला कर सिर पर मलने से फ़ौरन दर्द सिर आराम होता है। दालचीनी या बादाम का तेल सिर पर मलने से भी दर्द मिट जाता है। चन्दन और कपूर घिस कर सिर पर लगाने से सिरकी गर्मी और गरमी का सिर दर्द अवश्य आराम हो जाता है। ज़रा सा जायफल दूध में पीसकर सिर पर लगाने से दर्द सिर आराम हो जाता है।

गर्मी रोग की मलहम ।

१ कत्था	...	२ माशे
२ सेलखड़ी		२ माशे
३ नीलाथोथा		१ रत्ती
४ सड़ी सुपारी की	...	राख १ नग
५ पीली कौड़ी की	...	राख १ नग
६ घी	...	२ तोले

(१) घी को काँसी की थाली में १०८ बार पानी से धोलो।

(२) सुपारी और कौड़ी को आग पर जला लो।

(३) पीछे कत्था आदि पाँचों दवाएँ खूब महीन पीस कर धुले घी में फेंट लो।

इस मलहम को घाव या टाँचियों पर लगाने से बहुत जल्दी आराम होता है। जल्दी न करनी चाहिये; मलहम आज़माई हुई है।

जातीफलादि वटी।

जायफल, छुहारा और शुद्ध अफीम—इन तीनोंको तीन तीन माशे लेकर खरलमें डाल, ऊपरसे पान (पान जो रोज़ चबाते हैं) का रस दो। पीछे खूब खरल करो। जितना पानका रस सुखाओगे उतनी ही उत्तम गोलियाँ बनेंगी। खरल होजानेपर चने बराबर गोलियाँ बना लो। जिसको अतिसार यानी दस्त लगनेका रोग हो उसे एक एक गोली दिनमें २।३ बार छाछ यानी मट्ठे के साथ निगलाओ। अवश्य आराम होगा। खाने को हलकी चीजें दो। पानी बहुत कम पिलाओ। मिहनत और स्त्री-प्रसङ्ग से बचाओ।

सूचना—चूर्ण दो चार मास ही बाद हीन-वीर्य हो जाते हैं अर्थात् गुणमें कम हो जाते हैं। किन्तु गोलियाँ बहुत दिन रक्खी रहनेसे भी अपने गुणको नहीं छोड़तीं, लेकिन साल भरके बाद तो गुण-रहित होने लगती हैं। घृत तैल आदि सोलह महीने बाद गुणहीन होने लगते हैं। कोई कोई लिखते हैं, कि वर्षाके चार मास बीतने पर घृत तैल आदि हीन-वीर्य हो जाते हैं; लेकिन सोने चाँदी राँगे आदिकी भस्में और चन्द्रोदय आदि रस जितने पुराने हों उतनेही गुणकारक होते हैं।

सदाचार।

अमूल्य शिक्षावली।

(१) जो पापियों के समान आचरण करते हैं, जो पापभरी बातें कहते हैं, जो सदा पराये ऐबों की खोज में रहते हैं, जो लड़ाई झगड़े करना पसन्द करते हैं, जो लोभ के वशीभूत हैं, जो पराई सम्पत्ति [illegible] कर जला करते हैं, जो पराई निन्दा करने में लगे र[illegible], [illegible] पर-स्त्री-गमन करते हैं, जो निर्दयी हैं, जो स्वधर्म को त्याग देते हैं,—वह सब दुष्टात्मा होते हैं। बुद्धिमानों को ऐसे दुष्टात्माओं की सङ्गति कदापि न करनी चाहिये। बल्कि ऐसों से कभी बात ही न करनी चाहिये। क्योंकि इनकी सङ्गति का फल घोर दुःख है।

(२) जो बुद्धिमान और विद्वान हैं, जो सुशील और धीर हैं,

जो बूढ़ों की सेवा करते हैं, जो अवस्था और ज्ञान में वृद्ध हैं, जो दुनिया की ऊँच नीचों से जानकार हैं, जो सदा मीठे वचन बोलते हैं, जो सब जीवों पर दया-भाव रखते हैं, जिनका स्वभाव और चालचलन उत्तम है, जो दूसरों को अच्छी राह पर चलने की सलाह देते हैं,—वह सब सज्जन हैं। अपना सुख और भलाई चाहनेवाले प्राणियों को ऐसे ही लोगों की सङ्गति करनी चाहिये; क्योंकि ऐसों की सङ्गति का फल सदा भला है।

(३) देवता, गौ, ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध, सिद्ध, आचार्य और अग्नि का पूजन करो।

(४) प्रातःकाल और सायंकाल दोनों समय सन्ध्या करो।

(५) गुदा, लिङ्ग और नाक वग़ैरः मल निकलने के स्थानों और दोनों पैरों को खूब साफ़ रक्खो। एक पखवारे में तीनबार हजामत कराओ और नाखून कटाओ।

(६) जहाँ तक बन पड़े कभी मैले और फटे पुराने कपड़े मत पहनो।

(७) सदा प्रसन्न-चित्त रहो; क्योंकि प्रसन्न चित्त मनुष्य तन्दु-रुस्त और हृष्ट पुष्ट रहता है।

(८) यथाशक्ति सुगन्धित चीज़ों का व्यवहार किया करो।

(९) मस्तक, नाक, कान और पैरों में नित्य तेल दियाकरो।

(१०) जो कोई तुम्हारे घर आवे—चाहें वह दुश्मन ही क्यों न हो—उसका आदर सत्कार करो। आनेवाले से तुम पहले ही कहो—"आप भले पधारे। आइये, विराजिये।"

(११) हर किसीसे सदा मीठी वाणी बोलो। "मीठाबोलना" सब से बड़ा वशीकरण मन्त्र है।

(१२) भय-भीत यानी डरे हुए को सदा दम दिलासा दो।

(१३) कोई काम करते करते शरीर में थकाई न आवे, उसके पहिले ही उस काम को छोड़ दो।

(१४) सब प्राणियों को अपने भाई बन्धु के समान समझो।

(१५) दरिद्रियों पर सदा अनुग्रह करो।

(१६) हमेशा सच बोलो ; क्योंकि सचके बराबर दूसरा धर्म नहीं है और झूठ के बराबर कोई पाप नहीं है।

(१७) औरों के कठोर बचन बरदाश्त करो ; किन्तु आप कठोर बचन कभी न कहो।

(१८) किसी से राग द्वेष मत रक्खो।

(१९) कभी पराई चीज़ मत चुराओ।

(२०) पर सम्पत्ति या उन्नति देख कर कभी मत जलो ।

(२१) जो तुम्हारे साथ बुराई करे उसके साथ भलाई करो।

(२२) अगर किसी की गुप्त बात मालुम हो, तो अपना सिर उड़ जाने पर भी प्रगट न करो।

(२३) चिन्तासे सदा बचो। चिन्ता के समान सर्वनाशी और वस्तु नहीं है। चिन्ता से बल वीर्य और रूप आदि नाश होजाते हैं। चिन्ता भी राजयक्ष्मा रोग का एक कारण है। राज॰ यक्ष्मा ऐसा रोग है जिसे ब्रह्मा भी आराम नहीं कर सकता। और सब बीमारियोंका इलाज है ; किन्तु चिन्ता की बीमारीका इलाज नहीं है। चिता मरे हुए को जलाती है ; मगर चिन्ता जीते हुए को ही जलाजला कर ख़ाक कर देती है। जो सुखसे बहुत दिन तक जीना चाहो तो चिन्ता को त्यागो।

(२४) हर काम को पहिले खूब विचार कर पीछे करो, जिस से पीछे पछताना और दुःखित होना न पड़े।

(२५) बिना जूते पहने और लकड़ी लिये घर के बाहर न निकलो।

(२६) जब रास्ते में चलो तब चार हाथ आगे देखते चलो, ताकि गाड़ी बग्घी घोड़ा आदि तुम्हारे सिर पर न आजावें और सर्प आदि जीव जन्तुओं पर तुम्हारा पैर न पड़ जावे।

(२७) न तो राजद्रोही बनो और न राजद्रोहियों की सुहबत करो।

(२८) खराब सवारी पर कभी मत चढ़ो और न घुटनों के बल बैठो ; क्योंकि इनसे नसें मारी जाती हैं।

(२९) जो चारपाई छोटी और टेढ़ी मेढ़ी हो, जिस पर ओढ़ने और बिछाने के कपड़े न हों,—ऐसी चारपाई पर कभी मत सोओ।

(३०) पहाड़ या पर्वत की चोटी पर मत फिरो।

(३१) वृक्ष पर मत चढ़ो; क्योंकि उससे गिर पड़ने और मर जानेका भय है।

(३२) तेज़ीसे बहनेवाली नदीमें स्नान मत करो।

(३३) बेरके दरख्तकी छाया में मत बैठो।

(३४) जहाँ आग लग रही हो वहाँ मत जाओ।

(३५) ज़ोरसे अथवा खिलखिलाकर कभी मत हँसो।

(३६) सभामें अथवा उस जगह जहाँ बहुतसे मनुष्य बैठे हों, ज़ोरसे अधोवायु (गुदाकी वायु) न छोड़ो।

(३७) जब हँसना, छींकना और जमुहाई लेना हो मुँहके आगे रूमाल लगालो।

(३८) नाक न कुरेदा करो।

(३९) दाँतों और नाखूनोंको मत बजाया करो।

(४०) ज़मीनको पैरके नाखूनोंसे न कुरेदा करो।

(४१) आलस्यमें बैठे हुए मिट्टीके ढेले न फोड़ा करो।

(४२) शरीरको सिकोड़ कर या फैला कर कोई काम न किया करो।

(४३) सूर्य और अग्नि आदि तेज ज्योतिवालोंके सामने न देखा करो।

(४४) मुर्देको देखकर हुँकार न करो। वेदमें लिखा है,—मुर्दे

को देखकर जो "छि" करता है उसकी शरीरसे रोम निकल जाता है।

(४५) रातकी समय देवमन्दिर, श्मशान और वध्यभूमिमें मत रहो।

(४६) सूने मकान और सूने वनमें अकेले मत जाओ और न वहाँ अकेले रहो।

(४७) भले आदमियों से विरोध न करो और खोटों की खुशामद मत करो।

(४८) दुष्ट लोगों से मेल न बढ़ाओ।

(४९) किसीको कभी मत डराओ।

(५०) अति साहस, अति निद्रा, अत्यन्त जागना, बहुत स्नान करना, बहुत पानी पीना, बहुत भोजन करना और अतिमैथुन करना,—ये कभी मत करो।

(५१) ऊपरको घुटने करके बहुत देर तक मत बैठे रहो।

(५२) साँप, सिंह, चीते, और गाय भैंस आदिसे दूर रहो।

(५३) पूरबकी हवा, सूर्यकी धूप, बर्फ, कुहरा, और अत्यन्त तेज़ हवासे बचो।

(५४) कभी कलह मत करो।

(५५) आगकी अँगीठी खाट या पलङ्गके नीचे रख कर कभी मत सोओ। इस भाँति आग रखनेसे बहुत आदमी मर गये हैं।

(५६) जब तक परिश्रम और पसीना दूर न हो जायँ, तब तक स्नान मत करो और जल भी न पीओ।

(५७) नङ्गे हो कर स्नान मत करो।

(५८) जिस कपड़ेको पहन कर स्नान करो उससे माथा न पोंछो।

(५९) नहा कर, पहने हुए बासी कपड़े मत पहनो।

(६०) हीरा पन्ना आदि रत्न, घी, फूल, और हल्दीको

बिना छूए घरसे न जाओ। ये मङ्गल द्रव्य हैं। इनका देखना और छूना शुभ फल दाता है।

(६१) हाथों में हीरा पन्ना आदि धारण करके, स्नान करके, धुले हुए साफ़ कपड़े पहनकर, जप और होम करके, माता पिता गुरू और अतिथिको खिला कर, चन्दन आदिका लेपन करके और उत्तरको तरफ़ मुँह करके भोजन किया करो। उपरोक्त सब काम किये बिना भोजन मत् किया करो।

(६२) मूर्ख, अपवित्र, अभक्ति और भूखे नौकरों के सामने और जहाँ बहुतसे मनुष्य हों वहाँ भोजन मत किया करो। ख़राब बरतन, खोटे स्थान और कुसमयमें भी भोजन मत किया करो।

(६३) खानेसे पेश्तर आग पर भोजनका कुछ भाग डाले बिना भी भोजन न किया करो।

(६४) समय पर जो भोजन मिल जाय उसकी निन्दा भी मत करो। यह मत कहो, कि यह रूखा है, यह बासी है या इसमें नमक मिर्च और मीठा आदि नहीं हैं।

(६५) शत्रुको दी हुई कोई चीज़ मत खाया करो।

(६६) रातके समय दही मत खाया करो।

(६७) दिनमें केवल सत्तू खाकर न रह जाओ और रातमें सत्तू मत खाओ। भोजन करने पीछे सत्तू मत खाओ। दो बार सत्तू न खाओ और बिना जल मिलाये भी सत्तू न खाओ।

(६८) दाँतोंसे खूब चबाये बिना भोजन मत करो।

(६९) शरीरको टेढ़ा करके भोजन मत करो।

(७०) टेढ़ी देह करके मत सोओ और टेढ़ो देहसे छींक भी मत लो।

(७१) मल मूत्रके वेगको रोक कर कोई काम न करो। अर्थात् कोई काम करते करते पेशाब या पाखाने की हाजत हो जाय, तो काम छोड़ दो और पहले उनसे फ़ारिग़ होलो।

(७२) पवन, अग्नि, जल, चन्द्र, सूर्य और गुरुके सामने न तो थूको और न मल मूत्र त्याग करो।

(७३) स्त्रीकी अवज्ञा भी न करो और उसका अत्यन्त विश्वास भी मत करो। छिपा रखने योग्य बात हो, उसे स्त्रीसे कभी मत कहो। स्त्रीको घरकी मालकिन बनाओ ; किन्तु उसे कुल अख़्त्यार भी मत दे दो।

(७४) रजस्वला, रोगिणी, अपवित्रा, कुरूपा, अकामा, छिनाल, मूर्खा, फुहरिया, प्रभृति स्त्रियोंसे—जिनका खुलासा बयान इसी पुस्तकके दूसरे भागमें लिख चुके हैं—कदापि मैथुन न करो।

(७५) पराई स्त्रीसे भूल कर भी मैथुन न करो।

(७६) पशु-योनि, गुदा या मुख आदिमें मैथुन न करो। इन कुकर्मों की बुराइयाँ दूसरे भागमें खूब दिखला चुके हैं।

(७७) देवताकी छतरी, चौराहा, उपवन, श्मशान, वध्य-स्थान जल और देवालय आदिमें मैथुन करना अनुचित है। प्रातःकाल, सायंकाल और निषिद्ध तिथिमें भी मैथुन न करना चाहिये।

(७८) अपवित्र अवस्थामें मैथुन मत करो।

(७९) दवाई खानेके पीछे और जब तक अपनी इच्छा मैथुन करनेकी न हो यानी जब तक कामदेवका जोश न चढ़े कभी मैथुन मत करो।

(८०) कोकमें जो दुष्ट आसन लिखे हैं उनके अनुसार कभी मैथुन मत करो

(८१) दिशा पेशाबकी हाजत होते हुए मैथुन मत करो।

(८२) परिश्रम या दण्ड कसरत करके मैथुन मत करो।

(८३) उपवास करके यानी बिना-खाये-भूखे-मैथुन मत करो।

(८४) जहाँ दूसरा मनुष्य देखे उस स्थानमें स्त्री-सङ्ग न करो।

(८५) साधु, महात्मा, माता, पिता और गुरुकी निन्दा मत करो।

(८६) भूकम्प होनेके समय, बिजली चमकनेके समय, बड़े भारी उत्सवके समय, तारे टूटनेके समय, ग्रहण लगनेके समय, प्रातःकाल और संध्या समय न पढ़ो न पढ़ाओ।

(८७) बहुत जोरसे चिल्ला चिल्ला कर, बहुत धीरे धीरे, और बहुत जल्दी जल्दी मत पढ़ो।

(८८) समय बड़ा क़ीमती है। इसका एक मिनट भी व्यर्थ न गँवाओ।

(८९) रातके समय अनजानी जगहमें मत फिरो।

(९०) भोजन, पढ़ना, पढ़ाना, स्त्री-सङ्ग और सोना,—ये काम शामके वक्त कभी मत करो।

(९१) बालक, बूढ़े, लोभी, मूर्ख, रोगी, और नपुंसक—नामर्द—से मित्रता न करो।

(९२) शराब कभी मत पीओ। कहते हैं,—"शराबमुँह लगी ख़राब।" शराबपीनेसे उम्र घटती है और धन नाश होता है। भलेआदमी इसे कभी नहीं पीते।

(९३) जूआ मत खेलो। जूआ खेलना बहुतही बुरा काम है। जूआ खेल कर कोई धनवान न हुआ। जूआ खेलनेवाले राजा नल और महाराज युधिष्ठिरने घोर कष्ट भोगे। राज पाट गँवाकर बन बन ख़ाक छानते डोले।

(९४) वेश्या-गमन कभी मत करो। इसी पोथीके दूसरे भागमें वेश्याकी बुराइयाँ देखो।

(९५) अपने अन्तःकरण की या अपने मन की गुप्त बात न तो भाईसे कहो न मित्रसे कहो; बल्कि अपनी परम प्यारी स्त्रीसे भी न कहो। ऋषियोंकी लिखी हुई इस बातकी हम अक्षर अक्षर परीक्षा कर चुके हैं; ज़माना ऐसा खोटा आगया है, कि बाप भाई मित्र आदि कोई विश्वास-योग्य नहीं हैं। किसी से भी अपनी गुप्त बात कहनेमें लाभ नहीं है। बाप भाई

मित्र प्रभृति पहले तो गुप्त बातको सुनते हैं और विश्वासघात न करनेकी क़सम तक खाजाते हैं; लेकिन आपत्तिकालमें वही बाप भाई मित्र आदि अपनी गुप्त बात कहनेवालेकी स्वाधीनता पर पानी फेरते हैं और क़दम क़दम पर घोर कष्ट देते हैं। इसवास्ते बुद्धिमान भूल कर भी अपने मनकी बात मानव मात्रसे न कहें। हमारा काम तो सैकड़ों आदमियोंसे पड़ा। क़रीब क़रीब सब ही विश्वास-घातक मिले।

(९६) मैं ऐसा हूं, मैं ही सब कुछ करता हूं, मेरे ही बलसे यह काम चलता है इत्यादि अहङ्कारकी बातें कभी मनमें भी न लाओ। सब कुछ करनेवाला भगवान है। यह शरीर मिट्टी आदि महा भूतोंका पुतला है। मनुष्य-जीवन चपलाकी चमक और बादलकी छायाके समान है। क्षण-भङ्गुर देही पर फूलना और अभिमान करना परले सिरेकी मूर्खता है।

(९७) किसी का भी अपमान मत करो।

(९८) किसीके अच्छे काममें वृथा दोष न निकालो। अगर उसके दोषोंका बखान करो, तो उसके गुण वर्णन करना भी न भूलो। चूचियों पर लगी हुई जोंक जिस तरह दूधको त्याग कर मैला खून ही खून पीती है उस तरह किसी के ऐब ही ऐब न ढूंढो। जिसमें कुछ ऐब होता है उस में कुछ न कुछ गुण भी होता है। संसार में यही बात नज़र आती है। केवल ऐबों की तरफ़ ध्यान देना दुर्जनों का स्वभाव है। सज्जनों का स्वभाव इस के विपरीत होता है।

(९९) गाय को कभी मत मारो; बल्कि यथाशक्ति उस की रक्षा करो। गाय बड़ा उपयोगी और सीधा पशु है।

(१००) बूढ़ों को, गुरु को, राजा को और बहुत मनुष्यों के दल को निन्दा न करो।

(१०१) भयभीत न हो और कभी धीरज न छोड़ो।

(१०२) नौकर की तनख्वाह, समय पर, बिना हील हुज्जत के चुका दिया करो।

(१०३) अकेले सुख न भोगो, बल्कि जो तुम्हारे साथी हों उन्हें भी सुख भुगाओ।

(१०४) जो तुम्हें, तुम्हारे विपत्तिकाल में सहायता दे उसको तुम भी समय पड़े पर भरसक मदद दो।

(१०५) दुष्ट-स्वभाव, अविश्वासी और कञ्जूस मालिककी नौकरी मत करो।

(१०६) हर किसी का विश्वास फ़ौरन मत करलो। जिस-तिस में झूँठा भ्रम भी न करो। खूब देखो जाँचो, यदि विश्वास-योग्य हो तो विश्वास करो अन्यथा विश्वास मत करो। हमने देखा है, कि जल्दी ही चाहें जिसका विश्वास कर लेने वाले तबाह होगये हैं।

(१०७) जिस की खूब परीक्षा न की हो उसे सब काम का भार मत सौंप दो।

(१०८) आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा (चमड़ा),—ये पाँच ज्ञानेन्द्रिय हैं और हाथ, पाँव, गुदा, उपस्थ, तथा मुख—ये पाँच कर्म-इन्द्रिय हैं। ये दशों इन्द्रियाँ **मन** के आधीन हैं। मन चञ्चल है। इसे बहुत चञ्चल मत होने दो। मन को वश में करो। मन के वशमें करने से इन्द्रियाँ स्वयँ वशीभूत हो जायँगी। इन्द्रियों का वश करना बहुत ही ज़रूरी है। इन्द्रियों के वश में रखने से यहलोक और परलोक दोनों सुधरते हैं।

(१०९) बुद्धि और इन्द्रियों पर अधिक बोझ न डालो। अर्थात बहुत ही सोच विचार करना, बहुत सुनना आदि मत करो।

(११०) विचार ही विचारों में समय न खोओ, जो कुछ करने योग्य है उसे विचार कर कर डालो।

(१११) अगर गुस्सा आवे, तो किसी के नाश करने पर उतारू न हो जाओ। यदि खुशी हो जाओ तो अपना सर्वस्व मत दे डालो। मतलब यह है, कि क्रोध और हर्ष के अनुसार काम मत करो।

(११२) क्रोध कभी मत करो। क्रोध प्रबल वैरी है। क्रोध से बड़ी २ दुर्घटनायें हो जाती हैं। इसी कारण सज्जन पुरुष क्रोध नहीं करते।

(११३) शोक के वशीभूत मत हो। शोक करने से कुछ लाभ नहीं होता। पण्डित लोग मरे हुए का, नाश हुई वस्तु का और बीती बात का शोक नहीं करते। शोक और भय के हजारों मौके हैं; परन्तु बुद्धिमान शोक नहीं करते। शोक आदि मूर्खों पर ही अपना अधिकार जमाते हैं।

(११४) किसी काम के सिद्ध होजाने पर खुशी मत मनाओ और काम के बिगड़ जाने पर अत्यन्त रञ्ज भी न करो।

(११५) पानी में अपना प्रतिबिम्ब यानी परछाईं मत देखो।

(११६) नङ्गे हो कर जल में मत घुसो।

(११७) जिस नदी तालाब आदि जलाशय में मगर मच्छ घड़ियाल आदि हिंसक जीव रहते हों उस में घुस कर स्नान मत करो।

(११८) भोजन का समय होने पर अधिक मधुर रस वाला, घी से तर, हितकारी और प्रमाणानुसार भोजन करो।

(११९) मनुष्यों का अभिप्राय समझने की कोशिश करो। जो मनुष्य जिस तरह प्रसन्न हो उस को उसी तरह प्रसन्न करो; क्योंकि दूसरों को प्रसन्न रखनाही चतुराई है।

(१२०) कभी उद्यम-हीन मत हो। उद्यम करने से इच्छित वस्तु निश्चय ही मिल जाती है। लक्ष्मी उद्यमी के ही पास जाती है।

(१२१) वर्षा और धूप में बिना छाते के मत फिरो।

(१२२) जिस सवारी से खटका हो उस पर मत चढ़ो।

(१२३) मतवाले हाथी के पास कभी मत जाओ।

(१२४) शरीर पर कभी बुहारी की धूल न पड़ने दो।

(१२५) पानी में सूर्य का प्रतिबिम्ब—अक्स—मत देखो।

(१२६) आकाश में जो इन्द्र-धनुष तनता है उसे किसी को मत दिखाओ।

(१२७) ज़बरदस्त के साथ लड़ाई करने की इच्छा मत करो।

(१२८) मस्तक पर बोझ कभी मत रक्खो।

(१२९) हाथ इत्यादि से ठोककर शरीर मत बजाओ।

(१३०) हाथ से बालों को मत हिलाओ।

(१३१) शत्रु या वेश्या की कोई चीज़ मत खाओ।

(१३२) किसी समय भी किसी की ज़मानत मत दो।

(१३३) किसी के झूँठे गवाह मत बनो।

(१३४) किसी की धरोहर अपने पास मत रक्खो।

(१३५) जहाँ जूआ होता हो उस स्थान पर हो मत जाओ।

(१३६) स्त्रियों का विश्वास मत करो। उन को स्वतन्त्रता—आज़ादी—से मत रक्खो। स्त्रियों की रक्षा में खूब हो खबरदारी रक्खो। स्त्री को अलग पलङ्ग पर मत सुलाओ।

(१३७) जिस स्थान में बिल हो उस जगह मत जाओ।

(१३८) अगर घरमें साँप रहता हो, तो उसे किसी उपाय से निकालो। जब तक वह निकाल न दिया जाय बेखबर मत रहो; बल्कि उस घर को ही त्याग दो।

(१३९) बिना जाने हुए तालाब, कूएँ, गढ़े और नदी में मत उतरो। चढ़ी हुई नदी में न घुसो और न तैरने का उद्योग करो।

(१४०) फूटे और बहुत पुराने मकान में मत रहो।

(१४१) जिस गाँव में महामारी प्लेग और हैज़ा आदि फैले

हों उस गाँव में मत जाओ। अगर तुम्हारे रहने के गाँव में हो ये रोग हों, तो उस गाँव को बीमारी शान्त न हो तब तक को छोड़ दो।

(१४२) जहाँ लड़ाई होती हो या जहाँ हथियार चलते हों वहाँ मत जाओ। कहावत मशहूर है कि—"करघा छोड़ तमाशे जाय, नाहक चोट जुलाहा खाय।"

(१४३) छिपते हुए और उदय होते हुए सूर्य को मत देखो।

(१४४) बच्चे को दूध पिलाती हुई या किसी के खेत में चरती हुई गाय को किसी को मत बताओ।

(१४५) तारा टूटता देखो तो किसी को मत बताओ।

(१४६) आग में मुँह से फूँक मत दो।

(१४७) जल और धरती को हाथों या पैरों से न कूटो।

(१४८) पग-डण्डो, सड़क, मन्दिर, श्मशान, चौराहे, कूआँ, तालाब आदि के पास मलमूत्र न त्यागो।

(१४९) जहाँ दूसरा देखता हो वहाँ पाखाना पेशाब मत करो।

(१५०) माता पिता और गुरु आदि बड़ों के सामने तकिये का सहारा लेकर या पाँव पसार कर मत बैठो।

(१५१) वायु और सूर्य के सामने मत रहो।

(१५२) भोजन करते ही आगसे मत तापो।

(१५३) बहुत उकड़ू मत बैठा करो।

(१५४) गरदन को टेढ़ी मत रखो और शरीर को टेढ़ा करके कोई काम मत करो।

(१५५) खूब टकटकी बाँध कर मत देखो। खासकर, सूर्य और दूसरी चमकदार चीज़ों, बारीक चीज़ों, चलती हुई या चक्कर खाती हुई चीज़ों को निगाह बाँध कर मत देखो।

(१५६) अगर सुख चाहो, तो अधिक मत दौड़ो, अधिक उपवास मत करो, अधिक मत कूदो, अधिक मत हँसो, अधिक

मत पीलो, अधिक चुप्पी भी मत लगाओ, अधिक मैथुन मत करो, अधिक मिहनत और अधिक कसरत भी मत करो।

(१५७) नीचा सिर करके मत सोओ।

(१५८) फूटे बरतन में भोजन मत करो।

(१५९) अञ्जली से जल न पीओ।

(१६०) जिस भोजन में बाल या मक्खी आदि हों वह भोजन मत करो।

(१६१) मल मूत्र की शङ्का में भोजन मत करो।

(१६२) माला, छाता, जूते, सोने के गहने और कपड़े,—ये चीजें दूसरों की काममें लाई हुई हों तो तुम काम में मत लाओ। अर्थात् माला आदि दूसरों की धारण की हुई मत धारण करो।

(१६३) वर्षा में जहाँ तक हो सके कम जल पीओ। शरद् ऋतु में ज़रूरत के माफ़िक़ नियमानुसार जल पीओ। जाड़े में निवाया जल पीओ। वसन्त में दिल चाहे जैसा जल पीओ। गरमी में औटाया हुआ जल शीतल करके पीओ।

(१६४) नियमानुसार कसरत करो; क्योंकि उससे दोषों का नाश होता है और भोजन किया हुआ विरुद्ध अन्न भी पच जाता है।

(१६५) मैथुन करते समय मैथुन हीमें चित्त रक्खो। भोजन करते समय भोजन ही में और पाखाने पेशाबके समय उस तरफ़ ही ध्यान रक्खो।

(१६६) जिस काममें शारीरिक और मानसिक पीड़ा अधिक हो वह काम मत करो।

(१६७) नित्य कुछ समय अनेक प्रकारके ग्रन्थ और सम्वाद-पत्र आदि देखनेमें खर्च किया करो; क्योंकि रोज़ रोज़ पढ़ने और तरह तरहकी पुस्तकें देखनेसे मनुष्यको विद्या और बुद्धि बढ़ती है।

(१६८) नौकर पर झटपट विश्वास मत कर लो। कामसे

कम बरस छः महीने उसकी परीक्षा करो। अगर नौकर जवाब-दिही करनेवाला होतो उसे फौरन निकाल दो।

(१६९) धनको फ़िजूल मत खर्च करो ; क्योंकि आफ़तके समय जितना काम धनसे निकलता है उतना और किसीसे नहीं निकलता।

(१७०) कुमित्र पर तो विश्वास करनाही नहीं चाहिये ; लेकिन सुमित्रपर भी विश्वास न करो ; क्योंकि नाराज़ हो जाने पर सुमित्र भी पोशीदा बातोंको प्रकाश कर देते हैं।

(१७१) बुरे गाँवमें मत बसो।

(१७२) नीचकी नौकरी मत करो ; बल्कि जहाँ तक बन पड़े किसीकी नौकरीही न करो। नौकरीके बराबर दुःखदायी और स्वतन्त्रता हरनेवाली, गुलामीकी जञ्जीरोंमें जकड़नेवाली दूसरी चीज़ नहीं है। जिसमें नीच और दुष्टकी नौकरीकी तो बात ही मत पूछो। जब तुमसे कुछ और न हो सके, तब नौकरी करो।

(१७३) क्रोध करनेवाली स्त्री और जिनमें प्रीति न हो उन भाईबन्धुओंको त्याग देनेमें ही भलाई है।

(१७४) कैसा समय है ? मेरे कौन कौन मित्र हैं ? यह कौन देश है ? मेरा खर्च और आमदनी कितनी है ? मुझमें कितनी शक्ति है ?—ऐसे प्रश्न मनमें बारम्बार विचार कर किसी काममें लगो।

(१७५) अपना धन किसी दूसरेके पास मत रक्खो ; क्योंकि बहुत बार काम पड़ने पर अपनाही धन नहीं मिलता। धन वही काम आता है जो अपने पास हो।

(१७६) कभी किसीकी निन्दा भूलसे भी न करो ; क्योंकि निन्दाके समान पाप नहीं है। निन्दा करनेवाला चाण्डाल समझा जाता है।

(१७७) लोभीको धन देकर, घमण्डीको हाथ जोड़ कर,

मूर्खको उसकी इच्छानुसार चल कर और विद्वानको सचसे वशमें करो।

(१७८) दूसरेको आफ़तमें फँसा देख कर मत हँसो ; क्योंकि विपत्ति प्रायः सब पर आती है।

(१७९) सदा सँतोष रक्खो। सन्तोष दौलतसे उत्तम है। सच्चा सुख सन्तोषमें ही है।

(१८०) सोते हुए सर्प और सिंह आदि हिंसक जीवोंको मत जगाओ। बर्रे और मधु-मक्खियोंके छत्तों को भी न छेड़ो।

(१८१) जब जूता पहनो तब उसमें एक दम पैर न डालदो। जूतोंमें बहुधा साँप कनखजूरे आदि घुस बैठते हैं। इसवास्ते लकड़ीसे देख भाल कर जूते पहनो।

(१८२) सफ़रमें या घरमें किसी दूसरेकी बनाई भँग और दूसरेकी भरी हुई चिलम न पीओ। किसीके हाथ का पान मत खाओ, अगर खाना ही हो तो उसे देख भाल कर खाओ।

(१८३) देख भाल कर ज़मीन पर पाँव रक्खो, कपड़े से छान-कर जल पीओ, समझ बूझकर मुँहसे बात निकालो और खूब सोच विचार कर काम करो

(१८४) दुष्ट को उपदेश मत करो; दुष्ट किसी प्रकार के उपदेश से सज्जन नहीं हो सकता। उपदेश करने से दुष्ट उलटा दुश्मन होजाता हैं।

(१८५) बिना विचारे खर्च करने वाला, सहायक न होने पर भी लड़ाई झगड़े करने वाला, और सब जात की स्त्रियों से भोग के लिये व्याकुल होने वाला चटपट नाश हो जाता है ; इस वास्ते तुम इन तीनों बातों को ध्यान में रक्खो।

(१८६) बीती बात का शोक मत करो और आगे होने वाली बात की चिन्ता मत करो ; किन्तु वर्त्तमान समय के अनुसार चलो।

(१८७) स्त्री, भोजन और धन,—इन तीनों में, सदा सन्तोष रक्खो।

(१८८) आग, जल, स्त्री, मूर्ख, सांप और राजकुल,—ये छः शीघ्र प्राण नाश करते हैं; इस लिये इन्हें सदा सावधानी से सेवन करो।

(१८९) अनीति से धन मत कमाओ; अनीति से कमाया हुआ धन जल्दी नाश हो जाता है।

(१९०) नाई के घर बाल मत बनवाओ, पत्थर से लेकर चन्दन का लेप मत करो और अपना रूप जलमें मत देखो; क्योंकि ऐसा करने से दरिद्रता आती और स्वास्थ्य की हानि होती है।

(१९१) सुश्रुत में लिखा है—"पहिला भोजन पचजाने पर भोजन करना, मलमूत्र आदि वेगों को न रोकना, ब्रह्मचर्य रखना (बहुत स्त्री-प्रसङ्ग न करना), हिंसा न करना और चिन्ता न करना,—ये पाँचों बातें उम्र को बढ़ानेवाली हैं।

(१९२) जो मनुष्य बहुत अच्छे अच्छे काम करते हैं वह बहुत दिन तक जीते हैं।

(१९३) तेज़ हवा के सामने एक मिनट भी न बैठो न खड़े रहो; क्योंकि उस हवासे सर्दी, ज्वर और जुकाम होजायगा।

(१९४) खूब जी खोल कर हँसने से बदहज़मी कभी नहीं होती।

(१९५) कन्धों के पीछे की हड्डियों से फेँफड़े लगे हुए हैं। इस स्थान पर खून सहज में ठण्डा होजाता है; इस वास्ते शरीर के इस भाग को सर्दी और वायु से अवश्य बचाना चाहिये।

(१९६) अजीर्ण से सदा बचते रहो। क्योंकि इस रोग का मन पर ऐसा बुरा परिणाम होता है, कि उस से सब शरीर-व्यापार बिगड़ जाते हैं और सुख तथा जीवन का नाश होजाता है। सब रोगों में अजीर्ण साथ रहता है। विचारवानों को इससे सदा सावधान रहना चाहिये।

(१९७) माता पिता और जन्मभूमि की भलाई के लिये प्राण तक दे देने को तैयार रहो।

(१९८) तमाखू और शराब का परिणाम मस्तिष्क और शरीर के तन्तुव्यूह पर होता है। इन की आदत पड़ जाने से सिर में दर्द होता है, नींद नहीं आती और चित्त में भ्रम होजाता है। तामाखू और शराब के आदी कभी कभी ठोकर खाकर हो मर जाते हैं।

([illegible]) आँखों में हरड़, दाँतों में नोन, भूखा राखे चौथा कोन; ताज़ा खावे, बायाँ सोवे, उसका रोग घर घर रोवे।

(२००) अतिशय थकावट में इच्छानुसार भोजन करने से कितने हो मनुष्यों की जानें चली गयी हैं; इसवास्ते यह काम कभी मत करो।

वैद्यक सम्बन्धी कुछ कठिन शब्दों का वर्णन।

दीपन—जो पदार्थ कच्चे को न पकावे किन्तु अग्नि को प्रदीप्त करे उसे "दीपन" कहते हैं; जैसे—सौंफ।

पाचन—जो पदार्थ कच्चे को पकाता है; लेकिन अग्नि को दीपन नहीं करता वह "पाचन" कहाता है; जैसे—नागकेशर।

शमन—जो पदार्थ तीनों दोषों को शुद्ध नहीं करता, और समान दोषों को नहीं बढ़ाता; लेकिन कम अधिक हुए दोषों को सम करता है,—वह पदार्थ "शमन" कहलाता है।

रेचन—जो पदार्थ अध-पके अथवा कच्चे मल को पतला करके नीचे गिरादे वह "रेचन" कहलाता है; जैसे—निसोथ।

वमन—जो पदार्थ कच्चे पित्त और कफ तथा अन्न के समूह को मुख के मार्गसे बाहर निकाल दे, वह "वमन" कहलाता है; जैसे— मैनफल।

ग्राही—जो पदार्थ अग्नि को दीपन करता है, कच्चे को पकाता है और गीले यानी पतले को सुखाता है वह "ग्राही" कहलाता है; जैसे—सोंठ, जीरा, गजपीपल।

लेखन—जो पदार्थ देह की धातुओं को अथवा मलको सुखाकर दुर्बल करे वह "लेखन" है; जैसे—मधु।

वाजीकरण—जिसद्रव्य के प्रयोग करने से स्त्री के साथ रमण करने का उत्साह हो, वह द्रव्य "वाजीकरण" कहलाता है; जैसे—असगन्ध, मूसली, चीनी और शतावर।

शुक्रल—जिस द्रव्य से वीर्य की वृद्धि हो उसे "शुक्रल" कहते हैं; जैसे कौंछ के बीज आदि।

रसायन-जो पदार्थ जरा और व्याधि को नाश करनेवाला हो वह "रसायन" कहाता है; जैसे—हरड़ और शिलाजीत आदि।

अभिष्यन्दी—जो पदार्थ रसके बहानेवाली शिराओं को पिच्छिलता और भारीपन से रोक कर शरीर में भारीपन करता है उसे "अभिष्यन्दी" कहते हैं; जैसे—दही।

विदाही—जिस द्रव्य के खाने से खट्टी डकारें आवें, प्यास लगे, हृदय में दाह हो, वह पदार्थ "विदाही" या "दाहकारक" कहाता है; ऐसे द्रव्य का पाक बहुत देरसे होता है।

हलका—जो पदार्थ अत्यन्त पथ्य, कफनाशक और जल्दी पचने वाला हो वह "हलका" कहलाता है।

भारी—जो पदार्थ वात नाशक, पुष्टिकारक, कफकारक और देर से पचनेवाला हो वह "भारी" कहलाता है।

स्निग्ध—चिकने को कहते हैं। जैसे—घी तैल आदि। स्निग्ध पदार्थ वातनाशक, कफकारक, वीर्य वर्द्धक और मल देनेवाले होते हैं।

रूक्ष—सूखे पदार्थ को कहते हैं। रूक्ष पदार्थ अत्यन्त वायु-वर्द्धक और कफ को हरनेवाले होते हैं।

तीक्ष्ण—तीखे पदार्थ को कहते हैं। तीक्ष्ण पदार्थ अधिक पित्त के करनेवाला, छीलनेवाला तथा कफ और बादी को हरनेवाला होता है।

स्थिर—स्थिर गुण वायु और मल को रोकनेवाला होता है।

सर—सर गुण वायु और मल प्रवृत्त करनेवाला होता है।

पिच्छिल-रेशेवाला, बलकारक, सन्धानकारक, कफकारी और भारी है।

विशद—गीलेपन को मिटानेवाला और व्रणको भरनेवाला है।

शीत—सुख देनेवाला, रक्त की अति प्रवृत्ति को रोकनेवाला, मूर्च्छा, प्यास, दाह और पसीने को रोकनेवाला है।

उष्ण—शीत गुणके विपरीत (उलटा) और पाचन है।

ज्वर—इसको ताप और बुखार कहते हैं। इस रोगमें शरीर गर्म होजाता है इत्यादि।

अतिसार-इस रोग में बारम्बार दस्त आते हैं। कभी पतले दस्त, कभी खून के दस्त और कभी आँव सहित दस्त आते हैं। अतिसार छः प्रकारके होते हैं।

अर्श—बवासीर को कहते हैं; यह रोग गुदा में होता है; मस्से होजाते हैं; दर्द जलन वगैरः होती है; खून गिरता है; यह रोग गुदा की त्रिवली (तीन आँटों) के अन्दर होता है,, यह रोग छः प्रकार का होता

है। सर्वसाधारण में बादी और खूनी दो तरह को बवासीर मशहूर है।

अजीर्ण—बदहज़मी को कहते हैं। अजीर्ण भी छः प्रकार के होते हैं। इन में चार तरह के मुख्य होते हैं।

विशूचिका—हैज़े को कहते हैं। इस रोग में क़य और दस्त होते हैं; मूत्र बन्द होजाता है; नाखून आदि बिगड़ जाते हैं।

पाण्डु—पीलिये को कहते है; यह पाँच प्रकारका होता है; मल मूत्र नेत्र आदि पीले होजाते हैं; सूजन आजाती है।

रक्तपित्त—इस रोग में पित्त रुधिर को बिगाड़ता है तब रुधिर—रक्त—ऊपरके मार्ग नाक, कान, नेत्र, मुख इनके द्वारा निकलता है तथा नीचे के मार्ग लिङ्ग गुदा और योनि द्वारा निकलता है। जब खून अधिक कुपित होता है तब नीचे ऊपर दोनों रास्तों और सब रोम-छिद्रों से निकलता है।

राजयक्ष्मा—इसी को राजरोग, क्षय, शोष आदि कहते हैं। इस रोगमें कन्धों और पसवाड़ों में दर्द, पैरोंमें जलन और सर्व अङ्गों में ज्वर होता है; खाँसी, कफ गिरना और उसके साथ खून आना आदि लक्षण भी होते हैं; अव्वल तो यह रोग आराम ही नहीं होता, यदि किसी सद्वैद्य द्वारा आराम भी हुआ तो रोगी १००० दिनसे अधिक नहीं जीता; मल मूत्र अधोवायु के रोकने, अति मैथुन करने, अपने बलसे अधिक परिश्रम तथा कसरत करने, अधिक चिन्ता करने आदि कारणों से यह रोग होता है; लेकिन आज कल इसकी पैदायश अति मैथुन या अति चिन्तासे पायी जाती है।

उरःक्षत—बहुत भारी वस्तु उठाने, बलवान के साथ लड़ने, अत्यन्त मैथुन आदि से छाती फटी सी जान पड़ती है ; पसवाड़ों में पीड़ा हो ; बल घट जाय, ज्वर और अग्निमन्द आदि हो जायँ ; बारम्बार खाँसी आवे ; उसमें काला, गाँठदार, बदबूदार, पीला और खून मिला हुआ कफ गिरे इत्यादि लक्षण होते हैं।

हिचकी—पाँच प्रकार की होती हैं। हिचकी और श्वास जल्दी प्राणनाश करते हैं।

श्वास—यह रोग भी पाँचप्रकार का होता है। साधारण लोग इसे "दमा" कहते हैं।

तृष्णा—भय श्रम क्रोध उपवास आदि से पित्त और वायु कुपित होकर प्यास के स्थान में जाकर प्यास उत्पन्न करते हैं। इनमें से चारप्रकार की तृष्णा सुखसाध्य हैं और शेष कष्ट साध्य हैं।

मूर्च्छा—इस रोगमें सुख दुःख का ज्ञान नहीं रहता। मनुष्य बेहोश होजाता है। यह रोग छः प्रकार का होता है।

तन्द्रा—इस रोगमें इन्द्रियाँ अपने अपने विषय को ग्रहण नहीं करतीं। देह भारी होजाती है। जंभाई आदि आती हैं। निद्रामें इन्द्रियों और मन को मोह होता है लेकिन तन्द्रामें केवल इन्द्रियोंको मोह होता है। तन्द्रा में आधी आँखें खुली रहती हैं।

मदात्यय—बेक़ायदे शराब-'मद्य'-पीने से यह रोग होता है। इस रोगमें मोह, भ्रम, ज्वर, पसीना, निन्द्रानाश और श्वास आदि उपद्रव उठते हैं।

दाह—इसमें गला तालू होठ अत्यन्त सूखें। जीभ निकल आवे, अग्निके समान शरीर तपे और आँख वगैरः लाल होजायँ इत्यादि लक्षण होते हैं।

उन्माद— इस रोगमें बुद्धिमें भ्रम, मनका चञ्चल होना, डरना, अगड़ बगड़ बकना, विचार-शक्ति का नाश होजाना आदि लक्षण होते हैं।

अर्द्दित वायु— इस रोगमें मुखका आधा टेढ़ा होजाना, मस्तक हिलना आदि उपद्रव होते हैं।

शूल— पेट या बदन में दर्द होनेको कहते हैं।

मूत्रकृच्छ्र— इस रोग में पेशाब तकलीफ से होता है। इसे ही सोज़ाक कहते हैं।

पथरी— इस रोगमें पेड़ू और फोतोंके पास शूल होता है। पेशाब करते समय बड़ा दुःख होता है।

प्रमेह— प्रमेह २० प्रकार के होते हैं। दश कफके, छः पित्तके और चार वात के। इन प्रमेह रोगों में काले पीले गाढ़े और बहुत तरह की पेशाब होते हैं। इनमें शरीर का राजा "वीर्य" भी जाता है। बहुत खराब रोग है।